प्रातः स्मरणीय पूज्य गुरुदेव
१०५ क्षुल्लक श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी महाराज

जन्म—माघ वदी १३ स० १९५२
अध्यात्मरत्न, व्याख्यानभूषण ब्र० कस्तूरचन्द नायक
जवाहरगंज, जबलपुर।

(जन्म सं० १९५८)

अध्यापक श्री दशरथलाल जैन, सिवनी

(वक्ता, लेखक एवं सामाजिक कार्यकर्ता)

सरल
जैन रामायण
(तृतीय काण्ड)

रचयिता एवं प्रकाशक:—
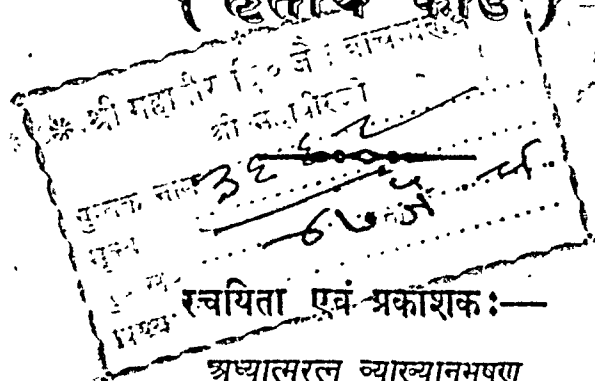
अध्यात्मरत्न व्याख्यानभूषण
ब्र० कस्तूरचन्द नायक
जवाहरगंज, जबलपुर ।

प्रथमवार १०००
वीर निर्वाण सं० २४७८
न्योछावर मूल्य ३।।) रु०

* आवश्यकीय सूचना *

"सरल जैन रामायण" का अन्तिम चौथाकांड जिसमें चित्ताकर्षक परिशिष्ट अनेक प्रकरण चित्रित किये गये हैं। सुविधाओं के प्राप्त होने पर शीघ्र ही प्रकाशित कियां जावेगा।

सर्व हितचिन्तक:—

ब्र० कस्तूरचन्द नायक

जवाहरगंज, जबलपुर।

मुद्रक:—एन० एल० जैन, चन्द्रकान्ता प्रिंटिंग वर्क्स, जबलपुर।

* दो-शब्द

अ० र० व्या० भू० ब्र० पं० कस्तूरचन्द जी नायक द्वारा रचित सरल जैन रामायण पर सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० श्री जगन्मोहनलाल जी शास्त्री की विवेचनात्मक ढंग से लिखी गई प्रस्तावना के उपरान्त यद्यपि पुनः कुछ लिखने की आवश्यकता न थी, तद्यपि मेरे ओर से इस पर कुछ भावना प्रदर्शित की जाय ऐसा ब्रह्मचारी जी के आग्रह विशेष को टालना मेरे लिये अशक्य हुआ, अतएव मैंने भी दो शब्द लिखना उचित समझा।

त्रेशठ शलाका पुरुषों के चरित्रों में लोकमर्यादा की रक्षा करने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी का मानस चरित्र. भारतीय संस्कृति में एक विशिष्ट स्थान रखता है। अतएव आचार्यप्रवर रविषेणाचार्य ने स्वरचित ग्रन्थ संस्कृत भाषा में उनकी, बड़ी गुण-गाथा प्रतिपादित की। जिसकी देश भाषा पंडित प्रवर दौलतराम जी ने सुललित शब्दों में प्रस्तुत की। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भूतपूर्व अध्यक्ष महापंडित राहुल सांकृत्यायन के कथनानुसार हिन्दी के आद्य जैन महाकवि "स्वयंभू ने प्राकृत अपभ्रंश भाषा में रामायण के साथ ही साथ कृष्णायण. इन दोनों महान ग्रन्थों का निर्माण किया जोकि छापा द्वारा आज तक प्रचलित न हुए। पश्चात संभवतः उसी शैली पर महाकवि तुलसीदास जी की देश भाषा में रचित चरित्र रामायण वर्तमान युगकी प्रसिद्ध और लोकप्रिय वस्तु बनी। जिससे महापुरुष के प्रति अनुराग पैदा करने के लिए हिन्दी काव्य रूप रचना बहुत उपयोगी मानी गई है। छंद, चौपाई, दोहा का प्रयोग प्राचीन काव्य धारा की एक विशेष आकर्षक शैली रही, अतः यही कारण है कि घर घर पढ़ी जाने वाली तुलसीकृत रामायण हर हिन्दू-गृहस्थ के हृदय का हार बन गई।

उसकी इसी उपयोगिता से प्रभावित हो प्रातःस्मरणीय पूज्य १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसाद वर्णी जी ने पूज्य ब्रह्मचारी जी को प्रेरित किया कि अपनी देशभाषा में सरस सरल एवं संक्षिप्त जैन रामायण की अत्यधिक आवश्यकत्ता है जिसकी पूर्ति करो, अतएव ब्रह्मचारी जी ने अथक परिश्रम करके पांच वर्ष में प्रस्तुत की। इसकी विशेषताएँ जो मुझे दृष्टिगत हुईं, वे ये हैं कि चरित्र वर्णन करते समय जैसे संत तुलसीदास जी ने प्रकृति से समय समय पर लौकिक शिक्षा ग्रहण करने की नीति अपनाई है यथा:—

वरसहिं जलद भूमि नियराये। यथा नवहिं वुध विद्या पाये।
वुंद अघात सहें गिरि कैसे। खलके वचन संत सह जैसे।

उसी प्रकार इस सरल जैन रामायण में भी जैन दर्शन के धार्मिक तत्त्वों का प्रसंग वश बड़ी सुन्दरता के साथ चित्रण किया गया है जैसे—

सम्यग्ज्ञान विशेपता, भूत भविष्यत संग।
वर्तमान मँह ज्ञान हो, तीनों काल अभंग॥
वस्तु स्वरूप विचारकें, राग द्वेष तज देत।
इष्टा नष्टहिं हेय लख, करै मोक्ष से हेत॥

अतएव विद्वद समाज को इस तरह तुलनात्मक अध्ययन करने के हेतु स्वहित हृदय ग्राह्य प्रोत्साहन करने की एक अपूर्व सामग्री प्रस्तुत हुई। इसलिये जन साधारण से मुझे, पूर्ण आशा है कि अवश्य इसको पठन, श्रवण के साथ ही साथ मनन करके इसका अनुपम मूल्य आंकेंगे।

निवेदक—

दशरथलाल जैन, हेडमास्टर
अंग्रेजी मिडिल विभाग, मिशन हाइ स्कूल,
सिवनी (म० प्र०)

अक्षयतृतीया

सम्मतियाँ

तारीख १४-२-५२
फागुन वदी ४,
आशीर्वाद नैनागिर सिद्धक्षेत्र

श्रीयुत् ब्रह्मचारी कस्तूरचन्द जी,

आप कृत सरल जैन रामायण प्रथम खण्ड एवं द्वितीयखण्ड की प्रतियां मिलीं, पढ़कर अति प्रमोद हुआ। आपके द्वारा रची गई रामायण की भाषा, सच में सरल, मार्मिक तथा रहस्यपूर्ण होने से सब जीवों को अत्यन्त रुचिकर एवं हितकारक है इसमें भक्तिरस से, शब्दों का चित्रण एवं भावों का प्रकाशन ओत प्रोत भरा हुआ है। आपने ५५ साल की उम्र में ऐसा रहस्यपूर्ण ग्रन्थ बनाकर जनता (जन साधारण) का बहुत ही उपकार किया, अतः आपको शतसः धन्यवाद हैं।

पूज्य १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसाद वर्णी जी ने इस महान कार्य के लिये, सुझाव पैदा कराया, इस महत उपकार को, जनता कभी न भूलेगी। साथ ही साथ में इच्छा करती है कि आप महान पुरुष, इसी तरह से सुझाव देते रहें।

द० ब्र० मुख्तारसिंह जैन
रुड़की
रिटायर्ड सब इंजीनियर
(जिला-सहारनपुर)

द० आदिसागर अचलपुरकर
(१०५ क्षुल्लक जी महाराज)
द० संभवसागर
(१०५ क्षुल्लक जी महाराज)

पत्र शुभचिन्तक ११ फरवरी १९५२ से उद्धृत

सरल जैन रामायण

ब्रह्मचारी कस्तूरचन्द जी नायक ने सरल जैन रामायण की रचना कर सचमुच जन-समाज का बड़ा हित किया है। सरलभाषा के द्वारा किस प्रकार ज्ञान की बातें जनता के मन में उतारना, यह नायक जी भली भांति जानते हैं। इस दृष्टि से सरल जैन रामायण के लेखक को पूरी सफलता मिली है। इस ग्रन्थ के प्रथम कांडीय प्रकाशन सि० रतनचन्द जी जैन ने किया है और निःशुल्क वितरित करने की व्यवस्था कर दी है। अतएव पुस्तक निश्चित रूप से प्रचार पा जायगी। अतः लेखक और प्रकाशक दोनों बधाई के पात्र हैं श्री रामचन्द्र जी के जीवन चरित्र वाला अंश दूसरे भाग में प्रकाशित करने की योजना जितने शीघ्र कार्यान्वित हो सके, उतना ही अच्छा है।

सत्यप्रिय बी० ए०

जैन साहित्य को प्रकाश में लाने के हेतु श्रीमान् ब्र० कस्तूरचन्द जी नायक ने बड़े परिश्रम के साथ सरल जैन रामायण ४ भागों में रचकर प्रशंसनीय योग प्रदान किया है।

यह कृति सर्वसाधारण के मनन व अध्ययन करने योग्य है।

सिंघई मौंजीलाल

(अध्यक्ष—श्री मध्यप्रदेशीय जैन युवक सभा)

ता: ३०—१—५२ जबलपुर

ता० २१-४-५२

जबलपुर निवासी श्रीयुत वर्णी कस्तूरचन्द जी नायक द्वारा रचित हिन्दी पद्यमय जैन रामायण हमने कई बार शास्त्र सभा में पढ़वाकर उपस्थित जनता के साथ सुनी, वह हमें बहुत प्रिय लगी। इससे जनसाधारण में सरलता से, धार्मिक कथा तथा उच्च भावों का प्रचार होगा। तुलसीदास जी कृत रामायण की तरह जैनरामायण भी पद्यमय हो। "ऐसी आवश्यकता समाज बहुत दिनों से चाह रही थी" उसकी पूर्ति कर नायक जी ने जैन साहित्य के अंग की शोभा बढ़ाई है इसलिये वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

नायक जी से हमें यह जानकर और भी अधिक हर्ष हुआ कि निर्माण की प्रेरणा उन्हें श्री पूज्य १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसाद जी वर्णी से प्राप्त हुई थी। इसलिये इसका आदि श्रेय श्री वर्णी जी को प्राप्त है।

जैसे २ इसका प्रचार बढ़ेगा, वैसे ही वैसे इसका संशोधन भी होता जावेगा और तब हमारे सामने निखरा हुआ रूपभी आजावेगा। इसके रचयिता पहिले व्यापारी थे, अब वानप्रस्थाश्रम स्वीकार कर, जनता में, सब प्रकार से धर्म प्रचार कर रहे हैं अतः वे हमारे लिये स्तुत्य हैं।

सही—गोविन्दराय जैन शास्त्री

(प्रज्ञाचक्षु)

पो० महरौनी (जि० झांसी)

* विषयानुक्रमणिका *

पृष्ठ संख्या

शब्दार्थ या भावार्थ

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
१	मोक्ष = सर्व प्रकार की परतंत्रता का अभाव हो जाना, द्रव्य, भाव और नो कर्म का सर्वथा अभाव।
,,	मङ्गल=पाप को गलावै और सुख को लावै।
२	मंजुतर=अत्यन्त सुन्दर, आनंददायक।
,,	सुषमा=सुःखप्रदायक।
,,	कमलकुञ्ज पै अलिगन गुञ्जत=कमल के समूहों पर भोरों के समूह गुन्जार कर रहे हैं।
,,	सरमँह केलि = तालाब विषें किलोल।
,,	प्रमुदत=प्रसन्न होते हुये।
,,	आयस=आज्ञा।
,,	कल=चैन।
,,	कर विहार द्रुत आव = घूमघाम के जल्दी आ जावो।
२	पवन सौरभित सरससुहाई = सुगंधित पवन बहने से चित्त को आनँद दायक जची।
,,	किधों=कै तो।
,,	वपु=शरीर।
,,	मारगश्रमहर=मार्ग के खेद को हरने वाली।
,,	स्वाभिमान सहजोर = आत्म बल से गर्वित।
३	सुवास=महक या सुगन्धी।
,,	अमिय=अमृत।
,,	केवल ज्ञान अजित प्रभु पाया =सर्व पदार्थ की भूत, भविष्यत और वर्तमान पर्यायों को जानने वाला ज्ञान, अजितनाथ दूसरे तीर्थंकरने पाया।
,,	समवसरण तब धनद रचाया =तबही कुबेर ने बारह सभा संयुक्त, सर्व प्राणियों को हित

पृष्ठ नं० शब्दार्थ या भावार्थ

कारक स्थान रचकर तैयार किया।

,, रिपुकृत दुख = वैरी द्वारा दिया गया दुख।

,, अवनि उदर मँह = पृथ्वी के नीचे छुपा हुआ।

,, खगप = विद्याधरों का स्वामी।

,, अरिअगम्य थल = वैरी की गम्य नहीं, ऐसा स्थान।

,, प्रभु प्रसाद हरि थल दिया = तीर्थंकर की कृपा से इन्द्र ने स्थान दिया।

,, तीन वर्ण तँह, ब्राह्मण नांही = विद्याधरों के स्थान में केवल क्षत्री, वैश्य और शूद्र जाति ही होती हैं ब्राह्मण नहीं।

४ पुन कनिष्ठ सुन्दर तनुज = फिर छोटा सुन्दर नाम का पुत्र

,, जग प्रभुताई = जगत में श्रेष्ठताई पावै।

,, सूर्यहास असि = देवो पुनीत, सूर्यहास नामक तलवार।

,, भीम महावन = महा भयानक जङ्गल।

पृष्ठ नं० शब्दार्थ या भावार्थ

५ विधु वारिधि सम उमग हिय = चन्द्रमा के उदोत समय जिस प्रकार समुद्र उमड़ता है तिस प्रकार हृदय उमग अर्थात् आनन्द को प्राप्त हुआ।

,, गिरा उचाई = वाणी बोली।

,, असि सुभग = सुन्दर तलवार।

,, रवि सम = सूर्य के समान।

,, विनवत = नमन करता हुआ।

,, लहा मोद अधिकाय = हृदय में अत्यन्त हर्ष प्राप्त हुआ।

,, असन = भोजन।

,, विराधन = काटने में।

६ निरख शीस महि पै पड़ो = पृथ्वी पै कटा हुआ शिर देखा।

,, पूर्व गये वेटोक = विना किसी वाधा के पहिले तूने जीत लिये।

,, विपुल = भारी या वहुत।

७ मन्थन मथन हिये मँह छाये = कामविकार हृदय विषें उमड़ पड़ा।

,, लगी पवन जलनिधि उमगावे = जिस प्रकार पवन की झकोरों से समुद्र उमड़ता है।

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ	पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ

७ जिम सलिलहिं महिषी लख लेवै=जिस प्रकार शीतल जल को लखकर भैंस प्रसन्न होती है।
,, काम विरह विकली हिये=काम वेदना से अत्यन्त हृदय में व्याकुल हुई।
,, पृच्छै=पूंछै।
८ आगरी=श्रेष्ठ।
,, दिवि=स्वर्ग।
,, अभिनय=स्वांग रचकर।
,, विफल कामना=हृदय की चाह पूरी न होगी।
,, वधिर समान=बहरों के समान
,, निवास=स्थान या रहने का मकान।
,, सैन्यतें कटाक्ष मारी=इशारे तें तिरछी आंख चलाई।
,, सँजीवन=प्राणदान करनेवाली
,, महज्वलन्त=अत्यन्त श्रेष्ठ, जिस प्रकार दूसरी नहीं।
१० कुचक्र माया=कपट का खोटा दांव।
,, वत्स=बछड़ा।
,, विकृत वेष=असुहावनी रचना
११ अष्टम चन्द्र उदय=मरण।
,, पतंगा=कीड़ा।
,, मतंगा=हाथी।
,, नीठ नीठ=बड़ी कठिनाई।
,, कुक्कुत=खोटा व्यवहार।
१२ विलम=देर।
,, रंच=तनक भी।
,, बाट=रास्ता या सहायता।
,, उताले=जल्दी से।
१३ सिंहनाद=शेर की गर्जना।
,, महा घोर रव नभ, महि छाये=भयंकर शब्द पृथ्वी, आकाश विषें छा गया।
,, छद्म=कपट।
,, अछत=मौजूद होते।
,, शैल शिखर को जलधर वेढ़ैं=पर्वत के शिखर को मेह के समूह घेरें।
१४ श्रोणित की सरिता बह जाये=खून की नदी बह गई।
,, रुचिर=सुन्दर।
,, मन्मथ मथन करत तन सारा=काम विकार समस्त शरीर में पीड़ा पहुँचा रहा है।

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
१५	कीर्ति धवल मँह लगै न काई=निर्मल यश विषैं बट्टा न लगै।
,,	सुसा अँधेरी सम करै=खरगोश के पीछे शिकारी लगने पर, अपने लम्बे कानों से अपनी आंखों को मूंच, समझता है कि अब मुझे कोई नहीं देखता अर्थात् मूर्ख स्वयं नहीं देखता या अन्य नहीं।
,,	सर्व प्रकाशन=सब प्रकार से हाल बताने वाली।
१६	भीर=संकट।
,,	सुत वध तियका बदला लेवैगा=पुत्र मारने और स्त्री अपमान का बदला लेवैगा।
,,	कञ्ज कुञ्ज=कमलों के समूहते
१८	प्रविशे=प्रवेश किया।
,,	सरै=बनें।
,,	यत्र तत्र=यहां वहां।
१९	चउ आराधन=दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप।
,,	वात्सल्य=धर्म प्रेम।
,,	टोह=सुध।
,,	विक्षिप्त=पागल।
२०	झष=मछली।
२१	विश्व=लोक या संसार।
२२	अरदास=विनती।

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
,,	जूझ=लड़ो।
,,	अगणित=अनगिन्ती।
,,	खरतर=अत्यन्त तीक्ष्ण।
,,	अरिगल दिया उतार=वैरी के गले में मार दिया।
२४	रव=शब्द।
,,	कृतज्ञता = उपकारी के प्रति उपकारता।
,,	हेर=ढूंढ़।
२५	भगिनी=बहिन।
,,	द्रुत=जल्दी।
२६	विषम परिपाक = दुखदायक फल।
२७	अरण्य मँह=जंगल विषें।
,,	विघटजात घन पाप = पाप समूह नष्ट हो जाते हैं।
२८	गगन पथ = आकाश मार्ग।
,,	वच आलापै = वचन कहै।
,,	शशि वदन=चंद्र समान मुख
२९	वापुरा=सामर्थ्यधारी।
३०	आघात=नष्ट
,,	कानन=जंगल।
,,	पोत = नौका या जहाज।
,,	उपल द्रवै=पत्थर पिघल जाय
,,	धमक न आनी=तनक ना व्यापी
,,	घावनि=दुखदाई।

पृष्ट नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
३१	भूमिज = भूमिगोचरी मनुष्य।
,,	सुमन सुसज्जित सेज पै = फूलों से सजी हुई शय्या पै।
३४	शक्र शची सम = इन्द्र इन्द्रानी के समान।
,,	मदन उमंग = काल विकार की चाह।
३५	अहि = सर्प।
,,	केहरि = सिंघ।
३६	अनन्य = स्वयं अपना।
,,	अगणित = अपार।
,,	रयनि = रात्रि।
,,	निधन = मरण।
३७	पट अन्दर = परदा के भीतर।
,,	कर्त्तव्य विहीना = अधम पुरुषों समान हीन कार्य।
,,	तताई = गरमाई।
,,	भुजंगिनि = सर्पिणी।
३८	अक़ुलीन = अमर्यादित।
,,	वर्जन – रोकने।
,,	प्रसंग = प्रयोजन या अवसर।
,,	जनता = प्रजा।
,,	अघमग = पाप के मारग।
,,	पाथ = मारग।
३८	खग नयन = कौवा के आंख में पुतली एक होती है वह शीघ्रता से दोनों गोलकों में फिरती हुई मालुम नहीं होती कि पुतली एक है या दो
३६	श्रवै = सुनें।
,,	भामा = स्त्री।
४०	मनु झिर स्रोत अपार = मानो अपार पानी का झिरना झिर रहा है।
,,	वान = वात।
,,	सिन्धुमह = समुद्र विषें।
४१	खामी = कमती।
,,	दावानल = दमार।
,,	अल्प अती = छोड़ा वड़ा।
,,	मुये = मर गये।
,,	सुधा = अमृत।
४२	दुहितावर = दामाद।
४४	पुष्प संग कीटक जिमहु = फूल के संग कीड़ा भी जिस प्रकार।
,,	घन गर्जत नियराय = मेहपास से गरज रहा हो।
,,	सैन्य वाद्य घहरात = सेना के वाजे वज रहे हैं।
,,	दारा = स्त्री।

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
३५	हिय पंकज विकसाय = हृदय रूपी कमल प्रफुल्लित हुआ।
,,	रवि सम=सूर्य समान।
,,	दुखतम=दुखरूपी=अन्धकार
३६	अभि रहो न्यारान्यार=अभी तो जुदे २ रहो।
४७	विरद=यश।
४८	वृत्त=समाचार।
५०	श्वेत कंचुली अहि पै छावै = सुपेद कांचली सांप पै छा जाय तदि कालारूप नजर ना आवै
,,	भानू=सूर्य।
५३	रे खग वायस = हे विद्याधर काग के समान।
,,	द्रवी भये द्रुत रिस विघटाई= नम्र भये तुरन्त कोप को शान्त कर लिया।
५४	सहसा कीन्ह विराम=इकदम रोक दिया।
५५	देव=मन्दिर।
५६	वंद्य=नमन कर।
५७	जलधि=समुद्र।
५८	अनचित्त=अचानक।
,,	टेर=पुकार।
५६	दिवाकर=सूर्य।

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
५६	विक्रम=पौरुप।
६०	बटमार=डाका डालनेवाला।
६२	सदय=दयालु हो।
६३	जनु लघु कुसुम समान= छोटे फूल के समान जानों।
,,	रजनी काली चादर ओढ़ें= चम्मकतारी अँधियारी रात।
६५	पवनसुत = पवनंजय का पुत्र हनूमान।
,,	समर=युद्ध।
,,	रार=लड़ाई।
६७	उदधि=समुद्र।
,,	व्योमपथ=आकाश के मारग।
,,	सुतावर=दामाद।
,,	मुद = हर्पित।
६८	वसुन्धरा=पृथ्वी।
	रवि बिन कज मुरझाय=सूर्य के बिना कमल मुरझा जाय।
,,	हर=नारायण।
६६	स्तूतन=स्तवन उचरने के लिये
७०	अनुज=भाई।
७१	आदेश=हुक्म।
,,	अमर=देवन।
७२	आवास=स्थान।

पृष्ठ नं०   शब्दार्थ या भावार्थ

७३ मदहस्ती = मदोन्मत्त हाथी ।
,, हरि पै = सिंघ पर ।
७४ हरि हू = इन्द्र हू ।
,, सुरपति केर विमान = इन्द्र का विमान भी ।
,, सह सैन्य = सेना सहित ।
७६ लव = अन्तरङ्ग प्रेम ।
७८ सुहृद = मित्र या उपकारी ।
,, वत्सलता = धर्म पर गाढ़ प्रेम
८० परिजन पुरजन = कुटुम्बी और पुरवासी ।
,, सुरसुन्दरि = देवाङ्गना ।
८१ अञ्जनि नन्दन = अंजनी का-पुत्र हनूमान ।
,, सचिव = मंत्री ।
,, विषधर = सर्प ।
८२ बाराबाट = छिन्न भिन्न ।
,, संग्राम = युद्ध ।
८३ समतर = बराबरी ।
,, पाती = पत्रिका ।
,, परिणय = व्याह ।
८४ कोप्या = क्रोधित हुआ ।
,, घूक न मानें भानु की = सूर्य की बात, उलूक कदापि ना मानें
,, मुग्ध = मूढ़ या मूर्ख ।

पृष्ठ नं०   शब्दार्थ या भावार्थ

८७ निशिचर नारीं = राक्षसनी सेविकायें ।
,, निज बनितहिं आदेश लगाया = अपनी स्त्रियों को हुकम लगाया ।
८८ अघमय = पापलिप्त ।
,, अनंग = कामदेव समान ।
८९ कामिनीं = महिलायें ।
९० अञ्जनिलाल = अञ्जनी का पुत्र हनुमान ।
,, भाल = मस्तक ।
९५ नेरी = निकट ।
,, देशै = उपदेशै ।
,, जिम सरिता का वेग अति, रोकै शैल महान = जिस प्रकार नदी के वेग को दीर्घ पर्वत रोक देय ।
,, मनो सरुजता धाड़ मँचाई = मानो रुगनाई ने अपनी प्रलय मँचादी ।
९६ गवनी = गमन कर गईं या चली गईं ।
९७ लोचन = नेत्र ।
,, नाके = झुकाके या नमन करके
९८ शयतें = उसकारनेतें ।

नं० शब्दार्थ या भावार्थ

८ चाप=धनुष।
मृगराज=सिंघ।
९ ढाये=गिराये या नष्ट किये।
विहीनी=रहित।
० पवनपूत=पवनंजय का पुत्र हनूमान।
१ विरतन्त=कथानक।
,, जारजात अकुलीन दिखावै=हीन का जाया हुआ हीन कुली ही दिखावै।
,, शठ=मूर्ख।
,, हिम=शीतल वस्तु।
०२ जनें=पैदा करै।
,, विज्ञन मँह विज्ञ= चतुरों विषें चतुर।
,, श्याल=लड़ैया जानवर।
,, खल=दुष्ट या नीच।
,, कलही = बात का बतंगड़ मचाने वाला।
,, भृत्य=सेवक।
०३ अत्पर=आकाश मार्ग।
,, अगवानी=आदर सहित बढ़ कर लेने को आना।
०४ दिठि=आंख।
,, निशि=रात्रि।

पृष्ठ नं० शब्दार्थ या भावार्थ

१०४ भानु=सूर्य।
१०५ तरहिं बाहुबल सिन्धु या यान बैठकर जांय = भुजन से समुद्र को तिरैं या जहाज पै बैठ कर जांय।
,, काल=मरण का समय।
,, यमघुटी=मृत्यु की घुटी।
१०६ सहसरु=हजार हों।
,, भयप्रद=भयदायक।
,, दृग तरेर धनु ओर निहारें= आंख चढ़ा करके धनुष की तरफ देखें।
,, मन महीप के आचरण = मन रूपी राजा के भाव।
,, दृग दिवान=नेत्ररूपी मंत्री।
१०७ मगसिर वदि पंचम दिवस, इततें कीन्ह पयान=अगहन वदी पंचमी के दिना, यहां ते ते गमन किया।
,, हेम कलश निर्मल जलगंगा= सोने के घड़े पवित्र गंगा जल से भरे हुए।
,, यथा नाम तसु गुणहू व्यापै= जैसा नाम हनूमान अर्थात हमारी बात मानले, यदि न

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ	पृष्ट नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
	मानें तो हनूंगा अर्थात् मारूंगा ऐसा गुण का धारी हनूमान नामक विद्याधर।	,,	शर प्रखरतर=कठोर वाणों की मार को।
१०८	बांधा नृपति, न जलनिधी= समुद्र नामक राजा को बांध लिया न कि समुद्र को। भावार्थ= आगे विनम्र हो समुद्र नृप ने अपनी पुत्री परिणाई लक्ष्मण को, यह कैसे घटित होगी।	,,	दव=अग्नि।
		,,	हनन=मारने को।
		,,	सचिवन=मंत्रियों ने।
		११५	कालिन्दी=नामक नदी।
		१२५	मोती आव=मोती का पानी
		१५२	चतुज्ञानी=चार ज्ञानधारी अर्थात् मनपर्यय ज्ञानी दूसरे के मन की बात जानने वाले।
११०	सुखप्रद=सुखदायक।	१६१	भाम = स्त्री।
१११	गेह विवर=निज घर का बिला या छिद्र।	,,	मग = राह या रास्ता।
		१६२	परस = छूना।
,,	अघपोष कुकर्मी = पाप को पुष्टि करने वाला।	,,	अमिय = अमृत।
		१६३	सचिव = मंत्री।
,,	करत प्रलाप प्रमत्त सम= पागल समान वृथा बक करते हो।	,,	अरदास = बिनती।
		,,	आपरोष चह, तोष गहीजे= चाहे आप क्रोध करो या शान्ति ग्रहण करो।
,,	कुल शशि राहु = कुल रूपी चन्द्रमा को राहु के समान नष्ट करने वाला।	,,	अजित = जीते ना जांय:
		१६४	कल्मष हृदय = पाप लिप्त मन।
११२	हेमरत्नमय लंक नशाहै = सुवर्ण रत्नमई लंका को नशायगा।	,,	अभिप्रेत = इष्ट।
		,,	संधि करन = सुलह की।
		,,	अनभिज्ञ = समझते नहीं।

नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
ः	भूत सुत = भाई और पुत्र।
,	गहन = जंगल।
,	अज्ञ = वे समझ।
,	अस्थि ढेर=हाड़ों के समूह।
;	विक्रम = प्रबल शक्ति।
,	रीस = क्रोध।
.	विज्ञ नर = चतुर पुरुष।
;	अनुचरहिं = सेवकों को।
,	चैत्य = मंदिर, देवालय।
,	तलवर = कोटवाल।
,	पट = वस्त्र।
?	भवितव्य=आगे होनहार।
२	तथास्तु = वैसा ही होवै।
,	सर = तालाव।
,	किधैयां = कहां से।
३	बलध = बैल।
४	दिठि = आंखें।
५	निरग्रीवा = गर्दन रहित।
,,	कीट = कीड़े।
७	वल्लभ = प्यारे पती।
८	दम्पति = पति पत्नी।
,	पामर=पापी या हीन कुली।
,,	नागिन विष आसी = ऐसी नागनी जिसके देखने मात्र से जहर चढ़े।

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
१८०	सब दर्व = सर्व सामग्री।
,,	अज्ञ =मूरख।
,,	महैषी = पटरानी।
१८१	उचंसै=बोलती या कहती है।
१८३	निरमाय = बनवाया।
,,	अरै = डटै।
१८५	वसुधा = पृथ्वी।
,,	अघ करनी = पाप करनी।
१८७	समर मॅह अपर्याप्त = युद्ध स्थल में रावण ही रावण दिखांय।
१८६	रीते = साथ में कुछ नहीं।
,,	जकै = हेटी ना खाय।
१६०	वनचर = पशू।
१६३	द्विपत = द्वेप युक्त।
,,	सत दिन = सात दिवस।
,,	कीटक = कीड़ा।
१६५	सुप्त = सो रहा है।
,,	भौन = संसार में।
१६७	कस = कैसे।
२०१	अरिणि = जंगल।
२०७	कुमुदनी=चन्द्रमा के समय विकसित होती है।
,,	आनन वारिज = मुख रूपी कमल।

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
,,	दिवाकर = सूर्य।
२०८	महि नभ चुम्बी = पृथ्वी से आकाश तक।
२०९	द्रवै = पिघल जाय।
,,	उर = छाती।
२१२	सग्र = सकल।
२१३	रव = शब्द।
२१६	धर्म पियूष = धर्मामृत।
२१७	जिनकल्पी = एकाविहारी साधु अर्थात् महान जितेन्द्रिय
,,	पग = पांव या पैर।
२१९	निष्पृह = निर्ममत्व।
२२०	अहि = सर्प।
२२४	वायस = काग।
,,	सहसरश्मि = सूर्य।
२२५	राघवमाय = कौशिल्या।
२२६	जाति स्मरण = जन्म जन्मान्तर का ज्ञान होना।
२२८	पृच्छ = पूछना।
,,	विदारवै = दुखी हुवा।
२२९	वंचन = ठगन या रहित।
,,	पावस ऋतु = वर्षा ऋतु।
,,	झष = मछली।

पृष्ठ नं०	शब्दार्थ या भावार्थ
२३१	सिलावटहु = कारीगरह।
२३२	दुग्तहिं सघन = पाप का समूह।
१३२	अरधो पड़ो = बे हिसाब।
,,	दान किमिच्छक = दान जो चाहो सो लेव।
,,	अवधि = मर्यादा।
२३३	वेला = घड़ी।
,,	ठाम = स्थान।
२३४	जिह्वा रथ पै = वार्तालाप करते हुए।
,,	उताले = जल्दी से।
२३५	सत्कार पुरस्करहु = आगे बढ़कर अगवानी सहित आदर सूचक वचन बोलना।
,,	जनक नन्दिनी = सीता।
२३६	जाई = पैदा करी॥
,,	अपरिमिती = बे परिमाण।
,,	विराट् = बहुत भारी।
,,	मार्गरोध = रास्ता रोक के।
२३७	वृहद = बहुत।
,,	पर्स = छुयें।

* सरल जैन रामायण *

[तृतीय कांड]

* मंगलाचरण *

दोहा-ॐ शब्द माँही लसत, पञ्च परम पद इष्ट ।
त्रिविध योगतें भजत हिय, रचै मोच्च की सृष्ट ॥
अन्य पदारथ जगतमँह, परम इष्ट ना होत ।
ॐ मोच्च दातार नित, प्रगटत आतम ज्योत ॥

सोरठा-सब जीवन सुखदाय, सरल जैन रामायणिक ।
रचूं तृतिय अध्याय, "नायक" हिय शुभ भावना ॥
पठत श्रवत सरसाय, हिय विकसै नित पद्मवत ।
आनँद मङ्गल दाय, जो ध्यावै हिय भावसें ॥

अथ लक्ष्मण को चन्द्रहास खड्ग की प्राप्ति शम्बुकुँवर का वध वर्णन

—वीर छंद—

वर्षा ऋतू व्यतीत हुई पुन, सरद ऋतुहिं आगम उद्योत।
हुई विमल शशि किरण मंजुतर, प्रसरी महि पर निर्मल ज्योत॥
सुन्दर क्षीरोदधि सम उज्जल, सुषमा जगमँह रही समाय।
कमल कुञ्ज पै अलिगन गुञ्जत, सरमँह केलि रचें दोउ भाय॥

दोहा–निरख सरद सुखदाय ऋतु, राघव चित हरषाय।
विनत लखण, रघु से कहत, विपिन भ्रमण हिय चाय॥
प्रमुदत तब रघुकुल तिलक, दीन्ही आयस जाव।
पै कल तोबिन ना पड़े, कर विहार द्रुत आव॥

आयस पाय लखण चल दीन्हा, सिंह समान अभय चित लीन्हा।
पवन सौरभित सरस सुहाई, चिन्तै महक कहां तें आई॥
किधों राम या सिय वपु पावै, या कोउ देव देह तें आवै।
मारगश्रमहर हिय सुखदाई, सब वन मांहि सुगन्धी छाई॥

दोहा–छाय सुगन्धी दश दिशन, लक्ष्मण हिय हुलसाय।
आवत कँह से या महक, देखूं तँह पर जाय॥
यों विस्मित चित होय कर, चला ताहि की ओर।
निर्भय सिंह समान हिय, स्वाभिमान सहजोर॥

श्रेणिक ने तब प्रश्न उचारो, मिटाव संशय, नाथ हमारो।
तहां सुवास कहां से आई, ताहित लखण,लखन चितचाई॥
सुनगणधर या भांति उचारे, मनो अमिय बरसावनहारे।
केवलज्ञान अजितप्रभु पाया, समवसरण तब धनद रचाया।

दोहा-शरणा गहा जिनेन्द्र का, समवसरण के ठाम।
रिपुकृत दुख भय नाशनें, मेघसुवाहन नाम॥
लिय खगकुलमँह जन्म यह, लखा भयातुर इन्द्र।
गहा शरण जिनदेव का, लहै सकल सुखवृन्द॥

यों विचार द्रुत इन्द्र उचारी, निर्भय थान देवँ सुखकारी।
यों कह लेय संग मँह चाला, दक्षिण दिशमँह आयउताला॥
अवनि उदरमँह थान बताया, पताल लंका नाम कहाया।
लखा खगप हरषा मन मांही, या थानकमँह रिपु भय नांही॥

दोहा-अरि अगम्य थल खगप लह, ह्वै निरभय चित मांहि।
चिन्तै प्रभुपद शरण गह, तँहपै रिपु भय नांहि॥
प्रभु प्रसाद हरि थल दिया, हुई दुःख की हान।
कीन्ह इन्द्र उपकार मम, गहा शरण भगवान॥

महत शरण निधि सम सुखदाई, या भव परभव होय सहाई।
जगसुख मिलन सहज ही जानों, शिवसुख मिलै न दुरलभमानों॥
अजितनाथ का समय कहाया, मुनिसुव्रततक अनेक राया।
उपजे खगपति ताथल मांही, तीन वर्ण तँह, ब्राह्मण नांही॥

दोहा–नृप खरदूषण या समय, रावण का बहिनोय।
चन्द्रनखा रावण बहिन, पुत्र शम्बु तसु होय॥
पुन कनिष्ठ सुन्दर तनुज, यों द्वय सुत गुण खान।
चौदह सहस अधीन नृप, वैभव सुरन समान॥

शम्बुकुँवर के हियमँह छाई, होवै ममपद, जग प्रभुताई।
यदि मैं सूर्यहास असि साधों, सारे रिपु क्षण मांहि विराधों॥
चिन्त्य तात से वेग उचारी, असि साधों, हियआश हमारी।
यातें भीम महावन जावें, रुका न पुन वह बहु समझावें॥

दोहा–असि साधै महमंत्र जप, बारह वर्ष विताय।
बांस बिड़े मँह बैठ यह, अन्न एक ही खाय॥
अन्न लाय ढिग माय नित, प्रतिदिन चूकै नांहि।
देखै असि अब सिद्ध हुइ, मिलै सप्त दिन मांहि॥

सप्त दिवसमँह नांहि गहावै, तो असि परके करमँह जावै।
या नियोग को चित से भूला, केवल असि लख मनमँह फूला॥
ताहि लैन ना भुजा पसारै, मान विवश असि ओर निहारै।
होनहार सो टरै न टारी, सुगंध निरखन लखन विचारी॥

दोहा–बारह बरस वितीत ह्वै, अरु बीते दिन चार।
चिन्त्य चिन्त्य हों सब सुखी, असि लै आय कुमार॥
पै लक्ष्मण असि ओर ही, आया लखत सुवास।
असि का अतिशय तेज लख, आय असी के पास॥

भुजा पसारत चणमँह आई, अधीन सुरगण शीस झुकाई।
प्रमुदत जय जय शब्द उचारे, हौ असि स्वामी नाथ हमारे॥
केशर चर्चित असी निहारी, ताहि परखनें लखण विचारी।
बांस बिड़े पै तुरत चलाई, कटा शम्बुशिर मृत्यु लहाई॥

दोहा—बांस विड़ा कट शिर सहित, लख पैनी असि धार।
विधु वारिधि सम उमगहिय, है असि धार अपार॥
गया लखण आया नहीं, बहुतक समय लगाव।
कह जटायु से राम द्रुत, भृतहिं खोज कर लाव॥

ताहि समय पै सिया निहारै, लखा लखण, असि करमँह धारै।
कुंकुम चन्दन लिप्त सुहाई, ह्वै हर्षित इमि गिरा उचाई॥
लखहु नाथ, वह लक्ष्मण आवै, अद्भुत असि इक करमँह लावै।
लखा राम हू हिय हरषाये, आया ढिगमँह हिये लगाये॥

दोहा—प्रमुदत राघव ने उचर, कहो कुशल, हे भ्रात।
कहां पाय या असि सुभग, रवि सम तेज दिपात॥
विनवत लक्ष्मण हू उचर, असी वृत्त सुखदाय।
सुन रघुवर मुखपद्म खिल, लहा मोद अधिकाय॥

लेय असन मां सुत ढिग आई, बांस बिड़े को कटा लखाई।
तबहि हृदयमँह सुत को डांटै, जहां रह्यो तूं काहे काटै॥
बारह वर्ष यहां पै बीते, विघ्न रहित सुख से दिन जीते।
तास विराधन कहा भलाई, का सोची यामें चतुराई॥

दोहा—कुलवंतिनमँह अग्रहूं, मेरा श्रेष्ठ विचार।
शीलवन्त गुण आगरी, रूप सुरी समधार॥
को ना इच्छै यों युवति, गृह बैठे निधि आय।
मुलकरु पुलक कटाक्ष तें, कामुक बाण चलाय॥

बनी ठनी मनु काम पताका, वेपरु भूपा मोहक याका।
लोक सुन्दरी मानो आई, श्री, ह्री, लक्ष्मी से अधिकाई॥
या रम्भा ही दिवि तें आके, वयन उचरती, प्रेम जनाके।
या विध अभिनय साज सजाया, समझै होवै, चितका चाया॥

दोहा—लज्जागत, अभिनयरु वच, अब लख रघु सन्नाय।
लक्ष्मण ओर निहार पुन, मौन साध रह जाय॥
वयनन ही तें जानिये, कुलवन्ती अकुलीन।
गुण अवगुण कों परखिये, सम, दम, मूर्ख, प्रवीन॥

मुनी समान राम को देखी, विफल कामना अपनी लेखी।
व्यङ्गत वच रघुवरहिं उचारी, बधिर समान काह गति धारी॥
अवसर अमूल्य हास्य न सोहै, चूको तो पछतावा होहै।
होय न रुचि तो यँह से जावूं, हां या ना का उत्तर पावूं॥

दोहा—यों सुन राघव ने कहा, मेरी तिय है पास।
गृह तज आये वन विषैं, अभी न कोय निवास॥
यातें द्रुत ही जाव तुम, नेक न ढील लगाव।
निश्चय मनमँह समझ लो, यहां न लागै दाव।

राघव उरतें समझ निराशा, तबहिं लगाय लखण से आशा।
इनहु सैन्य तें कटाक्ष मारी, मिष्ट वचन या विधै उचारी॥
लिखी भाग्य में सोई पावै, रत्न हाथ का मूर्ख गँवावे।
ले संजीवन औषधि डारै, पाछे मूरख ताहि चितारै॥

दोहा—यातें तुम इच्छो मुझे, करहु न सोच विचार।
नातर पुन पछताव तुम, समय न वारम्वार॥
वा कीन्ही जड़ता घनी, यातें तुम्हें सुझाय।
चिड़िया चुन गइ खेत यदि, मूरख वन पछताय॥

सुन लक्ष्मण हू विहँस उचारा, बहुत सुना उपदेश तिहारा।
सोच विचार करन तो देवो, भराय हांमी जवरन लेवो॥
वलात्कारै कैसे मानें, विन निश्चय प्रण कैसे ठानें।
यातें वेग चली तुम जावो, अभी न मोसें आस लगावो॥

दोहा—श्रवत लखण हू से इमहिं, मुख छवि कलि मुरझाय।
पुन चिन्तै अब का करूँ, रूखो उत्तर पाय॥
सुतहू खोयो पुन विवश, काम वासना कीन्ह।
कूप खाइ सम गति लई, इत ना उत गति लीन॥

महज्वलन्त उदाहरण याको, सुतमृत शोक, रोप गत जाको।
कामवासना हिय प्रजलाई, शोकरु रोप विकारहु जाई॥
जगजिय भाव प्रभू ही जानें, या वह ही जो या विध ठानें।
चित्र विचित्रित भाव लहाई, क्षणक्षण मँह गति मति पलटाई।

दोहा–मन के मते न लागिये, मन के मते अनेक।
जो मन पै असवार ह्वै, वह लाखन में एक॥
काम रिपू जीतन कठिन, जीतैं सोई वीर।
"नायक" रमत स्वरूप नित, टूटै कर्म जँजीर॥

॥ इति प्रथमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ रावण द्वारा सीता हरण वर्णन

—वीर छंद—

लखा विफल जब कुचक्र माया, चन्द्रनखा हिय पुन अकुलाय।
सुतमृत शोक हिये में छाया, अँसुवन बांध, फूट बह जाय॥
विलपत कलपत सुत ढिग आके, वत्स ढिगै जिम गाय रम्हाय।
धूल धूसरित लट बिखराये, विकट विपनमँह रुदन मँचाय॥

दोहा–विचलित ह्वै कटि मेखला, नखन विदारित अंग।
रुधिर स्रवत वपुमँह दिखत, फटी कंचुकी संग॥
विक्रत वेप विलपत हृदय, आई पिय के पास।
लखत पीय पृच्छत भयो, अति ही दीन्ह दिलास॥

जानें तेरा हिया दुखाया, अष्टम चन्द्र उदय तसु आया ।
शैल सिखर चढ़ मूरख सोवै, अन्धकूपमँह गिर पुन रोवै ॥
दीपसिखामँह गिरै पतंगा, जिम खंदकमँह गिरै मतंगा ।
पशुय समान क्रिया वह कीन्ही, मृत्यु आपनी वुलाय लीन्ही ॥

दोहा–जन्मी तूं कुल उच्चमँह, वरन उच्च कुल होय ।
दोप न तेरो काहु विध, या निश्चय है मोय ॥
यातें अब तूं धीर धर, ह्वै सो वृत्त वताय ।
काविध कैसो काहुवो, करहों शीघ्र उपाय ॥

पियवच सुन हिय धीरज धारी, शोकित गदगद गिरा उचारी ।
सुनहु नाथ नित सुत ढिग जाऊं, भोजन पान करावूं ताऊं ॥
याविध वारह वर्ष विताई, हुई सिद्ध असि लख हरषाई ।
सप्त दिवस की अवधी ताकी, वीतगये चतु,त्रय दिन वाकी ॥

दोहा–यों चिन्तत प्रमुदत हृदय, पहुंची सुत के पास ।
लखा कटा वांसन विड़ा, सुत की देखी लाश ॥
छीन्ह खड्ग इक दुष्ट नर, सुत हनकर सुख लीन ।
इकली लख मोसें उरझ, मेरी जा गति कीन ॥

नीठ नीठ कर वचके आई, पूर्व पुण्य तें शील रखाई ।
चौदह सहस नृपन के स्वामी, भ्राता हू त्रिखंडपति नामी ॥
तापै हू वह दुठ ना शंको, कीन्हा कुक्कृत होय निशंको ।
योंकह फूट फूट कर रोई, ना अब मोपै शंकै कोई ॥

दोहा–तिया चरित जानन कठिन, अपनो दोष छिपाय।
रंच न प्रगटन होन दिय, ऐसी बात बनाय॥
जिमहिं कहावत यह प्रसिध, पतिहिं मार सति होय।
ताविध गति यानें करी, जान सकै ना कोय॥

सुन खरदूषण तिय की बातें, चाला तहां शीघ्र रिसयाकें।
कटा पुत्र शिर तँह पै पाया, खेद खिन्न ह्वै वापस आया॥
मंत्री परिजन वेग बुलाये, सबसों मिलकर मंत्र रचाये।
कोय कहै प्रभु विलम न कीजे, रंक न मौका अरि को दीजे॥

दोहा–कोय कहै असि गह लई, सहज न जानो ताय।
कर विचार कीजे युकति, रावण को जतवाय।
यों सुन खगपति तास ढिग, तुरत जतावा कीन्ह।
वाट न लख पुन तासकी, आप गमन कर दीन्ह॥

शूरन से या भांति उचारा, धिक बल विद्यापना हमारा।
इक नर से ही, हम भय खावें, पर ढिग जाय, सहाय मँगावें॥
क्या मैं हतन योग्य ना वाको, चौदह सहस नृपन बल जाको।
यों कह साज सजाकर चाले, ता थल पर सब आय उताले॥

दोहा–संग सहस चौदा खगप, दल बल युत तँह आय।
सुन सेना का शोर सिय, हिय व्याकुलता छाय॥
ह्वै शंकित बोली सिया, भय व्यापत मम अंग।
लिपटी पिय तन से तुरत, यथा वेल तरु संग॥

यों लख राघव धीर धराई, काह प्रिये ऐती अकुलाई।
सिंहनाद या मेह उमंडे, या समुद्र मर्याद उलंघे॥
यों विकल्पयुत राम उचारे, तबही अति ही सुने नगारे।
खग समूह नभमाँह मड़राये, महा घोर रव नभ, महि छाये॥

दोहा—लख याविध राघव कहें, सुर नन्दीश्वर जांय।
या कोई को हतन कर, असि लच्मण ले आंय॥
यातें खगदल कुपित ह्वै, आय हमारे पास।
या वह कन्या छद्म रच, ना पूरी तसु आस॥

अधिक निकट जब अरिदल आया, तब राघव धनु ओर लखाया।
पुन बखतर की ओर निहारा, त्योंही लच्मण वचन उचारा॥
काह नाथ यों कष्ट उठावहु, मोय अछत ना शोभा पावहु।
आप सिया की रक्षा कीजे, युद्ध हेत मोहि आयस दीजे॥

दोहा—यदी भीर लखहों कदै, करूं तुरत सिंहनाद।
आय सहायक हूजियो, समय नांहि अब वात॥
यों कह बखतर पहिन द्रुत, सजे सकल हथियार।
चले अकेले ही लखण, हरखत चित्त अपार॥

लख खग, यापैं शस्त्र चलाये, लखण इका ही मार मँचाये।
थे तिष्ठे सब खग नभ मांही, तऊ लखण चित डरपा नांही॥
शैल सिखर को जलधर वेढ़ें, तिम सब मिल लच्मण को घेरें।
सबहिं शस्त्र, ये काट विदारैं, पुन अपने उन सब को मारैं॥

दोहा—वन रण वैरी अगनि जल, शैल शीस अरु शुण्य।
सुप्त प्रमत्तरु विषम थल, रक्षक पूरव पुण्य॥
पुण्य प्रबल लक्ष्मण तनों, करै रिपुन का क्षार।
मार मार येते हते, लागे ढेर पहार॥

हनें लखण शर सैल घुमाके, गिरें शत्रु द्रुत महि पै आके।
जिम संयम बल साधू धारै, विषय वासना तुरत विदारै॥
गिरीं शत्रु की महि पर लाशें, मनुसरमँह जिमि कमल विकासें।
श्रोणित की सरिता बह जाये, रुन्ड मुन्ड का पार न आये॥

दोहा—ताहि समय रावण खगप, आया बैठ विमान।
लख स्वरूप सिय का रुचिर, देखी रती समान॥
शचि रम्भा श्री ही सुरी, या वनदेवी आय।
दिव्य ज्योति सम दिपत तन, छवि लावण्य सुहाय॥

लख रावण हिय बढ़ि विकलाई, या विन जीवन की विफलाई।
लोक सुन्दरी अब ना दूजी, भाग्य उदय तें मोकों सूझी॥
यों चिन्तत चित क्रोध विसारा, मन्मथ मथन करत तन सारा।
अब सोचै काविध हर लेवूं, जाय गृहै मनवांछित सेवूं॥

दोहा—धिक धिक काम विडम्बना, सहस अठारह नारि।
पाय न तृप्ता हिय विषें, सिय विन मरण चितारि॥
तीनखंड ईश्वरपनो, धन जन सकल विभूति।
जीवन हू निष्फल जँचो, देत प्रान आहूति॥

कँह तो वृत्त सुनत रिसयाया, अरि मारन हित वेग सिधाया।
लख सिय काम बाण हिय लागा, द्रुत ही कोप हिये तें भागा॥
हरूं याहि मैं, चितमँह चावै, गुप्तहि कोउ ना जानन पावै।
कीर्ति धवल मँह लगै न काई, को जानें पर नारि चुराई॥

दोहा—अर्थ सिद्धि हित मनहि मन, सोचै विविध प्रयत्न।
कांच सदृश जगमँह युवति, सबमँह या इक रत्न॥
धूल झोंकबो चहत अब, जग जन आंखन मांहि।
सुसा अँधेरी सम करै, हिय दिठ देखै नांहि॥

सुसा अँधेरी कहाय ताकी, लगा पारधी पछलग जाकी।
आय पारधी जबहिं नगीचै, लम्ब कर्ण तें आखें मीचै॥
समझत मोय न कोऊ देखै, मनमानी तें हिय सुख लेखै।
रावण ताही भांति विचारै, जगजिय आंखन धूरा डारै॥

दोहा—मूरख यों ना सोचवै, पाप छिपत है नांहि।
हिय आंखें हम मूंच पुन, हरखत है हिय मांहि॥
होनहार अविचल प्रबल, गति मति ताविध होय।
ता विध रचै उपाय नित, मेंट सकै ना कोय॥

तत्क्षण विद्या हिये चितारी, सर्व प्रकाशन वृत्त उचारी।
को ये मां पितु कौन कहाये, कौन नगर तें इतपै आये॥
काहित देश तजो दुहु भाई, विद्या ने दशमुखहि बताई।
सिंहनाद का मर्म बताये, कह लक्ष्मण जय रणमँह जाये॥

दोहा—भीर परै मोपै जबहिं, करहों मैं सिंहनाद।
तबहिं प्रभो तुम आइयो, संकेतहिं कह जात॥
इमहिं नाद राघव सुनें, अवश भ्रात पै जाय।
यों विद्या संकेत का, दीन्हा मर्म बताय॥

सुन रावण हियमँह हरषाया, मनो लोकनिधि अनुपम पाया।
अब तो मेरी हो मनमानी, सिया हरन की निश्चय ठानी॥
राघव तो रण ओर सिधावैं, खरदूषण अति बली कहावैं।
सुतबध तियका बदला लेवैं, क्षण मँह दोउन को हन देवैं॥

दोहा—को जाने सिय कौन तिय, रावण कँहसे लाय।
ये हू मानेगी विवश, हमें छांड़ कँह जाय॥
यों विचार रण ओर तें, कीन्हा द्रुत सिंहनाद।
मानो लक्ष्मण ही किया, भीर परे पै याद॥

राम राम हा राम उचारा, मानो संकट लहा अपारा।
सुन राघव व्याकुल ह्वै भारी, तत्क्षण सिय तें गिरा उचारी॥
पड़ी भीर लक्ष्मण ढिग जावूं, कञ्ज कुञ्ज मँह तुम्हें छिपावूं।
बोले जटायु से यों रामा, रक्षहु सियहिं ठहर इस ठामा॥

दोहा—हुये विदा या भांति कह, धनुष बाण ले हाथ।
गिनें न अशकुन छांड़कें, सियहिं जटायू साथ॥
निरख अकेली सीय द्रुत, रावण तँह पै आय।
कर गह सीता का तुरत, लिय विमान बैठाय॥

निरख जटायू सियहिं उठाया, चञ्चु घाततें रुधिर बहाया।
वस्त्र चींथ धरणी पै डारै, रावण का तन अतिहि विदारै॥
खेदखिन्न रावण को कीन्हा, मनमँह रावण चिन्ता लीन्हा।
लड़त जटायू लगायं देरी, आय लौट, प्रभु कर रण फेरी॥

दोहा-जानं विरोधी याह को, रावण अति रिसयाय।
मार थपेड़ा बल सहित, महि पर दीन्ह गिराय॥
गिरा जटायू विकल ह्वै, लगा वज्र मम घाव।
सिय निज रक्षक की तहां, ना कर सकी बचाव॥

अति ही तेज विमान चलाया, चोरीकर हिय धक धक पाया।
सोचै कार्य उचित यह नांही, काम विवशता वह मन मांही॥
सिय को निरख निरख प्रमुदावै, मन की चाही सोई पावै।
रावण हिय तें विवेक भूला, अनुचितकरनमांहि चित फूला॥

दोहा-लखा सीय अपना हरण, कोय मनुज लियँ जाय।
करत रुदन विलपत वदन, हाहाकार मँचाय॥
रुदत सियहिं रावण निरख, दीरघ लेत उसास।
या हिय तो पिय ही चहत, करै न मोरी आस॥

तिय अवध्य यातें ना मारों, अन्य न मानें तुरत विदारों।
मैं केवलि ढिग जो व्रत लीन्हा, पालों ताको निश्चय कीन्हा॥
यदि बलात मैं करों प्रसंगा, सेवत होवै मम प्रण भंगा।
जिम मोहै तिम विधि रच देहों, यत्न किये से वश कर लेहों॥

दोहा—यत्न किये विद्या लहत, दुष्ट नृपति वश होय।
पतिव्रता हू यत्न तें, हो वश निश्चय मोय॥
ना चीन्हें यासें अभी, ये शोकै हिय मांहि।
कछुक दिवस मँह स्वयं ही, चाहै संशय नांहि॥

प्रविशे समर मांहि रघुराई, लक्ष्मण दृष्टि राम पै आई।
कहा त्याग सिय काहे आये, मार्ग जनित श्रम वृथा उठाये॥
विस्मित राघव वयंन उचारा, आया, सुन सिंहनाद तिहारा।
सुन लक्ष्मण कह अरि हैं केते, तुव विन काज सरै ना ऐते॥

दोहा—आप भला ना किय प्रभो, जो सिय तज इत आय।
वेग जाव सिय के ढिगै, रंच न ढील लगाय॥
श्रवत लखण के वीरवच, राघव हिय प्रमुदाय।
दै आशिष पावों विजय, आप लौट के जाय॥

लखण वीरवच सुन सुख लीन्हा, सिंहनाद पुन कोनें कीन्हा।
यों चिन्तत ही चिन्ता छाई, सिय बिन शूनी कुटी लखाई॥
सोचा थानहिं सुरत विसारी, पुनः सोच निश्चयता धारी।
प्रिया छिपाय यहीं पै छोड़ी, हरली कोय, विछोही जोड़ी॥

दोहा—यों निश्चय हियमँह उपज, मुख से निकसी हाय।
हाय प्रिये! तूं कँह गई, योंकह मूर्छा खाय॥
ह्वै सचेत खोजन लगे, उठि शंका हिय मांहि।
यत्र तत्र भरमत फिरत, खोजी, पाई नांहि॥

जाकें गिरि के थान निहारे, खोज फिरे द्रुत थानक सारे।
कहूं न लखमँह प्रिय जब पाई, तबहिं जटायू की सुध आई॥
लखा जटायू लेत उसासें, रुधिर लिप्त, मृत नजीक यासें।
णमोकार द्रुत मंत्र सुनाया, चउ आराधन शरण लिवाया॥

दोहा–अति संबोधा तास हिय, राघव परम दयाल।
महत पुरुष चूकें नहीं, कर्त्तव धर्म विशाल॥
विपति सबहिं लह कर्मवश, है यदि जगमँह वास।
वह ही महनर जानिये, धर्म अमिय हिय जास॥

पक्षी की यों गतिहिं सुधारी, तज पर्याय हुआ सुर भारी।
यों राघव कर्त्तव्य निबाहा, अति वात्सल्य गुणहिं अवगाहा॥
पै सिय टोह कहूं ना पाये, यातें चितमँह अति अकुलाये।
पाथर, वृक्ष सबहुं से पूंछें, सिय बताव? वे काविध सूंचें॥

दोहा–यदपि राम ज्ञानी निपुण, निश्चय सम्यकवन्त।
तदपि मोहवश मूढ़सम, विलपत हिय शोकन्त॥
ह्वै वियोग से असह दुख, सब सुध बुध खो दीन।
वच उचरें विक्षिप्त सम, पुनः अचेती लीन॥

पुन सचेत ह्वै वयन उचारा, अरे दैव, क्यों कुठार मारा।
पितु "वच" पालन राज तजाये, विपन विहारी बन इत आये॥
तऊ दैव, तुझ, दया न आई, मृत्यु समान अवस्था लाई।
है अब को, जो प्रिया मिलावै, मो उर दाहक शोक मिटावै॥

दोहा—तासम बन्धु न दूसरो, जो प्रिय देय मिलाय ।
विलपत किलपत या विधै, जल विन झप अकुलाय ॥
पुन कछु धीरज धर हिये, धनुष टँकोरा कीन ।
सुन गजहू निर्मद हुए, वनचर अति भयलीन ॥

काहू विध जब वश ना चालो, धनुष बाण तब महि पै डालो ।
चिन्ते, मनमँह तूं अपराधी, काह विपन मँह इकली छांड़ी ॥
वृथा अन्य को दोष लगावै, ना अपनो अपराध लखावै ।
जान बूझकर, निजतिय खोई, यों अविवेक करे ना कोई ॥

दोहा—नरभव दुरलभ रतन सम, फेंक सिन्धु के मांहि ।
पुन ताको खोजन चहै, तासम मूरख नांहि ॥
तिम प्रिय सिय हम खोय पुन, खोजत मलमल हाथ ।
हुये विफल मम यत्न सब, अब न होय सिय साथ ॥

मालुम पड़त सिंह ने खाई, अथवा भयवश प्रान गँवाई ।
विछोह शोक काहविध रोकों, लक्ष्मण विजय लहै, शंक मोकों ॥
सबविध विपदा शिर पै छाई, कोउ न दूजो दिखै सहाई ।
यों विकलप बहुविध उपजाके, गिरत फिरत भ्रमते अकुलाके ॥

दोहा—गज गेंड़ा चीता सुसा, मृग साम्हर मृगराज ।
इन सब सों पृच्छत फिरत, तुम सिय देखी आज ॥
स्वर्ण वर्ण मृग लोचनी, सुन्दर छवि मुख मांहि ।
सुन प्रतिध्वनि मनु वे कहत, हम देखी है नांहि ॥

वार बार सब ओर निहारें, कहुँ तो सिय दिख जाय हमारें।
चिन्त्यो जगत घोर दुखकारी, ज्ञानी बनत मोक्ष मग चारी ॥
यातें निर्बंध रत्नत्रय सेवै, भवदधि से निज नैया खेवै।
वह ही अनुपम सुःख लहावे, जग का आवागमन मिटावे ॥

दोहा—गणधर श्रेणिक सें कहत, विश्व व्यवस्था देख।
महा पुरुष भी दुख लहत, अशुभ कर्म की रेख ॥
ताहि रेख द्रुत मेंट बुध, निज स्वरूप प्रगटाय।
"नायक" रमत स्वरूपमँह, शिव का यही उपाय ॥

इति द्वितियः परिच्छेदः समाप्तः

अथ सीता के वियोग से रामचन्द्र को दुख और लक्ष्मण की रणमँह विजय वर्णन

वीर छन्द—

खरदूषण का शत्रु विराधित, शरण लखण के रणमँह आय।
जूझै इकला महा सुभट यह, यासे कार्य सिद्ध हो जाय ॥

विनवत कहि लच्मण से याविध, सुनहु प्रभो मेरी अरदास।
रख दिय हाथ शीस पर लच्मण, कही पूरहों तेरी आस॥
दोहा–यों सुन प्रमुद्त वयन कह, सुनहु विनय नरनाथ।
खरदूषण से जूझ तुम, मैं सेना के साथ॥
इमि कह प्रविशा समरमँह, करी न तनकहु देर।
अपना नाम सुनाय कह, लेहुँ पूर्वला वैर॥

महा विकट संग्राम मँचाया, अगणित अरि भट मार गिराया।
अमित बाण झर दुहुन लगाई, मेह घटा सी नभमँह छाई॥
अस्त्र शस्त्र का मण्डप छाजै, इकला लच्मण सबहिन विराधै।
काट सबहिन शर अपने मारै, रिपुगण अगणित महिपै डारै॥
दोहा–खरदूषण सन्मुख जबहिं, आया लच्मण तीर।
मनु सुरेन्द्र असुरेन्द्र दोउ, आये सन्मुख वीर॥
खरदूषण दिठि अरुण कर, बोला शब्द कठोर।
मारा सुत रे दुष्ट तूं, किय कुदृष्टि तिय ओर॥

परतिय रति का स्वाद चखाहों, कर विनाश यमलोक पठाहों।
सुन लच्मण या भांति उचारो, सुतवत यमघर तुमहु सिधारो॥
मारे बाण तास रथ तोड़ा, गिरा खगप महि पर मुख ओड़ा।
पुन उठ वेग लखण ढिग आया, यों लख लच्मणहू रिसयाया॥
दोहा–लेय शस्त्र खरतर दोउ, करें परस्पर वार।
सूर्यहास लेकें लखण, अरिगल दिया उतार॥

सुर पुनीत या शस्त्र से, बच न सकत अरि कोय।
खरदूषण के शीस धड़, गिरे जुदे द्वय होय॥

घायल कीन्हा दलपति याका, पड़ा शरीर मही पै ताका।
खरदूषण सेनापति दोई, जूझे बचे जियत ना कोई॥
भागाभाग मची चहुँ ओरा, जय सूचक धनु लखण टँकोरा।
तबहिं विराधित हरखा भारी, सब मिल जय जयकार उचारी॥

दोहा–आश्रम अब देखै लखण, महि पै पौढ़े राम।
लख न परत तँह जानकी, ना जटायु तिस ठाम॥
बोले विस्मित लखण किम, महि पै पौढ़े नाथ।
कहां जटायू जानकी, गये छोड़ तुम साथ॥

लक्ष्मण के तन घाव न देखा, जययुत आय ढिगै सुख लेखा।
हर्षित ह्वै हिय लगाय लीन्हा, पुन विषाद चित उत्तर दीन्हा॥
पक्षी तो सुर धाम सिधारा, सिय को खोज खोज मैं हारा।
सिंह भखी या हर लिय ताकैं, यों कह राघव हिय अकुलाकैं॥

दोहा–यों सुन लक्ष्मण ने कहा, प्रभु अधीर मत होव।
कोय दुष्ट हर ले गयो, लगा लेंयगे खोज॥
विक्रम कर खोजें सियहिं, आप करहु विश्राम।
यों कह धीर धराय दिय, कछु सुख भासा राम॥

मुख धुवाय सन्तोषित कीन्हा, हियमँह राघव कछु सुख लीन्हा।
ताही समय विराधित आया, दल का घोर शब्द तँह छाया॥

राघव लक्ष्मण प्रती उचारी, काहे का रव छाया भारी।
श्रवत लखण रण रहस बतावै, खगप विराधित ममढिग आवै॥

दोहा—चन्द्रोदय का पुत्र यह, रणमँह कीन्ह सहाय।
मैं मारा खरदूषणहिं, याने सैन्य नशाय॥
इतने में ढिग आय वह, दल युत भारी साज।
गूंजी जय ध्वनि दशदिशन, राम लखण महराज॥

विनवत कहै शीस को नाये, आयस देव नाथ जो चाये।
यों सुन लक्ष्मण याहि उचारी, सुनहु मित्र हिय चाय हमारी॥
हरी कोय मम स्वामिन आके, कीन्ह दुखी हिय चोट लगाके।
इनहिं मोर जीवन धन जानो, इनदुख मोय दुखी अति मानो॥

दोहा—विरह विवश ये जिय तजें, मैं भी तजहों प्रान।
यातें खोजहु स्वामिनी, यह कर्त्तव्य महान॥
यों कह गद्गद् हिय भयो, लोचन अश्रु बहाय।
राम लखण से वीर वर, पड़े विपति मँह जाय॥

श्रवत विराधित हू दुख लीन्हा, सम्वेदन सब मिलकें कीन्हा।
चिन्त्य विराधित ये उपकारी, दइ रजधानी पूर्व हमारी॥
कृतज्ञता का करों चुकारो, ये ही है कर्त्तव्य हमारो।
याविध कर्त्तव्र दृष्टी धारी, सबन सेवकहिं तुरत उचारी॥

दोहा—लावो हेर स्वामिनी, जल थल पर्वत मांहि।
खोज लाव वाञ्छित मिलै, बचै कोय थल नांहि॥

आज्ञा पाकें सबहि खग, दौड़े लगी न देर।
पै सुध कहुँ पाई नहीं, खोजे सब थल हेर॥

रावण यान चलै नभ मांही, सिय अति रुदनें धीरज नांही।
विलपत राम लखण उच्चारै, हाय हाय कंह पुनहु पुकारै॥
रत्नजटी यों रुदनत देखी, प्रभु भामण्डल भगिनी लेखी।
समझ गया द्रुत रहस्य याका, हरलिय जावै प्रभु लंका का॥

दोहा-रत्नजटी रिसधर कहा, क्यों रे पापी चोर।
कहां लिये तूं जात ये, प्रभु भगिनी है मोर॥
राघव पति, देवर लखण, दशरथ ससुर सुजान।
अवधापुर के वीरवर, जानत सकल जहान॥

यदि तूं अपना जीवन चाहै, विप को भखन मती उमगाहै।
परतिय लंपट जे जग मांही, सुखिया कबहुँ सुने हैं नांही॥
यातें सीख मान ले मेरी, या पुन मौत आइ है तेरी।
यों सुन रावण अति रिसधारी, पुन याविध मनमांहि विचारी॥

दोहा-युद्ध करों सिय भय लहै, यदि तज अपना प्रान।
यातें विद्या हर लई, गिरता पत्र समान॥
सिन्धु मांहि कम्बूद्विपहि, रत्नजटी गिर आय।
आयु कर्म वश प्रान बच, बिन विद्या असहाय॥

खोज खोजकें सब खग आये, पै सिय की सुध कहूं न पाये।
आके कहें सुनहु हे स्वामी, सबही खोजे जे थल नामी॥

यों कह बैठे होय उदासा, श्रवत राम लिय दीर्घ उसासा।
ह्वै निराश रघु वयन उचारा, हे खग किय तुम यत्न अपारा॥

दोहा—अशुभ कर्म संयोग तें, विपति विपति पर आय।
प्रियजन बिछुरे वन बसे, अब सिय बिछुड़ी जाय॥
हिलक हिलक रुदने मनहु, दुख समुद्र उमड़ेय।
सिय बयार के लगत ही, प्रचुर लहरियां लेय॥

लोकोत्तम पुन चरम शरीरी, जिनके भव की हुई अखीरी।
वेहू याविध रुदन मँचावें, विलपत किलपत शोक उपावें॥
धिक धिक छिः छिः कर्मन माया, जानें जगमँह जीव रुलाया।
विज्ञ विराधित धैर्य धरावै, महापुरुष हिय शोक न लावै॥

दोहा—सिया खोज लाहों प्रभो, हो सबविध कल्याण।
आप धीर धारो हिये, भागै विपति निदान॥
नांहि समय अब शोक का, जानहु कर्म विपाक।
खरदूषण के मरण तें, हुआ विषम परिपाक॥

बड़े बड़े विद्याधर नामी, मित्र अनेक महा बल धामी।
युद्ध प्रवीण हजारन थानें, लही विजय किय रण घमसानें॥
जबहिं मरण सुन लेहें याका, लेवें बदला आकें ताका।
बसवो उचित नांहि वन मांहीं, कछू उपाय सधै इत नांहीं॥

दोहा—चलहु लंक पातालमँह, समाधान चित होय।
वृत्त पठावें निज हितू, भामण्डल पै सोय॥

है यथार्थ निर्णय यही, यातें किय प्रस्थान।
चाले राघव लखण युत, सुन्दर दिपत विमान॥

सीता विना शून्यता भासै, गणना होवे एक जहांसै।
विन सम्यक जिम ज्ञान चरित्रा, ना शिवदायक आतम पवित्रा॥
चला विराधित प्रथम अगाई, सजि चतुरंगी सैन्य अड़ाई।
चन्द्रनखा सुत सुन्दर आया, अजित सैन्य हू संग मँह लाया॥

दोहा-जीता च्चण मँह ताहि पुन, कीन्हा नगर प्रवेश।
अमरपुरी सम दिपत अति, रत्नन ज्योति विशेष॥
रत्नदीपसम नगर यह, भासै जिम पापाण।
तिम अरण्यमँह सियसहित, भासा स्वर्ग समान॥

खरदूषण के महलन आये, तँहपै श्रीजिन भवन लखाये।
दर्शे श्रीजिन कीन्ही पूजा, किय थुति हितकर और न दूजा॥
जग जिय नैया पार उतारे, हमहू शरणें आय तिहारे।
तारो आज हमारी बारी, विनवत हम सब बारम्बारी॥

दोहा-भक्ति प्रेमवश रघु मगन, भूले सिय सन्ताप।
धर्म सहायक होत जब, विघट जात घन पाप॥
औरहु चैत्यालय जहां, ते सब वन्दन कीन्ह।
"नायक"निज निधि मँह रमत, निश्चय शिव तिन लीन्ह॥

॥ इति तृतीयः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ लंका में मायामई कोट निर्माण होने का वर्णन

—वीर छंद—

कर सिय हरण गगन पथ रावण, गति अति मन्द विमान चलाय।
द्रुत गति मँह कहुँ सिय अकुलावै, यों चिन्ता चित मांहि समाय॥
छवी छीण मन मलीन तद्यपि, याको भासै शचिहि समान।
लगाय फेरी सिय के चहुँ उर, वच आलापै यांचक मान॥
दोहा—हे देवी किरपा करहु, यांचक मोकों जान।
रति रस अमृत सिञ्च द्रुत, देव प्रान का दान॥
यदपि कुपित तुअ शशि वदन, तऊ मनोहर भास।
कृपा दृष्टि निरखो तनकं, जान आपनो दास॥
हूं अपराधी तो यो डांड़ो, निज पगतें मम मस्तक ताड़ो।
तुअ क्रीड़न थल अशोक होतो, पदाघात सह आनँद जोतो॥
या मुख कुरला को जल पातो, फूलत फलत सुखी हो जातो।
यदी तिहारी आयस पावूं, रवितें ऊपर यान चलावूं॥
दोहा—रचना वसुधा की रुचिर, चतुर सिलावट कीन्ह।
ह्वै प्रसन्न देखहु सकल, क्यों मन करत मलीन॥
हूं त्रिखंडपति सूर्य सम, दिपता तेज महान।
सब सुख भोगो प्रेम वश, सेवक अपनो जान।

श्रवत कुवच जो खगप उचारै, येहू नागिन सम फुन्कारै।
हृदय अरुचियुत वयन उचेरी, महा सती हूं शील सुमेरी॥
पाप कालिमा, तो हिय छाई, तैंने कुल की लाज गमाई।
निंद्य अधर्मी दुष्टरु पापी, तनक लाज ना, तो उर व्यापी॥

दोहा—भस्म ढकी जिम अग्नि पर, पांव रखे जर जाय।
तिम परतिय के नेह सें, नाशै कुगति लहाय॥
वज्र हृदय, अघकर मलिन, का देवूं उपदेश।
अंध नृत्य देखै नहीं, बधिर सुनें ना लेश॥

याविध कटुक जहर सम बोली, तउ ये जानें अमृत घोली।
वार वार निज शीस नमावै, वहुविध अनुपम विनय दिखावै॥
पै सिय नेक ध्यान ना देवै, छण छण दीर्घ उसासें लेवै।
पुन निरखै तन पुलक सकोचै, पुन उठाय कर भूमँह मोचै॥

दोहा—कहै विविध विध मृदु वयन, सिय प्रसन्न ना होय।
शील शिरोमणि पतिवृता, डिगा सकत ना कोय॥
थिर सुमेरु विचलित करै, ऐसा जग मँह कौन।
क्या रावण है वापुरा, कोय न उपजा भौन॥

रावणसा बुधमान न कोई, पै सिय लख सब सुधबुध खोई।
हिये विवेक चलै ना चालो, जोहै सुस्थिर राखन वालो॥
चाह दाह तसु हिय को जारै, पूरन आस, विवेक विसारै।
सब तिय एक समान न जानें, त्रिलोक सुन्दर सिय को मानें॥

दोहा–सुदृढ़ प्रतिज्ञा सीय किय, सुनों न पिय की बात।
असनपान त्यागूं चहै, होय प्रान आघात ॥
त्रिखंडपति हू चलत जब, यों अनीति की चाल।
जाय शरण काकी गहों, जब नृप को यह हाल ॥

देवारण्य नाम कहलावै, तँह पै लाय सीय ठहरावै।
स्वर्ग समान दिपै यह कानन, मोहक प्रसन करन हिय आनन ॥
पै सिय हिय बन नांहि सुहाया, समझै मृतसमान दिठि आया।
अति दमार तसु हियमँह लागी, खान पान सब सुधबुध भागी ॥

दोहा–लंका में पहुँचा जबै, रावण अपने थान।
रुदनीं सहस अठार तिय, खरदूषण मृत जान ॥
चन्द्रनखा विह्वल हुई, बहें अश्रु मनु स्रोत।
चन्द्रनखा दुख सिन्धुमँह, रावण को जनु पोत ॥

चन्द्रनखा लहि विह्वलताई, लोट गोद मँह रावण भाई।
कहि मोसम हतभाग्य न कोई, सुत पति पुर वैभव सब खोई ॥
यों रुदनी मनु कुरुचि पुकारै, श्रोता का हिय तुरत विदारै।
उपल द्रवै का मनुज कहानी, पै रावण चित धमक न आनी ॥

दोहा–भगिनी की धावनि दशहिं, निरखत इमहिं उचार।
यह जग रीति अनादि से, उपज विनश निरधार ॥
होनहार होवै अटल, चीण आयु जब होय।
तब मृत होवै निश्चयहिं, बचा सकै ना कोय ॥

नियत नियम ने ऐसा कीन्हा, भूमिज रंक मार तिहिं लीन्हा ।
अब तुम चितमँह धीरज धारहु, अपने चित से शोक निवारहु ॥
धर्म भावना दृढ़तर भावो, पालहु संयम आतम ध्यावो ।
मैं अब द्रुतही हनहों ताको, बचा सकै ना कोई वाको ॥

दोहा—यों संबोधो बहिन को, मनु दिय गुरु ही ज्ञान ।
ह्वै जिह्वा मनु अमिय सम, घटहिं हलाहल जान ॥
अँधरे दीपहिं कर धरै, परहिं प्रकाशन काज ।
आप पतत अँधकूप मँह, रचत सकल समाज ॥

पर उपदेश कुशल बहुतेरे, आचरते वे नर न घनेरे ।
स्वारथ लाग करें सब प्रीती, सुर नर खग की येही रीती ॥
रावण न्याय नीति विज्ञानी, अब अन्याय करन की ठानी ।
अन्यायी का कोय न साथी, स्वयं आप अपने का घाती ॥

दोहा—सुमन सुसज्जित सेज पै, रावण लेय उसांस ।
शोकित पिय को निरख ह्वै, मन्दोदरी उदास ॥
कहत तिहारे कुल विषें, हुये निधन बहुवीर ।
कबहुं न शोकित यों हुये, होवत आज अधीर ॥

बीरन को या उचित न होई, ऐसा शोक करै ना कोई ।
खरदूषण के मृत का जेता, नामालुम, कर रहे हो केता ॥
सुन रावण, या प्रती उचारा, सुनहु शोक यों छाय अपारा ।
प्रथम कहो मैं कोप न लाहों, तब मैं याका भेद बताहों ॥

दोहा–सीय तीय सुन्दर सुभग, है त्रिभुवन में एक।
ताको लख मैं मुग्ध ह्वै, मन ने तजा विवेक॥
आश पूर्ण होवै नहीं, तो मैं तजहों प्रान।
यदी इन्हें राखन चहो, द्याव मोहि रतिदान॥

सुन वच मन्दोदरी पिया के, बोलै वयन वदन विहँसाके।
ऐसी नारि कौन जग मांही, आप चहें वह इच्छत नांही॥
बलात्कारै सेवन कीजे, अपनी आश पूर्ण कर लीजे।
यों सुन रावण याहि उचारी, तोहि न मालुम "शपथ" हमारी॥

दोहा–इन्द्र वृन्द से वंद्य श्री, केवलि दिय उपदेश।
सुन वृत येही ग्रहण किय, बलात करूं न लेश॥
मोकें जो तिय ना चहै, ता संगम तज दीन्ह।
गह साक्षी यों सवन की, अटल प्रतिज्ञा कीन्ह॥

मैं ने मन-मँह याहि विचारी, को ना चाहै मोकें नारी।
यातें येही वृतगह लेवूं, बलात्कारै कैसे सेवूं॥
अब तुम जाय प्रसन्नो ताकों, जैसे रीझै अब मन वाको।
वेग करो मम प्रान न जावें, प्रान गये पुन लौट न आवें॥

दोहा–जब तक तन मँह प्रान थिर, करल्यो सियहिं प्रसन्न।
भवन जरै खोदै कुंआ, ता सम मूर्ख न अन्य॥
सुन पिय के हियदुख वयन, याने धैर्य धराय।
जो आयस, दीन्ही प्रभो, टर न सकत हे राय॥

तबही सहस अठारह नारीं, सिये ढिगहिं ते वेग सिधारीं।
मुस्कयत मन्दोदरी उचारी, हर्ष थान क्यों विपाद धारी॥
जा तिय का हो रावण स्वामी, धन्य धन्य तिय जग मँह नामी।
त्रिखंड का अधिपत्यहु पावै, नरखग सबहू शीस झुकावै॥

दोहा—सब सुपमा सुख धाम यह, प्रमुदित इच्छा याहि।
भूमिगोचरी रंक प्रति, तजहु प्रेम दुखदायि॥
शोक तजो सब सुख भजो, रावण सुख का मूल।
कहन हमारी मान लो, करहु मती अब भूल॥

यदि मम वच ना हियमँह धारो, तदि वह करहै बलात्कारो।
राम लखण हू मारे जावें, प्रान तिहारे संकट पावें॥
यातें हितवच मान हमारो, स्वर्गपुरी सम सब सुख धारो।
या विध सब मिल वयन उचारीं, हो प्रसन्न हिय मुलकत सारीं॥

दोहा—शील विराधन वयन सुन, ह्वै सिय डांवाडोल।
अश्रुपात विलपत वदन, वयन नीतिमय बोल॥
पतिव्रतन मँह श्रेष्ठ तूं, पुन क्यों कुवच निकास।
इहि परभव अतिदुख लहीं, जिन किय शील विनास॥

या पापी तन पुन मिल जावै, गया शीलधन फिर ना पावै।
दुस्सह दुख में सब सह लेहों, शील विराध कुगति ना जैहों॥
तुहूं पतिव्रत शील डिगावै, निंद्य उचारत लाज न आवै।
सूर्य चंद्र चाहे टर जावें, पतिव्रता ना शील गमावें॥

दोहा—कामदेव सम रूप अरु, वैभव इन्द्र समान।
शीलरत्न बिन, जगतमँह, तृणतें लघुतर जान॥
शीलरत्न ही हृदयमँह, वैभव धर्म स्वरूप।
सर्वश्रेष्ठ सुखदाय यह, पालत शील अनूप॥

धिक धिक है जीतव्य तिहारो, जो इमि निन्दक वचन उचारो।
स्वप्न माँहि हू कुवच न मानों, अचल मेरुसम शील प्रमानों॥
वेग जाव जो रुचै सो कीजो, यों उद्देश भूल ना दीजो।
कुलटा वेश्या दूती नारी, परनर सेवै कहिं व्यभिचारी॥

दोहा—सती साधवी जगतमँह, पूज्यपना को पाय।
यदि सेवें व्यभिचार ये, पृथ्वी पलटा खाय॥
गुण अवगुणमँह का फरक, केवल याहि सुजान।
गुण थिर है, अवगुण अथिर, पूज, अपूज महान॥

तियन विफलपन रावण देखा, अपने मनमँह धैर्य न लेखा।
कामातुर विक्षिप्त कुरागी, हृदय दग्ध मनु दमार लागी॥
सिय ढिग आके गिरा उचारी, हे सुन्दरि सुन विनय हमारी।
मोसे चितमँह भय ना खावो, लखो कमी का, मोहि बतावो॥

दोहा—शक्र शची सम, हम तुमहु, भोगें सुन्दर भोग।
हो प्रसन्न मृगलोचनी, तजहु शोक का रोग॥
यों कह भुजा पसार चह, परसों याका अंग।
हृदय चाह अतिही बढ़ी, उठ हिय मदन उमंग॥

यों लख सिया कड़क कर बोली, मनो तोप से छूटी गोली।
दुष्ट नीच पापिष्ठ अधर्मी, दूर रहै मत छिये कुकर्मी ॥
सती विभव को तूं का जानें, परनर वैभव मलसम मानें।
शीलसमान धर्म है नांही, जासें रमें मोक्ष के मांही ॥

दोहा—सती मानती पर नरहिं, वैभव यथा मसान।
धर दरिद्र सन्तोपता, निज आभूषण जान ॥
शील धुरन्धर जगतमँह, धन्य धन्य नर सोय।
करत प्रशंसा इन्द्र हू, शिवरमणी वर होय ॥

अग्नि नीरसम, परसत होवै, अहि अमृतसम, विप को खोवै।
केहरि मृगसम, ना भयकारी, शील विनाशै विपदा सारी ॥
सिन्धु तरै निज भुजबल सेती, विपति विनाशै आवै केती।
महिमा शील कहां लों गावें, श्रीजिन जानें या जो पावें ॥

दोहा—वयन तिरस्कृत श्रवत ही, रावण हिय, रिस छाय।
निशा मांहि माया रची, घटा गजन की आय ॥
तउ सिय रह निर्भय अचल, गई न शरणें याहि।
विपधर अग्नि फुलिङ्ग लख, ना गह शरणा ताहि ॥

याविध करत रैन हू बीती, ताविध सिय ने दृढ़तर जीती।
यद्यपि सीता बहु अकुलाई, नांहि शरण रावण के आई ॥
प्रलय पवन से मेरु डिगै ना, तिम उपसर्गन सिया चिगै ना।
ज्यों ज्यों किय उपसर्ग अपारा, त्यों त्यों याने दृढ़ वृत धारा ॥

दोहा—व्यन्तर हुन्कारें तहां, वहुविध भय उपजाय।
तउ सिय प्रण पै दृढ़ रही, शरण अनन्य लखाय॥
शील डिगावन हेत तँह, अगणित चेष्टा कीन्ह।
पै सिय अचल सुमेरु सम, चिगी न भय चित लीन्ह॥

लगी होड़ सी वहु अरसासें, चिगै न कोई दुइ तरफासें।
निज निज विजय लहन को देखें, डिग न जांय यों चिंता लेखें॥
एक डिगावै एक वचावै, अपनो अपनो जोर लगावै।
काहू भांति कसर न राखी, होय वही जो विधि रच नाखी॥

दोहा—रस्सा खींचन सम लगी, दोउ तरफ से होड़।
निज निज शक्ति लगायवें, को देवै अव तोड़॥
धन्य धन्य यों जोड़ ह्वै, समतर का वल पाय।
इक भचत, इक रचहीं, अविचल धर्म सहाय॥

भंग प्रतिज्ञा होन न दीन्ही, प्राणत्याग की बाजी लीन्ही।
रावणहू निज हठ ना छांड़ै, सीय न अपनों शील विगाड़ै॥
कर कर यत्न दशानन हारो, तऊ न सियने शील विगारो।
याविध कर कर रयनि विताई, सिय पारीचे, विजय लहाई॥

दोहा—ह्वै जव प्रात विभीषणहु, सव जन पहुँचे आय।
खरदूषण के निधन पर, सवने अश्रु वहाय॥
रावण हू चित्राम सम, सवकी ओर निहार।
तवहिं विभीषण रुदन सुन, करत विलाप अपार॥

पट अन्दर रुदनत ध्वनि आवै, पृच्छ विभीषण पट ढिग जावै ।
रुदनत कौन पुकार मँचाये, काविध दुख तूं हिय मँह पाये ॥
कही सिया सुन वृत्त हमारो, देवर रणमँह जाय पधारो ।
सिंहनाद सुन पियहु सिधारे, तबही ये ढिग आय हमारे ॥

दोहा-लख इकली मोहि हर लई, रावण ओर बताय ।
मो बिन पिय ना रह सकै, तँह पै वेग पठाय ॥
यों कह रुदनी बिलपतहिं, को कर सकै बखान ।
जो भोगै, तिहिं लख परै, या जानें भगवान ॥

रुदनत विलपत याह निहारी, ये रावण ढिग आय उचारी ।
कीन्ह नाथ, कर्त्तव्य विहीना, ना शोभै, परतिय हर लीना ॥
अग्नि ज्वाल सम लखहु तताई, लखहु भुजंगिनि जिया नशाई ।
कीर्तिलता मुरझाये यासे, यशहू नाशै, सेये तासे ॥

दोहा-आप महेश्वर खगपती, मर्यादा करतार ।
तुअ आदर्शहिं देखकें, चलत सकल संसार ॥
जरत अँगारा परतिया, को हिय लेय लगाय ।
या भव परभव दुख लहै, यश रवि को ग्रस जाय ॥

यदि अन्याय नृपति ही सेवै, का जनता को शिक्षा देवै ।
न्याय नीति से यो जग सोहै, या बिन जीना मरण भलो है ॥
आप पूर्वमँह मोहि उचारों, जताव नितही कुशल हमारो ।
यातें नाथ हमारी मानो, पठाव याको सुख तब जानो ॥

दोहा—श्रवत विभीषण के वयन, रावण हिय रिस छाय।
कह तब यों अकुलीन वच, ना यह परहिं कहाय॥
तीन खंड की वस्तु मम, ताका हूं मैं स्वामि।
वे ना पर कहला सकें, ना वर्जन का काम॥

यों कह द्रुत ही वात उड़ावै, विन प्रसंग की वात उठावै।
सुन लख सबहिं सभा के लोका, ह्वै विस्मित ना मानें रोका॥
जब नृपहू या विधहिं उचारै, किम जनता मर्यादा धारै।
हिय विवेकगत, ह्वै ये मोही, सारी सुध बुध याने खोई॥

दोहा—श्री जिनध्वनि तो यह कहै, कुशलाकुशल विचार।
प्रातः उठके प्रथम ही, करो यही निरधार॥
जब नृपहू अघमग चलै, जनता हू गह पाथ।
मंत्री हू ने वहु कही, नृप को नयकर माथ॥

पै रावण चित हुआ मलीना, कछुन गिनै कुलीन अकुलीना।
तब को उचित न्याय की मानें, काह नीति की रीति पिछानें॥
हुई सभा चित्राम समाना, करै दशानन अघ मनमाना।
ना मानें तो का समझायें, साध मौन ना कछू उचायें॥

दोहा—सर्व सभायुत वेग ही, किय रावण प्रस्थान।
चित चञ्चल खग नयन सम, आया अपने थान॥
वहु आडम्बर सँग चलै, तऊ हिये मँह शून।
ह्वै सब हर्षविलीन हिय, मनु चैतन्य विहून॥

थान आइके हुक्म लगाया, प्रमदा वनमँह सीय पठाया।
तरु अशोकतल राखी वाको, बीतै समय दुःखमय याको॥
दासी दास अनेक पठावै, भेजे व्यञ्जन ताहि रिझावै।
पठाय दूती, वाहू हारी, वाहि ओर ना सीय निहारी॥

दोहा–अवै न देखे वस्तु कुछ, काविध चालै मंत्र।
होवै व्याधि असाध जिम, चलै न कछुहू तंत्र॥
या अभव्य वह मुक्तिपद, करै बहुत ही यत्न।
साध्य न होवै काहुविध, त्यों अप्राप्य सियरत्न॥

पुन पुन दूती पठाय लेवै, नाना भांति प्रलोभन देवै।
दूती आय सिया से बोलै, जा ना देखै ना मुख खोलै॥
कहै अवै, वश चालै तापै, अवै न देखै चालै कापै।
खान पान हू सब तज डाले, चलै न डोलै, ना तन हाले॥

दोहा–आय लौट दूती कहै, सुनहु खगन के राय।
वह देवी या मनुजिनी, कछू समझ ना आय॥
खान पान हू तज दियो, बैठी जिम चित्राम।
अस्थिमात्र अब शेष रह, सूख गया तन चाम॥

हुये प्रयत्न सबहिं मम खाली, वासे मेरी एक न चाली।
सुन रावण, हिय चिन्ता धारी, अतिही दीरघ सांस निसारी॥
हृदय दग्ध है, सूखो चामा, अब न सुहावैं, निज की भामा।
मिलै न चैन क्षणहु हिय मांही, यह काहु से बोलै नांही॥

दोहा—क्षण बैठे क्षण उठ चलै, पुन क्षण हाय उचार।
अश्रुधार नयनन वहै, मनु झिर स्रोत अपार॥
त्रिखंडनृप जीते सकल, यों रावण वलवन्त।
काम जीतनो कठिन लख, रुदनें जिहिं ना अन्त॥

इन्द्रसारिखे जीते नामी, ऐसा रावण अतिबल स्वामी।
गजमद टारन शक्ती धारै, पकड़ सिंह को तुरत पछारै॥
काम जीतनें समरथ नांही, अति ही शोकै नित हिय मांही।
हा सिय कह, पुन पुनहु पुकारै, बार बार सिय मंत्र उचारै॥

दोहा—लखी अवस्था भूप की, विज्ञ विभीषण भाय।
लीन्हें सचिव बुलाय सब, तिनसों मंत्र रचाय॥
भूपति हित चिन्तन करहु, बनें यथाविध बात।
सबमिल मंत्र विचार लो, टरे सकल उत्पात॥

तभी सचिव इक वयन उचारा, खरदूषण, लक्ष्मण ने मारा।
श्याल विराधित तसु बल पाके, हुआ सिंह, तिहिं हेत जनाके॥
कपिवंशिन का चाल निरालो, उन हिय पता न अब तक चालो।
चितमँह कछु, कछु ऊपर भाखें, सर्पसमान जीभ द्वय राखें॥

दोहा—नर्म बाहरें, घट जहर, इन बल झूंठो जान।
भूपति की है जा दशा, सब विध विगड़ी बान॥
याविध सुन दूजो कहै, खरदूषण मृत होय।
बुन्द घटै यदि सिन्धु मँह, कमती लखै न कोय॥

का कमती, रावण कें आई, जोहि कहाय त्रिखंडीराई।
चन्द्रहास हू लच्मण पाया, तासें मिला विराधित राया ॥
तो का स्वामी हममँह आई, जो विगड़न की वात कहाई।
वन का आश्रय केहरि लेवै, तउ दावानल जराय देवै ॥

दोहा—याविध दूजे ने कहा, सुन तीजा उच्चार।
इमहिं प्रयोजन ना सधै, अल्प अती का सार ॥
हम ऊंचे, पर हीन हैं, होय न यों कल्यान।
पावक कणहू वन दहै, समयगती वलवान ॥

अश्वग्रीव ह्वै अति वलधारी, लघु त्रिपृष्ट ने ग्रीव उतारी।
यातें हित की वात विचारो, अरि का इतै प्रवेश निवारो ॥
ऐसी लंका अगम्य कीजे, सिय की सुध ना जानें दीजे।
वशमँह सिया विवश हो जावै, वांछित चाह भूप हू पावै ॥

दोहा—यत्न किये तें सिद्ध हो, नागिन, हठी, कपूत।
मंत्र मांहि अतिशक्ति जनु, वशीहोत वड़ भूत ॥
करत घात विश्वास जे, सव कपिवंशी भूप।
तिनकों अग्रज राख ल्यो, मनु पट को अँधकूप ॥

यदि ये ना, नू, करना चायें, तत्त्वण ताका फलहू पायें।
सियकी सुध, जव राम न पावै, तत्त्वण अपना प्रान गमावै ॥
मुये, राम लच्मण ना जीवै, वा विन सुधा, लखण ना पीवै।
याकी वात सवै मन भाई, सर्वश्रेष्ठतम हितकर पाई ॥

दोहा—रचा विभीषण यंत्र तब, अधः ऊर्ध्व फैलाय।
अगम्य लंका कर धरी, चित की शल्य मिटाय॥
स्वारथ को संसार यह, तऊ दुखी चित होय।
"नायक" रमत स्वरूप नित, सुख अविनश्वर जोय॥

॥ इति चतुर्थः परिच्छेदः समाप्तः॥

अथ श्री रामचन्द्र जी के द्वारा सुग्रीव महाराज की विपत्ति का निवारण

वीरछन्द—

किहकंधानगरी का अधिपति, महराजा सुग्रीव कहाय।
तासम कपटरूपधर कोऊ, याके गृहमांही प्रविशाय॥
कर न सकै, या निर्णय कोउ नर, कौन सांच को माया कीन।
महा दुखी सुग्रीव होय तब, निर्णय अर्थ भ्रमत, ह्वै दीन॥

दोहा—खरदूषण से आश धर, चला तास के पास।
लखै मृतक सेना पड़ी, तब यह हुआ निरास॥
विस्मित ह्वै पृच्छत भयो, कौन रचा रण खेत।
खरदूषण ढिग आय ये, दुःख निवारन हेत॥

तबहिं कोउ ने उत्तर दीन्हा, खरदूषण ने परभव लीन्हा।
सुन सुग्रीव महा दुख पाया, निर्णय हेत आस धर आया॥
दुहितावर हनुमन्त बुलायो, वाहू सम लख विस्मय पायो।
वहुड़े कह कर निजपुर मांही, हमसे, निर्णय होवै नांही॥

दोहा—यदि रावण ढिग जाँव मैं, नांहि यथार्थ लखाय।
कदै मोहि कों हन धरै, तो अनर्थ हो जाय॥
है वह परतिय लम्पटी, रूपवती तिय मोर।
तदि विश्वास न ऊपजै, व्यभिचारी, दुठ, चोर॥

व्यभिचारी व्यभिचार विचारै, हिरदय मांहि विवेक विसारै।
वाकी सब कोउ शंका खावै, धर्म, पुण्य, यश, कीर्ति गमावै॥
वाका हू अति हिरदय कांपै, निशदिन हियमँह चिन्ता व्यापै।
काम बाणसम हिरदय वेधै, या कटारसम हिरदय छेदै॥

दोहा—कामी नर प्रति भूलहू, मन नांही पतियाय।
को जानें किहिं समय वह, अपनो शस्त्र चलाय॥
मंत्र, दोष, अपमान, धन, दान, पुण्य, मनदाह।
कामी सें बतलाय तो, उन्टी हानि लहाय॥

तब चितमँह इक सूझ सुहाई, गह, जिन हन खरदूषण राई।
अब तो शरण वाहि के जावूं, तदि मैं निर्णय अवश्य पावूं॥
मम दुख मेंटन समरथ वोई, और दूसरो दिखै न कोई।
वाकी तिय भी कोउ हर लीन्ही, विपति एकसम विधि ने दीन्ही॥

दोहा—मोर अछत प्रविशा कोऊ, मेरे गृहमें आय।
तसु पत्नी भी कोउ हरी, इकसमान दुख पाय॥
दुखियन की घनि प्रीति हो, जानें अपुन समान।
फटि न बिवांई पैर मँह, लखै न पीर अजान॥

जिमि वंध्या ना सुत को जावै, ना समझै का पीर कहावै।
यातें समगति मोरी वाकी, गहूँ शरण द्रुत अब मैं ताकी ॥
यों विचारतइ दूत पठाया, नृपति विराधित के ढिग आया।
स्वामी वृत्त सुना सब दीन्हा, श्रवत विराधित चिन्तन कीन्हा ॥

दोहा–महपुरुषन का शरण गह, पूज्य पणा मैं पांव।
महराजा सुग्रीव से, पूंछै मेरा ठांव ॥
पुष्प संग कीटक जिमहु, महप्रभु शिर चढ़ जाय।
प्रतिमा पूजत सकल जग, मन्त्र युक्त पधराय ॥

मन्त्र प्रतिष्ठित प्रतिमा सेवै, आराधत ही सुख को देवै।
बांस मीसरी संग गहे तें, विकै एकसम संग भये तें ॥
सज्जन संगति गुण उपजावै, जगदुख त्याग अमर पद पावै।
राम लखण की संगति कीन्ही, मैं भी पूज्य प्रतिष्ठा लीन्ही ॥

दोहा–बाजें वाद्य अपार मनु, घन गर्जत नियराय।
श्रवत भयंकर ध्वनि तबहिं, लक्ष्मण हिय शंकाय ॥
प्रश्न विराधित प्रति कियो, होय शब्द क्या वात !
वह कह ये सुग्रीव के, सैन्य वाद्य घहरात ॥

कपिवंशिन का है यह स्वामी, खग सुग्रीव महाबल धामी।
जनु किहकंधा नगरी ताकी, महत प्रतिष्ठा जगमँह याकी ॥
रावण वालि वृतान्त बताया, वालि अनुज सुग्रीव कहाया।
रूपवती तिय प्रसिध सु तारा, तासम जगमँह नांही दारा ॥

दोहा—ताहि समय प्रविशा ढिगैं, सुग्रीवहु महराज ।
उठ राघव यासें मिले, भैंटे नर खगराज ॥
निरख राम की छवि रुचिर, हिय पंकज विकसाय ।
चिन्तत रविसम राम मिल, दुखतम ठहर न पाय ॥

मिल भेंटे हिय आनँद धारा, किय सम्भाषण प्रेम प्रचारा ।
हुते सचिव सुग्रीवहि संगें, रामथुती कर धरें उमंगें ॥
पुन स्वामी का वृत्त बताये, या कारण तुअ ढिगमँह आये ।
किहकंधा के हैं ये स्वामी, खगपतियन मँह हैं ये नामी ॥

दोहा—महाबली सुग्रीव यह, सज्जन गुणी कहाय ।
कपट वेश धर खग कोउ, प्रविशा गृह मँह आय ॥
बना चहत नृप तिय हरन, तासम चतुर न कोय ।
तिहिं काढ़ो तुम हे प्रभो, सुखी सबहिन मन होय ॥

श्रवत राम मन मांहि विचारा, है मोतें ये दुखी अपारा ।
देखत हू कोह गृह मँह पैठे, आह विपति याको घर बैठे ॥
शक्ति नांहि अरि देय निकारे, यासे आया शरण हमारे ।
रामसचिव से वयन उचारा, पैसा कैसे अरी तिहारा ॥

दोहा—श्रवत सचिव ने वृत्त कह, तिय पै मोहित होय ।
प्रविशा जब रनवास मँह, तिय ने निरखा वोय ॥
चालढाल से ना छिपा, यद्यपि छद्म रचाय ।
खुला भेद ये छद्म रच, नृप का वेष बनाय ॥

वेग भटन को ढिगै बुलाई, कपटवेष का रहस जताई।
बैठा वह आसन पै जाके, हिय मँह भय ना व्यापै ताके॥
नृपसम रूप लखै सब कोई, सांच झूठ ना निर्णय होई।
सबहिन चित्त उदासी छाई, निर्णय करन बुद्धि चकराई॥

दोहा—आये जब रनवास ये, महराजा सुग्रीव।
ह्वै विस्मितहिं उदासि लख, छाई सबहिन अतीव॥
चिन्तें सुत प्रस्थान किय, या कोउ मुनिपद लीन।
परम हितू तिहिं जानकें, अतिदुख सबहिन कीन॥

याविध संशय हियमँह लेखा, प्रविशे महलन ताको देखा।
समतर रूप कछू ना बाकी, मिली जोड़ सब मेरी बाकी॥
हार मनोहर सुन्दर काया, होकर निर्भय कीन्ही माया।
यों लख गर्जा अति रिसयाके, वह हू गर्जा ढिगमँह आके॥

दोहा—लखा सचिव, दोउ गर्जते, हैं दोऊ समतर रूप।
को यामें माया रची, को है सांचा भूप॥
दुविधत वर्ज्या दुहुन को, मती मँचावो रार।
ह्वै निर्णय तब देख हैं, अभि रहो न्यारा न्यार॥

सब मिल मंत्र विचारा ताका, कैसे निर्णय होवै याका।
कौन सांच को झूंठ कहाया, समतर रूप दुहुन ने पाया॥
यातें दोउ रनवास न जावें, जबतक निर्णय ना कर पावें।
जिय आभूषण शील कहावै, यामँह दोष लगन ना पावै॥

दोहा—काको अब विश्वास गह, दुहु ही असल दिखांय।
या पुन नकली हैं दुहू, कैसे निर्णय लांय॥
बाल, वृद्ध, तिय, कुट्टिनी, गणिका, चुगल, लबार।
द्यूत, मद्य, परतिय रमत, ये ना सत्य उचार॥

आया अंगद असली पच्छा, लेय सप्त अक्षौहणि कच्छा।
सप्त बाहि को सैन्य दिवाया, पुत्र अंग, बानें अपनाया॥
याविध कीन्हें न्यारे न्यारे, बनें राज के दो हकदारे।
याके बिना और वश नांही, ऐसो समझ सभी मन मांही॥

दोहा—उत्तरदिशि में ये रहें, वाको दच्छिण दीन।
बालि तनय यों देखकें, अटल प्रतिज्ञा कीन॥
दोउ मेंसे कोउ जाय यदि, महल सुतारा पास।
ताका मैं करहों निधन, सबमँह यों परकाश॥

असली को, बहु दुःख सताये, राजपाट तिय सबहु गमाये।
हनूमान ढिग जाय पुकारे, वे भी आय देख कर हारे॥
नखसिख एकरूप सम दोई, हमसे निर्णय या ना होई।
पुन खरदूषण के ढिग आये, सुन लच्छमण से निधन लहाये॥

दोहा—सुनतइ, लग हिय वज्र सम, काकी धारों आस।
जहां जात, ते खग सकल, लौटत, होय निरास॥
यातें आया. आप ढिग, आपहु अपना लेव।
विरद निवाहो आपना, तिय मिलाप कर देव॥

श्रवत वृत्त सब राघव याका, समझा, मम दुख समतर याका।
यदि मैं याकी प्रिया मिलावूं, तदि सियकीसुध, मैं भी पावूं॥
बिना किये, को, काकी मानें, हम परदेशी, को पहिचानें।
काज सरे पै, सुध ला देहै, यही प्रतिज्ञा योभी लेहै॥

दोहा-खोज लगाये पर यदी, सिय की सुध ना पांव।
तो निश्चल मन होयकें, तुरत मुनी हो जांव॥
आतमसुख साधन करूं, तज, जगरमणी आस।
बरहों शिवरमणी रुचिर, हो वियोग ना जास॥

चिन्त्यत, राघव वचन उचारा, हुआ मित्र सुग्रीव हमारा।
सारी विपति हरों मैं तोरी, सिय सुध लावन मानो मोरी॥
काज भयो तुअ, पुन या कीजो, सियसुध की, ना भुलाय दीजो।
याविध "वचनबद्ध" यदि होवो, तदि अपना दुख सारा खोवो॥

दोहा-सुन सुग्रीवहु कह इमहिं, कार्य भये, सुध लांव।
नांहि लांव दिन सप्त मँह, अग्नी मँह जर जांव॥
सुन राघव सुग्रीव वच, हर्ष हिये न समाय।
कीन्ह प्रतिज्ञा दुहुन नें, चैत्यालयमँह जाय॥

मित्रपनामँह भेद न पाड़ें, कीन्ह प्रतिज्ञा नांहि उपाड़ें।
बैठ विमान, गमन नभ कीन्हा, सबहिन हर्ष चित्तमँह लीन्हा॥
आये निकट नगर किहकंधा, भेज वृत्त, किय दूत प्रबंधा।
कछू न उत्तर दीन्हा याने, बिना कहे, लौटाया ताने॥

दोहा—मायामइ सुग्रीव तब, आया सैन्य सजाय।
असल गया सन्मुख तबहिं, रण घनघोर मँचाय॥
घाल दई याने गदा, गिरा असल भू मांहि।
वह प्रमुदित पुरमँह गयो, शंकै चितमँह नांहि॥

रही न सुध बुध भूमँह याके, उठाय लीन्हा सचिवन आके।
ह्वै सचेत, राघव प्रति बोला, काह नाथ, तुम रिपु को छोड़ा॥
श्रवत राम, मृदु वचन उचारे, को रिपु, समझ न आय हमारे।
बिन पहिचान, कहो किहिं मारों, हो अनर्थ, यदि तोहि सँहारों॥

दोहा—वचन बद्ध हम तुम भये, श्रीजिनभवन मँझार।
कल बंधन कर रख तुझे, रिपु निर्बंध निहार॥
अगले दिवस बुलाय पुन, वह निशंको आय।
गर्जा रणमँह आय कर, मारामार मँचाय॥

ताहि समय, राघव चढ़ आगे, विद्या बल, तब याका भागे।
विद्या कहे वेग ही यासों, जोर न चालै, भग रहि जासों॥
महापुरुष ये पदवीधारी, करन न सन्मुख शक्ति हमारी।
यों कह विद्या, भागन लागी, तऊ सुबुध ना, याके जागी॥

दोहा—रूप पलटनी यों कहै, सुनहु विनय प्रभु मोर।
नारायण बलभद्र पै, चलै न मेरा जोर॥
विद्या याको तज गई, कपट रूप विघटाय।
दिखै सबहिं को या समय, साहसगत खगराय॥

श्वेत कंचुली अहि पै छावै, रूप कृष्ण ना जानो जावै।
नशै कंचुली तब दिख कारो, ताविध असल रूप यहु धारो ॥
तब या पत्त सबहिं ने छांड़ा, रहा स्वयं, हुव शून्य अखाड़ा।
तदपि न ये निज हिम्मत हारै, सबहिं खगन को मार पछारै ॥

दोहा—महाबली या इकहि ने, सबही दिये भगाय।
पवन उड़ावे धूल जिमि, केहरि सम अरीय ॥
यों लख राघव ने तबहिं, तज शर मेघ समान।
श्रावण भादों वृष्टि सम, दीन्हा मंडप तान ॥

राम पराक्रम बातें भारी, व्यर्थ हुई तसु ताकत सारी।
राघव ने तसु बखतर तोड़ा, तीक्ष्ण बाण हन शिरको फोड़ा॥
जर्जर चलनी सम कर डारो, लेय, कुकृत फल, कुगति सिधारो।
राघव ढिग कपिवंशी आके, जयध्वनि उचरें सब शिर नाके॥

दोहा—विनवत लाये नगर मँह, सादर स्वागत कीन।
मन वच काया से सभी, हुये भक्ति लवलीन ॥
प्रेम मगन सुग्रीव पुन, निज महलन लें आय।
विशद वाटिका के विषें, सादर दिय ठहराय ॥

चैत्यालयमँह सब मिल आये, दर्श पूजकर थुती रचाये।
तोसम हितकर और न दूजा, विधिवश हमें न अबतक सूझा ॥
नशा मोह तम प्रगटा भानू, याविध प्रभो तुम्हें अब जानू।
बूड़त नैया पार उतारो, ह्वै खेवटिया खेय निसारो ॥

दोहा—यों थुति कर निकसे तबहिं, राम लखण दुहु वीर।
बैठे आसन के विषें, रामचन्द्र गुणधीर॥
लाया निज कन्यान को, त्रयदश सुरी समान।
करी विनय सुग्रीव ने, परणि राम गुणखान॥

प्रण कीन्हा कन्यन मन मांहीं, वरें आपको दूजो नांहीं।
यों कह स्वीकृति आश लगाई, श्रवणात राघव छवि मुस्क्याई॥
मुस्क्यत लख समझे स्वीकारा, परिणयसाज सजा द्रुत सारा।
घर वधु निरख निरख सब मोहें, इक से इक वे वनिता सोहें॥

दोहा—बिछुड़ी बहुतक समय की, प्रिया सुतारहि पाय।
मगन भया सुग्रीवनृप, सुध ल्यावन बिसराय॥
कीन्ह प्रतिज्ञा राम से, अवधि सप्त दिन लीन।
ना ल्याऊं तो अग्निमँह, प्रविशों निश्चय कीन॥
स्वारथ का सन्सार जनु, स्वार्थ सधे सब भूल।
"नायक" रमत स्वरूप नित, नश विभाव प्रतिकूल॥

इति पञ्चमः परिच्छेदः समाप्तः

लक्ष्मण द्वारा कोटिशिला उठावने का वर्णन

वीर छंद—

सुन्दर वस्त्राभूषण सजि सजि, सुरभित सुमन माल गल मेलि।
मन्दहास निरखें कटाक्ष दें, करतीं विविध कामरस केलि॥
याविध सभी रिझावन चाहें, कर कर थकीं अनेक उपाय।
डिगा सकीं ना मन सुमेर वे, रही राम हिय सिय छवि छाय॥

दोहा—उन सबको लख राम तब, कहे बयन हुलसाय।
जनकसुते, बोलहु भला, तुव मन कहा समाय॥
पुन समझे ये ना सिया, तब विलपत कह वैन।
कोउ लखी सिय कँह गई, पिकबयनी मृगनैन॥

नाना विकलप मनमँह छाये, चकवा चकवी ढिगै लखाये।
तिनसे कह सिय तुमहु बतावो, सिय से वार्तालाप करावो॥
शशि सुषमा शीतल सुखकारी, पै मो हृदय जलावनहारी।
पवन प्रसाद लता लहराई, मनो सीय साड़ी फहराई॥

दोहा—अति विलम्ब लख राम हिय, व्याकुलता रहि छाय।
ना आया सुग्रीव इत, सिय की सुध ना पाय॥
साय मुई या ना लखी, या निचिन्त्य मन होय।
राज्य मिलो, तियहू मिली, "बच्चन" ध्यान दिय खोय॥

होय मगन निज सुखमँह फूला, पर के दुख की सुधहू भूला।
चिन्त्यत अश्रुहिं लोचन ढाये, सियप्रति श्रद्धांजली चढ़ाये ॥
लख लक्ष्मण हिय अतिरिस छाई, भृकुटि चढ़ी नयनन अरुणाई।
गर्जत बोला असिहिं उठाके, क्यों सुध भूला, मारों जाके ॥

दोहा—वधहिं करन सुग्रीव हित, गह तीक्ष्ण तलवार।
कुपित काल सम लखणतँह, भासत अति भयकार ॥
प्रविश महल तिहिं उचर इमि, रे लवार पापिष्ट।
तिष्ठत बेसुध होय तूं, भई बुद्धि तुव भृष्ट ॥

विषय लुब्ध ह्वै, सुध विसराया, अष्टम चन्द्र तोहि अब छाया।
रे खग वायस बुद्धि तिहारी, दुष्ट कृतघ्नी पापाचारी ॥
जँहपै तोरिपु राम पठाया, तँह का न्योता तोकों आया।
लख सुग्रीव हिया अति कांपा, हाथ जोड़ शिर भूमँह थापा ॥

दोहा—विनत वदन कह याविधे, हूं शठ निपट अजान।
भूल भई मेरी घनी, क्षमो प्रभो गुणवान ॥
सिय की सुध द्रुत लाव मैं, अब न भूल मम होय।
सेवक अपनो जानकें, कृपासिन्धु क्षम मोय ॥

उतार आर्ती तियने लीन्ही, पति की भिक्षा यांचन कीन्ही।
अर्घपाद दै, मस्तक नाई, वदन कंपत, हियमँह अकुलाई ॥
यों लख, लखणधैर्य हिय धारो, द्रुत ही कोप हिये तें छारो।
यही कहाई सज्जनताई, द्रवी भये, द्रुत रिस विघटाई ॥

दोहा—लखण दिखाये सुध जबहिं, सुग्रीवहिं सुध आय।
तबहिं कही श्रेणिक प्रती, श्रीगौतम गणराय॥
ज्यों निशिमँह मुनि एन लख, ताहि जतावा दीन्ह।
रमण चहत तुम माय सों, वानें उत्पन कीन्ह॥

यों सुन, श्रेणिक विस्मय पाके, पूछा वृत्त कहो अब वाके।
लख अनुचित, मुनि बोले जाको, रहस्य मांका खोले ताको॥
सुन गणधर, वच अमिय उचारा, सुनहु नृपति, तसु रहस्य सारा।
निशिमँह, मुनिहू बोले कासें, अघ संबंध लखाये तासें॥

दोहा—नगर कोंच मँह यत्त नृप, यत्तदत्त सुत नाम।
नगर बाह्य इक तिय लखत, अतिहि सताया काम॥
चला निशा मँह रमणहित, एन मुनी दिय रोक।
प्रथम यहू समझा नहीं, कोनें मोकें टोक॥

चपला चमकी मुनि को देखा, रोधन का, अति अचरज लेखा।
विनत कहै, प्रभु मोहि बतावहु, का कारण, मोहि रोक लगावहु॥
"वचनगुप्ति" मुनि वचकह टाली, पुर बाहर तुम, माय लखा ली।
ताहि रमणहित जावत देखो, बहु अनरथ, मैं हिय मँह लेखो॥

दोहा—यातें रोक लगाइ तुहि, मती करै ये काम।
नर्क निगोदन दुख लहै, सहसा कीन्ह विराम॥
यत्तदत्त याविध श्रवत, मुनि चरणन, शिर नाय।
कहै, प्रभो, खोलो रहस, कैसे मेरी माय॥

श्री मुनि ने यों वृत्त बताया, मृतकावतस नगर कहलाया।
बस, तँह वणिक कर्णिका नामा, ताकी रुचिर सुभग श्री भामा॥
बन्धुदत्त सुत, तिय सुखदाई, नाम मित्रवति गर्भ लहाई।
बन्धुदत्त परदेस सिधारा, ना आया, बहु काल मँझारा॥

दोहा—वधु का गर्भ लखायकें, सासू संशय कीन।
यातें याहि निकास दिय, ना परतीती लीन॥
चली वधू निज मायके, कौंच नगर ढिग आय।
हुआ प्रसव सुत जाइ ये, दूजा नांहि सहाय॥

मलिन वस्त्र प्रच्छालन धाई, सरके तटमँह ये जब आई।
रत्न कँवल मँह सुतहिं लपेटो, भगा श्वान लै मार झपेटो॥
लख सुन्दर सुत कोय छुड़ाया, नृपति यक्ष को भेंटन आया।
सुन्दर शिशु लख नृप रख नाखा, पाला पोपा सुतवत राखा॥

दोहा—यक्षदत्त तसु नाम रख, राजन मन हरपाय।
मां निकसी सर से जबहिं, तँहपै सुत न लखाय॥
विलपति किलपति बहु विधि, देव पुजारी देख।
राखी तिहिं देवल ढिगें, संगी बहिन सम लेख॥

धर सन्तोष रही सुख पाई, तिहिं लख तोहि कुदृष्टि समाई।
वह माता तूं पुत्र कहाये, यदि तो चित विश्वास न आये॥
रत्न कँवल देखहु घर जाके, जाहि रखी मां तुहि लिपटाके।
जाय पिता से वृत्त उचारो, करके निर्णय चित अवधारो॥

दोहा—सुन मुनि से यों वृत्त सब, आय पिता की ठौर।
खडग काढ़ पूंछी तुरत, बताव उत्पति मोर॥
कँह जन्मा कैसे लहा, सभी बताओ मोय।
सुन नृप ने कम्बल रखा, यामँह पाया तोय॥

यक्षदत्त हिय निश्चय आया, आय माय ढिग शीस झुकाया।
मुनिपद वंद्य थुती बहु कीन्हे, मोहि कुगति से बचाय लीन्हे॥
गणधर कह्यो सहित विस्तारा, सिय सुध वच सुग्रीव चितारा।
जाविध मुनि ने माय बताई, तिमि लक्ष्मण इहिं सुध चितराई॥

दोहा—लखण सहित सुग्रीव भी, रामचन्द्र ढिग आय।
विनत वदन मांगी क्षमा, जिमहिं शिष्य नय जाय॥
पुन सामन्तन से तुरत, दिय आज्ञा द्रुत जाव।
हेरो दश दिश महि गगन, खोज सीय ले आव॥

पुन मनमँह सुग्रीव विचारा, मम किय राम परम उपकारा।
प्रिया मिलाई राज्य दिलाया, नहिं उदार इन सम कोउ पाया॥
कीन्ह वचन, सुध लाव सियाकी, यातें द्रुत सुध लाहों ताकी।
याविध चिन्त्य स्वयं ही चाला, बहु प्रयत्न कर खोज उताला॥

दोहा—खगनृप परतिय लम्पटी, हेरे सबके थान।
ज्योतिष चक्र उलंघ के, गवना तास विमान॥
उदधि मध्य इक द्वीप लख, उतरा तँह सुग्रीव।
रत्नजटी देखा इसे, कम्पित हुआ अतीव।

दोहा-रत्नजटी निजमनअनुमानी, लंकेश्वर मोहि मारन ठानी।
यातें याको यँह पहुँचाया, डूबों जलधि न और उपाया॥
प्रथमहिं याने विद्या छीन्ही, सभी भांति मम दुर्गति कीन्ही।
खबर न दे सकया निजस्वामी, हरी सीय खग रावण नामी॥

दोहा-चिन्तत याविध मनहिंमन, सुग्रीवहु ढिग आय।
नभ मँह करत उदोत इमि, यथा सूर्य प्रसराय॥
धूल धूसरित अंग लख, प्रश्न दयायुत कीन।
तुम विद्याधर बल प्रवर, इत गिर क्यों दुखलीन॥

रत्नजटी सुन भयवश कांपा, याविध लख सुग्रीवहु भांपा।
दिय धीरज का तुम पर बीता, का विध ह्वै विद्या तें रीता॥
सुन याने मनमांहि विचारी, जे ना जानें कथा हमारी।
तब कह मैं निज वृत्त सुनावूं, बीती मोपे ताहि बतावूं॥

दोहा-मैं निज स्वामी कार्य कर, गवनत हिय सुख पाय।
देखा रावण को तबहिं, हरे सियहिं लिय जाय॥
मैं लख तासे युद्ध किय, वह किय विद्या छेद।
आय परो या द्वीप मँह, जानों यों मम भेद॥

पुण्य उदय तुव दर्शन पाया, जी में जी अब मेरे आया।
श्रवत वचत यों रत्नजटी के, हुये मुदित सुध पाई नीके॥
लेय संग सुग्रीवहु याको, आय राम ढिग, लाया ताको।
सविनय चरणन शीश झुकाया, कही नाथ मैं सिय सुध लाया॥

दोहा—चौंक उठी सब मण्डली, सुध सुग्रीव सुनाय।
यही बात थी अतिकठिन, ताको सहजहिं पाय॥
तबहिं कहा सुग्रीव ने, रत्नजटी कह वृत्त।
लखी सिया कोनें हरी, तुम देखी अनचित्त॥

सविनय रत्नजटी शिर नाया, कहै सुनहु सब अरु रघुराया।
गवनत यान गगन मँह देखा, तँह सिय रुदनत अचरज लेखा॥
रावण को मैं शिक्षा दीन्ही, ना माना तब रिस चित लीन्ही।
ताहि जीतवे सक मैं नांही, बल अपार रावण तन मांही॥

दोहा—तीन खंड वसुधाधिपति, उठा लीन्ह कैलास।
इन्द्र सारिखे बांध लिय, को कह सक बल तास॥
बाहू मोपै कुपित ह्वै, मम विद्या हर लीन्ह।
पड़ा जलधि के द्वीप मँह, जीवन आशा कीन्ह॥

श्रवत राम सिय सुध बतलाई, प्रमुदित ताको हियहिं लगाई।
बारबार सिय की सुध पूंछै, वह हू लखी ताहि विध सूंचै॥
राघव सब से प्रश्न उचारा, कहो कहां सिय चोर सिधारा।
श्रवत सबहि निश्चल तन होये, ना हैं जागृत मानो सोये॥

दोहा—अभिप्राय सबका समझ, मन्ददृष्टि सूं हेर।
राघव प्रति कहि इक तबहिं, सुनहु नाथ मम टेर॥
जाहिं देखतहु विष चढ़े, को पुन परसै वाहि।
ताविध ताका कथन जनु, को समरथ कह ताहि॥

कहत सुनत मँह अतिभय धारू, पुन किम ताकी शक्ति उचारू।
अल्पशक्ति के हम सब स्वामी, वह सब खगप मांहि बलधामी ॥
यातें तुमहू, अब हठ छांरो, भली बुरी को नांहि विचारो।
यदि, सुनवे की चाह तिहारी, तब सुन ल्यो, वा विभूति सारी ॥

दोहा—राक्षसद्वीप समुद्र मँह, तँह त्रिकूट, इक शैल।
तास शिखर लंका बसै, ना भूमिज की गैल ॥
रत्नमई रचना रुचिर, मानो स्वर्ग बसाय।
दई हुती सुर इन्द्र ने, इनहि पूर्वजन पाय ॥

रत्नश्रवा त्रय पुत्र लहाये, रावण सब मँह बड़े कहाये।
हजारहों विद्या का स्वामी, त्रिखंड मांही बलधर नामी ॥
ताने ही कैलाश उठाया, कुम्भकर्णरु विभीषण भाया।
महाबली ये दोऊ जानो, दिपें दिवाकर समतर मानो ॥

दोहा—मेघनाद अरु इन्द्रजित, हैं सार्थक तिन नाम।
देव न सन्मुख टिक सकें, उभय पुत्र बलधाम ॥
धन, कन, कंचन सबहिं सुख, मिले सहज ही आन।
जगविजयी विक्रम प्रबल, ऐसा दशमुख जान ॥

तिहि चिन्तत, चित कप कप जावै, लखत चित्रपट, मन थरीवे।
बाके सन्मुख, टिकै न कोई, आवै सन्मुख, यमगति जोई ॥
बाकी कथा त्याग अब देवो, चाहो कुशल, नाम ना लेवो।
जामें सब जिय जीवन पावें, काह मृत्यु मुख, जबरन जावें ॥

दोहा—सुन खगपति के वचन इमि, गरजत लखण उचार।
करत वृथा परशंस तिहिं, चोर, छली, बटमार॥
महाबली यदि वह हुता, काहे चोरी कीन्ह।
सन्मुख आता हरण सिय, समभत वह बल लीन्ह॥

केवल सुध की थी कठिनाई, अब तो सिया समझ ल्यो आई।
अन्य कथा को अब ना चाहें, केवल येही एक निबाहें॥
श्रवत लखण वच, बोला वृद्धा, करो इमहिं, हो कारज सिद्धा।
बिना प्रयोजन हठ ना धारो, अपनो, सबको भलो विचारो।'

दोहा—होंय खगप कन्या रुचिर, तिन सँग रचो विवाह।
जीवन सुखद बिताव तुम, सब जीवन सुखदाय॥
विहँस राम बोले तबै, नांहि शची से काम।
कहहुँ सत्य मोहि चाहिये, इक सिय ही प्रियराम॥

यों सुन जाम्बूनदहु उचारा, सबमँह सीमित, है जगसारा।
बिन सीमित, वह हठी कहावै, सार अन्त माँह, कछू न पावै॥
इक हठ तो ऐसी कहलाई, केवल निज को हो दुखदाई।
कुइ इक हठ ऐसी कहलावै, जासें देश दुखो हो जावै॥

दोहा—सुनहु कथानक इक कहत, तुमसम, वाकी जान।
वेणा नामक ग्राम, तँह, विनयदत्त धनवान॥
विनयदत्त का मित्र इक, याकी तियको चाय।
कीन्ह कपट, वन ले गयो, बंधन कर, पुर आय॥

तरुशाखा से बांधा ताको, एक क्षुद्र नर लख लिय याको।
वेग ढिगै आ बंधन नाखा, विनयदत्त तिहिं गृह माँह राखा॥
तास पास इक चित्र मयूरी, चित्र मांहि सुन्दरता पूरी।
इकदिन पवन अधिकतर चाली, उड़ा चित्र आ नृपसुत थाली॥

दोहा-निरख कुँवर या चित्र को, उन्मत हुआ अजान।
रंच न ताको तजन चह, मानें अमिय समान॥
क्षुद्र तहां आग्रह करत, यांचत बारम्बार।
मोकों तो वहि चाहिये, मैं किय तुव उपकार॥

विनयदत्त सुन याकी बातें, कहै, चित्र मैं लांव कहां तें।
रत्नखचित मैं देवत तोकों, नृपति कुँवर से यांचन रोकों॥
महाहठी वह रंच न मानें, बार बार हठ अपनी ठानें।
इमि मूरख से का वश आये, पै तुम नाथ, समझ अति पाये॥

दोहा-सिय की हठ अब छांड़कें, सब पै करुणा लाव।
अपना प्रान बचाय अरु, सबके प्रान बचाव॥
सुन लच्मण ह्व यों कहा, ठीक न दिय दृष्टान्त।
सुनहु कहत दृष्टान्त जो, सुघटित हो दार्ष्टान्त॥

कुसुमनगर मँह प्रभव कहाया, पुण्योदय सुत पांच लहाया।
आत्मश्रेय लघु शुभ अवतारी, पै इहि निन्दा सबहिं उचारी॥
है उद्दण्डरु उद्यम हीना, मात पिता सुन निकास दीना।
मरण वांछकें वन मँह धाया, पुण्योदय तँह नृपसुत आया॥

दोहा–नृपसुत इहिं लख आकुलित, सदय कड़ा इक दीन्ह ।
मन्त्रशक्ति संयुक्त कह, मुदित होय या लीन ॥
समझायो याविध इसे, सब संकट विनशाय ।
आत्मश्रेय सुन हर्ष चित, लेकर निजगृह आय ॥

कार्य पुरै पै याको दीयो, तसु आग्रह वश यानें लीयो ।
दैवयोग से पुरनृप रानी, अहि ने काटा, सब मृत जानी ॥
लाय मसानहिं जारन याको, आत्मश्रेय ने लख लिय ताको ।
कड़ा मन्त्र का फेरो तापै, हुइ निर्विष, उठ बैठि तहां पै ॥

दोहा–चमत्कार याविध लखत, नृप हरखा मनमाय ।
सादर तसु सत्कार किय, दीन्ह द्रव्य अधिकाय ॥
आत्मश्रेय ह्वै अति सुखी, इक दिन सर पै आय ।
मेल्ह कड़ा सरतट विषैं, डुबकी आप लगाय ॥

सरतट विषैं गोह द्रुत आई, कड़ा लेय निज बिलै सिधाई ।
तरुतल बिला शिला तँह भारी, बैठी मानिन शब्द हुँकारी ॥
आत्मश्रेय जब तट पै आया, तबहिं कड़ा ना तहां लखाया ।
खोजा बहुत कहूं ना पाके, समझा ले गइ गोह उठाके ॥

दोहा–तुरत उपाड़ा तसु बिला, कड़ा आपना लीन ।
निकसी सम्पति बहु घनी, मुदित ताहि लइ छीन ॥
याविध जनु सुन ल्यो सकल, आत्मश्रेय हैं राम ।
सीय कड़ा, दशमुख गुहहिं, लंका बिला समान ॥

सुन सब, एक मतो तब लीना, कहें सुनहु यह निर्णय कीना।
अनन्तवीर्य मुनी इत आये, उनसे रावण प्रश्न उचाये॥
होवै काविध मृत्यु हमारी, सुन दशमुख से मुनी उचारी।
कोटिशिला जो भुजन उठाये, तासे मृत्यु निश्चयहि पाये॥

दोहा-सुन सबने अचरज लयो, कहें, असंभव बात।
कोटिशिला कापै उठै, यों बलिष्ठ धर गात॥
सुन लच्मण हर्षित हृदय, कहै, चलहु ता थान।
ताहि उठावूं निश्चयहिं, जनु लघु कुसुम समान॥

खगपति नरपति, सबही चाले, आये थानक तास उताले।
रजनी काली चादर ओढ़ें, तऊ उठावूं लच्मण बोलें॥
कोटिशिला रमणीय निहारी, नाये मस्तक सब बलधारी।
शस्त्र सुसज्जित तँह भट मेल्हे, कीन्ही अर्चा द्रव्य सु लेले॥

दोहा-दीन्ही तीन प्रदच्छिणा, सुमिर पञ्च नवकार।
सिद्धहिं, शीस झुकाय कर, उठाइ शिला सुखकार॥
शिला उठत ही गगन माँह, जय जय की ध्वनि छाय।
जनु त्रिखंड विजयी प्रवर, सुन, न देख, तिमि आय॥

देव दुंदुभी बजे नगारे, जयध्वनि सुर खग सकल उचारे।
सुमनवृष्टि देवों ने कीन्ही, निरख सबहि प्रमुदाई लीन्ही॥
लखण समान कोइ ना वीरा, दशमुख, मृत्यु लहै या तीरा।
होनहार हू टरै न टारे, सत्य लखा ज्यों मुनी उचारे।

दोहा—राज निकंटक होयगो, रवि शशि दुहुन समान ।
टरिहैं संकट, होयगी, जनता सुखी महान ॥
तीर्थ वंध पुन लौटकें, आये अपने ठांव ।
सोचें सबही मनहि मन, सिय लावन को दांव ॥

रावण ने कैलाश उठाया, विद्या, भुजबल सबहि लगाया ।
लक्ष्मण भुजबल शिला उठाई, इहि तुलना ना रावण पाई ॥
कोउ कहें द्रुत संधि करावो, काहे को संग्राम मँचावो ।
इनकी सिया इन्हीं को दीजे, काम बनें, सो विचार लीजे ॥

दोहा—जबहि सभा बैठी सबै, निज निज शीश झुकाय ।
तब राघव ने द्रुत कहा, अब क्यों विलम लगाय ॥
ह्वै है सिय दुक्खित अतिहि, जब से छूटा साथ ।
सुन सब, यों कंहने लगे, विनय सुनहु नरनाथ ॥

यही प्रयोजन सिय को लावें, या प्रण ठाना रार मँचावें ।
रण रचबो कछु, सहज न जानों, यातें बात हमारी मानों ॥
दूत पठाय ताहि समझावें, निज विवेक बल, सिय ले आवें ।
गतविवेक, सब काम विगारै, युतविवेक, सब काम सुधारै ॥

दोहा—मतो विचारो सबहि मिल, यही ठीक ठहराय ।
नांहि सार कछु रार मँह, अपना काम बनाय ॥
सचिव सयानो उचर पुन, लंका मांहि प्रवेश ।
सहज न जानो, कोट खिच, कीन्ह अगम लंकेश ॥

इतै न कोऊ इमहि दिखावै, यंत्र मांहि प्रवेश कर पावै।
तबहिं सचिव इक युक्ति सुझाये, पवनपूत समरथ, यदि जाये॥
श्रवत सबहिं अनुमोदन कीन्हें, दूत पठाय तास ढिग दीन्हें।
अनुपम युक्ति सबहिं मन भाई, पुण्योदय ने सूझ सुझाई॥

दोहा—है समरथ या पवनसुत, रावण को समझाय।
सिय को वापस ला सकत, बिनही समर मँचाय॥
याविध चिन्तत सकल खग, अति हरषे हिय मांहि।
मनहु रार अब मिट गई, प्रान जांयगे नांहि॥

परिणामन की गती निराली, होनहार सो टरै न टाली।
सिय को लखत कुदृष्टि समाई, बलात रावण मृत्यु बुलाई॥
प्रानन आहुति रावण देवै, राघव, राज्य सियाहू लेवै।
सहस अठारह घर मँह नारी, विषयन तृप्ति तऊ ना धारी॥

दोहा—धिक धिक पञ्च इन्द्रिन विषय, तिनमँह काम प्रधान।
नांहि फसै तसु जाल मँह, सो जानो बलवान॥
नर खग सुर तिर्यंच हू, याके वशमँह होय।
"नायक" रमें स्वरूप नित, डिगा सकै ना कोय॥

॥ इति षष्टमः परिच्छेदः समाप्तः॥

※ अब लंका की ओर हनुमान का गमन वर्णन ※

—वीर छन्द—

बैठ विमान चला नभ मारग, श्रीपुर नगर आय जब दूत।
निरख रुचिर जिन भवननपंकति, स्वर्गोपम रत्नन संयूत॥
प्रविशा मुदित नृपति महलनमँह, कह्यो आगमन, भीतर आय।
अनंगकुसमा से खरदूषण, पितु अरु भ्रृतका मरण सुनाय॥

दोहा—श्रवत निधन पितु अरु भ्रृतहिं, गिरी मूरछा खाय।
किय शीतल उपचार तब, हियहिं सचेती पाय॥
ताहि समय हनुमन्त हू, आये या ढिग मांहि।
सविनय पुन वर्णन कियो, कछुहु छिपाया नांहि॥

श्रवत वृत्त हनुमत रिसयाया, ताहि समय पुन दूत सुनाया।
हुते अतिहि सुग्रीव दुखारी, तास विपति ना कोय निवारी॥
छिप्यो आप से कछु भी नांही, जो दुख व्यापा, तसु हिय मांही।
विपति निवारक सूझ चितारी, राम शरण गहुँ तबहिं विचारी॥

दोहा—आय शरण, कहि राम से, हिय की व्यथा अतीव।
लाये किहकन्धाह उन्हें, नभ मारग सुग्रीव॥
प्रथम दिवस रणक्षेत्र मँह, भिड़े परस्पर आय।
नकली ने सुग्रीव को, दीन्हा भूमि गिराय॥

दूजे दिन पुन वुलाय ताको, हुवा युद्ध, राघव से वाको ।
जब राघव के सन्मुख आया, प्रगट भई तब असली काया ॥
चला न वल, राघव पै वाका, कीन्ह निधन, राघव ने ताका ।
याविध कपिन कलंक मिटाया, तिय मिलाप व्है, राज्य हुपाया ॥

दोहा–सुन हनुमत इमि दूत वच, हिये न हर्ष समाय ।
रघुपति वहु उपकार किय, किमि वदला दउँ चुकाय ॥
अयश उदधि डूबत हुता, कपि अधिपति सुग्रीव ।
ताहि उवारा हस्तगह, धर हिय प्रेम अतीव ॥

कीन्ह राम की विपुल प्रशंसा, मेंट कलंक, विमल किय वंशा ।
तात वृत्त सुन दूजी रानी, मनमँह फूली नांहि समानी ॥
द्वय रानिन तँह दुख सुख पाये, हनूमन्त मध्यस्थ कहाये ।
जा पितु मुवो ताहि दुख भारी, जापितु दुखनश, वा सुखधारी ॥

दोहा–खेदखिन्न हुइ थी तिया, वाको धीरज दीन ।
उमग उदधि सम पवनसुत, गमन तुरत ही कीन ॥
महा ऋद्धि वल विभवयुत, नृप समूह भी साथ ।
चले व्योम पथ जांय द्रुत, ढुरै छत्र इहिं माथ ॥

पुर ढिग पहुँचा दल वल सारा, हुई वाद्य ध्वनि तवहिं अपारा ।
लख सुग्रीव सुतावर आवा, कीन्ह महोत्सव नगर उछावा ॥
जिम घन सुनतइ हर्षित मोरा, मनु पियूप मिल, चन्द्र चकोरा ।
मुद सुग्रीव कीन्ह अगवानी, भेंटे हिलमिल, कह मृदुवानी ॥

दोहा—कार्य साधवे आय इत, पावन पवन सुपूत ।
जाय लंक सिय लावनें, बन रघुपति का दूत ॥
अन्य मांहि ना शक्ति इमि, जिमि सज्जत या मांहि ।
ये ही कार्य बनाय सक, दूजा समरथ नांहि ॥

यासम गुण या मांहि समानें, जन्मत शैल विनाशो यानें ।
को कहवे सक विक्रम याको, वसुन्धरा ना जाया ताको ॥
लख सुग्रीव हर्ष बहु पाया, शशि वारिधिसम हियउमगाया ।
प्रमुदित चित, किय उत्सव भारी, बहुविध नगरी रुचिर सँवारी ॥

दोहा—पुन हनुमत को संग लै, आय राम के थान ।
लख हनुमत श्रीराम छवि, दिपती सूर्य समान ॥
सुन्दर केश सुहावने, द्युति शरीर छिटकाय ।
सिय विन वदन मलीन इमि, रवि बिन कञ्ज मुरझाय ॥

राम लखण गुण कौन बखानें, इनके गुण इन मांहि समानें ।
रूप अलौकिक गुण बलधामा, लाजै कामदेव अभिरामा ॥
हर बलभद्र पदवी धारी, जीतें उपमा जगकी सारी ।
यहां प्रयोजन इतनो मानो, सर्व श्रेष्ठ भूतल मँह जानो ॥

दोहा—लखा आवता हनुमतहिं, रघुपति हुलसित होय ।
लिय लगाय पुलकत हृदय, हिल मिल भेंटे दोय ॥
मनहु इन्द्र असुरेन्द्र मिल, हर्ष हिये न समाय ।
सुजन परस्पर का मिलन, अमृतसम सुखदाय ॥

राघव ढिग, जब हनुमत आया, पड़ी कान्ति, चमकी तसु काया।
ह्वै तब वशीभूत मन याको, नाया शीस पतिहिं सीता को॥
यदपि बली हनुमन्त कहाया, तऊ प्रभावित मन निज पाया।
विनय युक्त तँह हनुमत तिष्ठे, सिंहासन पै राम प्रविष्टे॥

दोहा—नीलाम्बर अति सोहवै, पहिरैं सुन्दर हार।
मनु नक्षत्र युत, शशि दिपै, राघव, सभा मँझार॥
पीताम्बर द्युति लखण तन, दामिनि दमक समान।
खगपति सभा सुसज्ज तँह, शोभै श्री हनुमान॥

हनुमत चकित होय पुन हेरै, इकटक दृष्टि तनक ना फेरै।
प्रमुदित ह्वै मृदु वयन उचारा, हे प्रभु, याविध नीति मँझारा॥
करहू परोक्ष प्रशंसा जाकी, होवै शोभा जगमँह ताकी।
वशी होय, तुव पै मन मेरा, धरै न धीरज, स्तुतन तेरा॥

दोहा—सुनिहि परोक्ष, प्रत्यक्ष लख, शरणागत प्रतिपाल।
निष्कारण जगबन्धु तुम, सबकों करत निहाल॥
कह न सकत यश, सहस मुख, याविध अपरम्पार।
कपिवंशहिं उपकृत कियो, कुलकलंक निरवार॥

सीय स्वयंवर जनक रचाया, धनुष चढ़ाय प्रताप दिखाया।
लखा पराक्रम, जगमाख्याता, हुआ विदित विक्रम विख्याता॥
मात पिता तुव धन्य कहाये, जिननें वीर सुतनकों जाये।
धन्य शक्ति बल, रूप तिहारा, तृप्ति न ह्वै निरखत जग सारा॥

दोहा–राज विभव, सुख सम्पदा, सवहिं अनुज को दीन्ह ।
पुण्योदय ले आ इतै, विपति निवारन कीन्ह ॥
अधिक प्रसंशा का करें, कीन्हा कपिन सनाथ ।
द्यो आज्ञा सोई करें, यों कह नाया माथ ॥

कीन्ह परम उपकार हमारा, हो अब तसु, का भांति चुकारा ।
शास्त्रनमँह या भांति वताया, उपकृति भंज, कृतघ्न कहाया ॥
जीव कृतघ्नी मह अपराधी, धर्म, न्याय अरु नीति विराधी ।
पापिन मांहि महा वह पापी, कर्ज चुकावन, ना हिय व्यापी ॥

दोहा–प्रान जांय, तुव काज हित, तउ प्रण हमहु निभांय ।
जांय लंक, सिय लैन पै, लंकपतिहिं समझांय ॥
हे रघुपति, रघुकुलतिलक, शीघ्र सीय सुध लांय ।
शशिवदनी, मृग लोचनी, मेल्हें चरणन मांय ॥

जाम्बूनद तव याहि उचारा, तूं हम सवका एक सहारा ।
सावधान हो लंकहिं जैयो, नहिं विरोध मग मांहि मचैयो ॥
प्रान समान तोहि कों जानें, कपिवंशिन का शिखर प्रमानें ।
रीति नीति कह सव समझाई, सादर सव मिल कीन्ह विदाई ॥

दोहा–जाम्बूनद की सीख सुन, याने किय परमान ।
आज्ञा सारूं करहुँगो, रखों कपिन का मान ॥
लख उद्यत हनुमन्त को, रघु ले गए एकान्त ।
कही सियहिं समझाइयो, रखै कछुक दिन शान्ति ॥

रिपु ने जब से वियोग कीना, दिवस चैन, निशि नींद लई ना।
जब लग जीवन विवश तिहारो, तब लग हिय मँह धर्म चितारो॥
आर्त रौद्र युत जिय न तजैयो, निज परिणामहु थिरहिं रखैयो।
या तन को अति दुर्लभ जानो, यातें दुर्लभ धर्मिक मानो॥

दोहा—दुर्लभ मरण समाधि पुन, याबिन सकल असार।
इमि कह धीर बँधाइयो, आर्त रौद्र मत धार॥
ना पहिचानत सिय तुम्हें, यातें वह भय खाय।
तो मम करकी मुद्रिका, देव निशानी जाय॥

वाहू का चूड़ामणि लैयो, कुशल वृत्त या भांति सुनैयो।
सुन हनुमत हू विनत उचारा, वचन कीन्ह परमान तिहारा॥
है जाविध आदेश तिहारो, वाविध सबही करें चुकारो।
यों कह हनुमत शीस झुकाया, तबही आशिप सबसे पाया॥

दोहा—गमन समय सुग्रीव से, किय हनुमत संकेत।
लौट न आवें जब तलक, तबतक तुमहू चेत॥
रखो सावधानी अतिहि, यों कह किय प्रस्थान।
मनहु इंद्र गवनत दिखत, सेना अमर समान॥

बैठ विमान जबहि ये जावें, माथे पे शुभ छत्र सुहावे।
चँवर ढुरें, शोभा अति धारें, पुन पुन सब या ओर निहारें॥
शोभा वरणि सकै ना कोई, पुण्योदय तें अति ही होई।
याविध लख, सबनें सुख पायो, यह इक प्रानाधार कहायो॥

दोहा—वेही सुजन कहायवें, पर उपकार चुकांय।
तास चुकावन के समय, निज के प्रान गमांय॥
याविध गणधर ने कहा, सुन श्रेणिक गुणखान।
"नायक" रमत स्वरूप नित, पावें पद निरवान॥

इति सप्तमः परिच्छेदः समाप्तः।

अथ राजा महेन्द्र का श्रीरामचन्द्र जी के पास आगमन तथा अंजनी से मिलाप वर्णन

वीर छन्द—

गवनत विमान अंजनि सुत का, अति उद्योत गगन माँह छाय।
उमगत हिरदय भामण्डल सम, सिया वहिन को लेनें जाय॥
निरखत वन उपवन की शोभा, लखा नृपति महेन्द्र आवास।
चिन्तै मात पिता ये कैसे, आय सुता ढिग, दई निकास॥

दोहा—किय मां की अवहेलना, रखा न ताका मान।
लेवूं वदला तास का, कर रणमाँह अपमान॥

न हि क्षत्रिन का धर्म यह, शरणागतिहिं न राख।
देवँ दंड याका उचित, जस किय तस फल चाख॥

कुपित होय बजवाए नगारे, सामन्तन निज शस्त्र सम्हारे।
लख महेन्द्र पर दल चढ़ि आया, सजा सैन्य द्रुत सन्मुख धाया॥
भिड़ीं परस्पर दोनों सेना, वीरन के चित धीर धरें ना।
महेन्द्र हिय मँह अति रिसयाया, हनूमान के सन्मुख आया॥

दोहा–धनु छेदा हनुमन्त जब, तब यह दूजो लेय।
रथ तोड़ा हनुमन्त ने, अति विह्वल कर देय॥
यों लख द्रुत ढिग आय सुत, मारामार मँचाय।
हनूमन्त उत्साह युत, रणमँह केलि रचाय॥

मुनि जिम विषय समूहहिं छेदें, तासम यहू अरिगण भेदें।
मुनि चित ध्याय परीषह जीतें, तिम यहु बदला लेय अरीतें॥
अरि के बाण न आवन देवें, आप पहिल हू चलाय लेवें।
ऐसी मारामार मँचाया, मनु मदहस्ती ने वन ढाया॥

दोहा–दावानल तें जरत जिम, घास पात वन मांहि।
तैसे याके बाणतें, कोऊ ठहरै नांहि॥
महेन्द्र सुत को बांध लिय, हनूमन्त श्री शैल।
महाबली के सम्मुखे, नांहि बचन की गैल॥

लख महेन्द्र द्रुत यापै धाया, आय ढिगै संग्राम मँचाया।
महेन्द्र ने कछु कसर न राखी, चलै न हार पे, बल जिम माखी॥

तिम महेन्द्र की कछुय न चाली, द्रुत हनुमन्ता मुश्कें डाली।
वज हनुमन्तहिं विजय नगाड़ा, हुवा शत्रु से शून्य अखाड़ा॥

दोहा—तब महेन्द्र, हनुमन्त की, प्रमुदत अति थुति कीन।
धन्य पुत्र तूं कुल तिलक, जगमँह शोभा लीन॥
सुना विरद बहु दिनन से, हुती देखवे चाह।
लखा पराक्रम समर मँह, सत्य वृत्त अवगाह॥

मम सुत कहुँ न कोउ से हारा, तूंने च्रणमँह ताहि पछारा।
जीतन समरथ हरिहू नांही, ऐसा पौरुप है ता मांही॥
सुनत स्वयश हनुमन्त कुमारा, शीस नाय मृदु वयन उचारा।
च्रमो, दोप जो मैंने कीन्हा, सुन महेन्द्र हियलगायलीन्हा॥

दोहा—कह्यो सकल वृत्तांत निज, मैं लंका को जांव।
कीजो सेवा राम की, सीय लेय के आंव॥
यों कह, विहँसत इन्द्र सम, गवना श्री हनुमान।
कर न सकै, इमि समसरी, सुरपति केर विमान॥

तब महेन्द्र सह सैन्य सिधाया, प्रथम अंजनी के ढिग आया।
मिली अंजनी हिय हुलसाई, पुलकितनयन, मेह झिर लाई॥
लखकर महेन्द्र हिय सकुचाया, मनही मनहिंअतिहि पछताया।
मैं सच ही, निष्ठुरपन कीन्हा, का मुखदिखांव हियदुखलीन्हा॥

दोहा—व्है जीवन अब मृतक सम, कीन्ह घनी मैं चूक।
यों चिन्तत मांगी च्रमा, व्है अपराध अचूक॥

सुन अंजनि कह तात से, नांहि तिहारा दोष।
सब कर्मन का खेल जनु, ना करुँ तुम पै रोष॥

यों कह, मात पिता संतोषे, काहे क्षमा यांचते मोसे।
याविध विविध भांति समझाई, पै उन चित्त गिलानी छाई॥
होती मृत्यु यदिहि तो नीकी, जीही जानें, अब निज जी की।
पै गत बात न हाथें आवै, किय अकाज, हियदाह सतावै॥

दोहा-यातें ज्ञानि विवेक तें, करत सभीविध काम।
धर्म, कर्म कर शुचि हिये, रमते आतमराम॥
यही सुःख का मूल जनु, भेदग्ज्ञान उपाव।
अब सुख फिर सुख सुखहि सुख, अपनो रूप लखाव॥

यही बड़प्पन हिय मृदुताई, स्वयं निवाहै गुरुजनताई।
बड़े कुलन की ये ही रीती, दोष, न गह सद्गुण पर प्रीती॥
बांधा पूरव अशुभ सतावे, पर तो एक निमित्त कहावे।
मोह राग रुप ही दुख दाता, इनसे ही बँध कर्म असाता॥

दोहा-परिजन पुरजन मिल सकल, परम प्रेम उपजाय।
आये जाविध पवनसुत, तसु वृत्तांत बताय॥
राम लखण से मिलन अब, किहकंधापुर जांय।
यों कह सुन प्रस्थान किय, राम लखण ढिग आंय॥

राम लखण द्युति सोहै भारी, जँहपै सभा लगी थी सारी।
महेन्द्र आके शीस नमाया, हनुमत का वृत्तांत बताया॥

दुहुन बंधु हू विहँस उचारे, कहो कुशल अह मित्र हमारे।
याविध प्रेम परस्पर कीन्हें, हिलमिल सब, सुख हियमँह लीन्हें॥

दोहा—पूरव पुण्य उपार्जो, राम लखण दुहु वीर।
नर, खग, सुर सेवें सदा, आंय राम पद तीर॥
याते सेवहु धर्म नित, निज स्वरूप लव लाय।
"नायक" सोई सहज ही, अविनाशी पद पाय॥

इति अष्टमः परिच्छेदः समाप्तः।

अथ रामचन्द्र से गन्धर्वराज की कन्याओं का पाणिग्रहण वर्णन

वीरछन्द—

चलै विमान गगन पथ निरमल, रविसम शोभै तँह हनुमान।
पड़ी दृष्टि दधिद्वीपं मनोहर, दधिमुख नामा नगर सुजान॥
दधिसम उज्वल महलन पंकति, मानो स्वर्गपुरी दिखलाय।
वन उपवन उद्यान सुशोभित, याविध रचना रुचिर लखाय॥

दोहा–उपवनमँह चारण मुनी, कायोत्सर्ग लगाय ।
ताही वनमँह ध्यान हित, खग कन्याँ त्रय आय ॥
विद्या साधन ह्वै सुथिर, लगी अग्नि भयकार ।
तृण काष्टादिक सब जरें, उठती ज्वाल अपार ॥

धीरवीर मुनि निश्चल ठाड़े, स्वस्वरूप मँह अति ही गाढ़े ।
लगे लपट तउ चित्त अडोला, जरत देह नहिं हृदय फफोला ॥
नासादृष्टी भुँजा लुँबाये, हनूमान याविधि लखाये ।
अग्नि परीषह मुनिवर जीतें, विजय उपावें कर्म अरीतें ॥

दोहा–उपसर्गहिं हनुमन्त लख, बरसाया द्रुत मेह ।
भई शान्त अग्नी तुरत, रखी मुनि की देह ॥
अति ही संचय पुण्य कर, हरषा हिय हनुमान ।
कीन्ह नमन थुति विस्तरी, ममतर सुधा समान ॥

हे गुरुवर ! तुम आतम विहारी, अग्नि परीषह जीती भारी ।
ताप हृदय मँह रंच न व्यापो, रत्नत्रय मँह आतम थापो ॥
मोह शत्रु पर विजय उपाई, आप गुण निधि अनुपम पाई ।
सुदृढ़ काष्ट की नौका पाके, आप तरो, पर पार लगाके ॥

दोहा–विद्या साधत जे रहीं, खग कन्यायें तीन ।
अग्नि ताप मिटतइ तुरत, विद्या सिद्ध सुकीन ॥
देय मेरु की प्रदक्षिणा, आईं मुनिन के पास ।
कीन्ह नमन थुति विस्तरी, सहा अग्नि का त्रास ॥

धन्य गुरो दृढ़ समता धारी, अग्नि परीषह जीती भारी।
निष्पृह आतम ध्यान लगाये, कर्म शत्रु पै विजय उपाये॥
पुन हनुमत की थुती उचारी, तुम सम नांहि कोय उपकारी।
धन्य सुहृद तुव पितु अरु माता, जायो ऐसो रक्षक भ्राता॥

दोहा—हम निमित्त को पाय कर, वनमँह प्रजली आग।
ताकी कीन्ही शान्ति तुम, हिय वत्सलता जाग॥
कहा आपना वृत्त तब, दधिमुख नगर प्रधान।
तात नृपति गन्धर्व जनु, हम त्रय कन्या जान॥

खग अंगारक चाह लगाके, करी यांचना पितु ढ़िग आके।
कहि पितु, तुम ना योग्य सुतोंके, यों सुन, दाह उपजि उर ताँके॥
एक दिवस पितु, मुनिहिं उचारी, कन्यन वर को होय हमारी।
निमित ज्ञान बल, मुनहु उचारे, जो, खगपति साहसगत मारे॥

दोहा—वर जानो कन्यान का, याविध मुनी उचार।
सुन पितु हिय अचरज लियो, को साहसगत मार॥
जगमँह को एता प्रबल, साहसगत हन देय।
किन्तु कीन्ह श्रद्धा अटल, हियमँह निश्चय लेय॥

अंगारक, अंगार समाना, करन अहित, चित निदान ठाना।
हम इत आकें, विद्या सार्धे, लख अंगारक, चहा विराधें॥
पितु वच से, तसु हुई निराशा, रुपिता सोचै करूं विनाशा।
अप्राप्त हमकों ज्योंही देखो, त्योंही वैरिन समतर लेखो॥

दोहा–मिलीं न मोकें वरन ये, अन्य न व्याहन पाय।
याविध मनमँह चिन्त्यकें, वनमँह अग्नि लगाय॥
होती विद्या सिद्ध हम, छह वरसों पश्चात्।
बारह दिनमँह सिद्ध हुइ, सहा अग्नि उत्पात॥

यदी कदाचित आप न आवें, मुनी सहित हम सब जर जावें।
कीन्ह आपने बहु उपकारा, रच्छे मुनि, उपसर्ग निवारा॥
सुन हनुमत हू तब मुस्क्याकें, वृत्त राम का, कहा सुनाकें।
मनवांछित वर तुमहूं पांई, तिष्ठें वे किहकन्धा मांहीं॥

दोहा–राम वृत्त विस्तार युत, इन्हें कहा हनुमान।
सियहर रावण लेगयो, मैं जावत तिहिं थान॥
दैवयोग मुनि जरत लख, वरसाई जलधार।
अतिशय पुण्य कमाय लिय, रच्छे जीव अपार॥

यदि सिय निमित्त मैं ना आतो, कैसे मुनि, अरु तुम्हें बचातो।
होनी थी मुनि रच्छा मोसे, हुई अवश निश्चय कहुँ तोसे॥
याविध हिलमिल किय प्रस्थाना, चढ़ विमान पै द्रुत हनुमाना।
हर्ष हिये मँह नांहि समावै, विधु वारिधि समहिय उमगावै॥

दोहा–कन्यन मुनि की थुति उचरि, रच्चीं परम मुनेश।
हम आईं तुव शरण मँह, विद्या साधन हेत॥
तुव निमित्त उपसर्ग टर, विद्या साधन कीन्ह।
या विध बहु थुति विस्तरी, हर्ष हिये मँह लीन्ह॥

कन्यायें निज गृह मँह आईं, हर्षित हो, सब वृत्त सुनाईं।
सुन परिजन पुरजन हुलसाये, गृह बैठे ढिग दमाद आये॥
आय राम ढिग शीस झुकाया, कन्यन का प्रण वृत्त सुनाया।
परिणावन हित बात उचारी, आयस देव राम सुखकारी॥

दोहा—रूप रुचिर लावण्यमय, मनु सुर सुन्दरि आंय।
निरख राम प्रमुदत हुये, मन्द मन्द मुस्क्यांय॥
समझी आयस सबहिं ने, साज सजा द्रुत लीन्ह।
धूमधाम युत राम सँग, कन्यहिं परणा दीन्ह॥

राम विराग, क्षणक हिय धारै, हीन अवस्था गहै विसारै।
मुनि पद मांहि तजै जिय व्याधी, आधरु व्याधी सकल उपाधी॥
दृढ़ विराग तबही पहिचानो, अबै लुहार सँडासी जानो।
क्षण मँह आगी क्षणमँह पानी, आंख पूतली काग समानी॥

दोहा—जगत निमित्ताधीन जनु, क्षणमँह राग विराग।
दृढ़ विराग जबही गहै, सत स्वरूप मँह जाग॥
यातें ज्ञानी नित रमैं, सत स्वरूप के मांहि।
"नायक" ते ही शिव लहैं, यामें संशय नांहि॥

इति नवमः परिच्छेदः समाप्तः।

अथ अंजनी नन्दन का लंका सुन्दरी से पाणिग्रहण वर्णन

—वीर छन्द—

महा विभव संयुक्त मनोहर, अंजनि नन्दन गमन सुकीन ।
यंत्र प्रभाव रुकी जब सेना, तब प्रच्छा, का कारण लीन ॥
असुरइन्द्र या श्रीजिनमन्दिर, चरमशरीरी कोउ मुनिराय ।
कहै सचिव से अंजनि नन्दन, सुनत सचिव इमि बयन उचाय ॥

दोहा—अहो प्रभो, मायामई, रचा यंत्र दुखदाय ।
महा भयानक पूतली, प्रान हरै, ढिग जाय ॥
सुर प्रवेश ना कर सकत, विषधर विषहिं उगाल ।
बरसत अग्नि फुलिङ्ग तँह, मनु साक्षातहि काल ॥

विषहिं धूम्र दशदिश मँह छाया, महा अंध ताने फैलाया ।
ज्योतिष मंडल तें अति ऊंचो, ढिगै आय कोउ, ग्रसै समूचो ॥
सुन हनुमत हिय मँह रिसयाया, ये क्या रावण जाल रचाया ।
देखत हों ये कितना मानी, समझत एक हमीं विज्ञानी ॥

दोहा—आतम ध्यान बल मुनि यथा, नाशें मोह महान ।
तिम तसु मद मर्दन करूं, है केतक मदवान ॥
नभ मँह द्रुत दल थाम पुन, गदा हाथ में लेय ।
विद्यामइ बखतर पहिर, तसु नाशन उमगेय ॥

पुतली मुख प्रवेश कर लीना, शशि को राहु ग्रसन मनु कीना।
द्रुत पुतली की कुक्षि विदारी, मार गदा चूरण कर डारी॥
यथा मुनी वसु कर्म विदारैं, तिम ये विद्या चक्र उपारैं।
जाने जन्मत पर्वत चूरो, यह काम ना रखै अधूरो॥

दोहा–घन गर्जन मम शब्द है, विघटा यंत्र विराट।
विद्या की शक्ती विफल, कर दी बाराबाट॥
यंत्रहिं रक्षक खग तुरत, कुपित काल सम आय।
महा घोर संग्राम किय, हनुमत चक्र चलाय॥

चक्र लगत ही गिरा मही पै, जुदा पड़ा शिर, धड़हु कहीं पै।
यद्यपि चक्र सामान्य कहायो, तदपि शक्ति प्रबलाई पायो॥
चक्री चक्र सुदर्शन जानो, षट खँड साधें ताहि प्रमानो।
अधचक्री हू चक्र लहावें, प्रतिहर को हन, करमँह आवै॥

दोहा–पिता निधन लख, तसु सुता, लंकासुन्दरि आय।
रथारूढ़ क्रोधित महा, रण घनघोर मँचाय॥
रक्त नयन भ्रकुटी कुटिल, उचरै शब्द कठोर।
पितु घातक, पापी बता, तूं कितना सहजोर॥

आवत ताका छत्र उड़ाया, वाने याका धनुष नशाया।
मारन हित वह शक्ति उठाई, बीचहि में इन तोड़ गिराई॥
तब वह बाण वृष्टि झर लाये, इनने सबही काट गिराये।
सुथिर खड़े जिम अचल पहारा, बरसें बाण यथा जलधारा॥

दोहा–बहुत समय तक युद्ध ह्वै, करें परस्पर वार।
समतर की इन जोड़ जनु, जीतें, ना कोउ हार॥
चला चली हुइ शस्त्र की, काम शस्त्र पुन चाल।
चाला दोई ओरतें, आपस मँह दोउ घाल॥

यों सुन्दरि मनमांहि विचारै, मेरा बाण वाहि तन फारै।
पै वा काम बाण मोहि भेदे, विन प्रयास मेरो हिय वेधे॥
याहीविध हनुमन्त विचारै, काम बाण, मोहि हिया विदारै।
अन्तर बाहर तन अति पीड़ै, मदन हिंडोला मँह हिय डीड़ै॥

दोहा–मृत्यु होय तो अति भली, पीड़ा सही न जाय।
धीर वीर के चित्त को, सहजहिं देत चलाय॥
चरमशरीरी मरण हित, कर हिय सोच विचार।
हिय विवेक द्रुत से नशो, धिक धिक काम विकार॥

ढिगमँह सुन्दरि पाती आई, बँधी तीरमँह हनुमत पाई।
मोकें जीत सकें सुर नांही, काम बाण पै, छिद हिय मांही॥
यों वांचत ही, भुवि पै आये, मिले परस्पर हिय हुलसाये।
पिता निधन पै रुदन मँचाई, अञ्जनिसुतने धीर धराई॥

दोहा–चीण आयु पै हो निधन, वैसे निधन न होय।
तात तिहारा वीर जन, अमर नाम पद जोय॥
याविध बहु संबोध कर, धीर धँधाई तास।
परिणय साजसजाय पुन, हुइ जोड़ी इक रास॥

रूप सुघर हनुमन्त लहाया, ताहू विधै वाहु ने पाया।
वर वधु की इक समतर जोड़ी, कहां रोप कँह प्रीति बहोड़ी॥
वीती रजनी लखा सवेरा, तब गवनन, हनुमतहु उचेरा।
सुनत सुन्दरी हिय अकुलाई, मीन, नीर से बिछुड़न पाई॥

दोहा–कहै, नाथ सुन इक विनय, यंत्र भंग हो जाय।
जावो मत लंका विषें, कोप्या दशमुख राय॥
तब हनुमत ने वृत्त कह, जिन हर दुख सुग्रीव।
तिन रावव तिय सिय हरी, किय अन्याय अतीव॥

यातें मैं समझावन जावूं, कर समझौता सिय ले आवूं।
होय त्रिखंडी पापाचारी, पाप प्रवर्तै, जनता सारी॥
यह प्रवृत्ती करहै खोटी, तब तो जानो पृथ्वी लौटी।
परतिय को याविधहिं लखावै, माय भगिनि या सुता सुहावै॥

दोहा–श्रवत विनत सुन्दरि कहै, वह तुम से रिसयाय।
किम मानें तुम्र बात अब, कैसे प्रेम जनाय॥
घूक न मानें भानु की, विपधर पिय जिम दुग्ध।
उल्टो जहर बनाय पुन, करत अहित वह मुग्ध॥

प्रेम तभी तक जगमँह पावै, हो अनुकूल न वैर बढ़ावै।
जब प्रतिकूल समझ में आये, क्षण भर में तब प्रेम नशाये॥
नांहि पवन प्रतिकूल सुहाती, दीपशिखा ना ठहरन पाती।
वाने किय परतिय से प्रीती, न्याय उलंघो और सुनीती॥

दोहा-निज गति मति काहे हरी, जो बहु निपुण कहाय ।
रावण सा त्रयखंडपति, हर परतिय गृह लाय ॥
मेह बरसते तृण जरें, वाड़ि खेत कें खाय ।
हो अन्यायी खगपतिहु, न्याय कौन पे जाय ॥

सुन हनुमन्त मोद अति लीन्हा, कही यथारथ सुनाय दीन्हा ।
वास्तव मँह अन्याय उतारूं, हुआ दशानन मान विदारूं ॥
जाय सीय शुचि दर्शन पावूं, अपने नयन सफल कर आवूं ।
जिहिं को देख त्रिखंडी मोहो, मानो शशि को राहु ग्रसो हो ॥

दोहा-है कैसी वह सुन्दरी, जाहि लखें सुध भूल ।
सहस अठारह नारि पै, बुद्धि भई प्रतिकूल ॥
यातें इत दल छांड़कें, इकलो ही मैं जांव ।
राघव की सेवा करों, वेग सिया ले आंव ॥
जगमँह कर्म प्रधान है, शिवमँह आतम प्रधान ।
"नायक" रमत स्वरूप नित, पावै पद निरवान ॥

॥ इति दशमः पारिच्छेद; समाप्तः ॥

अथ हनुमान जी का लंका से लौट आने का वर्णन

— वीर छन्द —

गुरु गौतम श्रेणिक सें बोले, प्रविशा लंका में हनुमान।
गया विभीषण के गृह प्रथमहिं, कीन्ह विभीषण बहु सन्मान॥
लह स्वागत अञ्जनिसुत बोले, त्रिखंडपति रावण कहलाय।
का अनुचित छिः ताह सुहानों, रंक पुरुष सम, परतिय ल्याय॥

दोहा–मर्यादा सज्जित पुरुष, तिनमँह ये विख्यात।
कौन कुमति हिय में बसी, कीन्ह हीनता बात॥
क्यों न आप संबोधते, न्यायरु नीति दिखाय।
जग अपयश, परभव कुगति, परम्परा दुखदाय॥

सब वंशनमँह ये प्रख्याता, श्रेष्ठ वंश राक्षस कहलाता।
है सुरपुर लौं महिमा याकी, देवें उपमा सब थल जाकी॥
पै बलात कुल दाग लगावै, सुसा अंध सम, नांहि लखावै।
करत कुकृत्य लाज ना आई, आन मान मर्याद गमाई॥

दोहा–श्रवत विभीषण, इमि कह्यो, मैं हारा समझाय।
अब ना मानें मम वचन, जबसे सिय को लाय॥
अवै न देखै ना कहै, तासे का वश होय।
होनहार दिखती प्रबल, मेंट सकै ना कोय॥

आज ग्यारहवां दिवस कहाया, सलिल न पीय, असन ना खाया।
अंजन मंजन सबही छांड़ी, मनो तपस्विन आसन मांड़ी ॥
पै रावण हिय नांहि पसीजै, नित्य करै वहि, जामें रीझै।
द्रव जावै नर, पत्थर जी का, पै उहि सुहाय कुक्कृत जीका ॥

दोहा—सुन हनुमत सिय की दशा, तत्क्षण तहां सिधाय।
हृदय व्याकुलित होयकैं, सिय के थानक आय ॥
निरखी दूरहि तें सिये, त्यागमूर्ति अभिराम।
शीलवती सुभगुण सदन, वदन अमित शशि धाम ॥

लोक सुन्दरी राघव रानी, शोभै जलधि,अमित गुणखानी।
सजल नयन, मुख हाथ लगाये, रूक्षकेश आनन पर छाये ॥
रचना लोकोत्तर सरसाई, कमललोचनी अति द्युति छाई।
दुख जल वारिधि अगम अपारा, शील रत्न तउ रखा सम्हारा ॥

दोहा—प्रानन की ममता तजूं, रहो प्रान चह जाव।
देख सकों ना दुख असह, करहों सभी उपाव ॥
तरुमँह छिप सिय के निकट, डार मुद्रिका दीन।
निरख सीय आनँद उमगि, उठा हर्ष युत लीन ॥

ज्योंही पियकी मुँदरी पाई, त्योंही हियमँह अति हुलसाई।
लख प्रसन्न मुख, निशिचर नारीं, द्रुत रावण ढिग जाय पुकारीं ॥
सुन संदेश हुआ मन चाया, निज वनितहिं, आदेश लगाया।
जाय सीय को देव बधाई, तूं सबमँह शिरमोर कहाई ॥

दोहा–मन्दोदरि आदिक श्रवत, सहस अठारह नारि।
आईं सबमिल मोदयुत, जँह पै सिय सुकुमारि॥
कहत वयन मन्दोदरी, तूं प्रसन्न मन होय।
त्रिखंडपति इच्छो शुभे, तो सम सुभग न कोय॥

श्रवत सिया कें अति रिस छाई, नागिन मनु फुन्कार मँचाई।
हे कुलटा, क्या कुवच उचारी, मैं तो पियहित, आनँद धारी॥
आज पिया का पाय सँदेशा, हरषी, मनु पिय अमृत जैसा।
पाइ निशानीमोद लहाई, तूं तसु अघमय अर्थ लगाई॥

दोहा–सिय वच सुन मन्दोदरी, मनमें करत विचार।
है अजु अनशन ग्यारवां, वाढ़ा वायु विकार॥
पिय वियोग में बकत यह, वृथा अनाप सनाप।
पिया सँदेशा पाय हम, अरु निशानि आलाप॥

सीता ने यों कहि उकताके, आय कौन मितु, अब यँह आके।
दर्श देव, वत्सलता धारो, बूड़त दुखजल मोहि उबारो॥
सिय आशय, यों हनुमत पाके, उचित न छिपवो, अब यँह आके।
उपकारी की कृती चुकावूं, मैं हू सिय के दर्शन पावूं॥

दोहा–सबहिं विलोकत सम्मुखै, विनत आय हनुमान।
चरणन शीस नमाय कर, खड़ा निशंक सुजान॥
कपि लाच्छण युत मणि मुकुट, चन्दन चर्चित अंग।
श्रवनन कुन्डल जगमगत, पुठतन छविय अनंग॥

पुन निज नाम गोत्र बतलाया, मात तात निज थान जताया।
कह्यो राम संदेश सुनायो, श्री रघुपति ने मोहि पठायो॥
यों सुन हरषी सिय चित मांही, हर्ष समाय हिये मँह नांही।
पुन कहि, रण का हाल बतावो, पिय अरु लछमण कुशल सुनावो॥

दोहा-सिय जिज्ञासा पूर्ति को, कहा वृत्त विस्तार।
या खगपति सिंहनाद किय, हाय राम उच्चार॥
पहुँचे राघव लखण ढिग, वाने द्रुत लौटाय।
आये अपने थान मँह, तहां, न तुमको पाय॥

पाके विजय लखण ढिग आया, केवल भ्रात अकेला पाया।
धीरज देय लखण मुख धोयो, जा सुग्रीव विपति को खोयो॥
नीठ नीठ तुमरी सुध पाई, कथनावलि विस्तरित सुनाई।
अब राघव हिय नहिं है चैना, तुव दर्शन हित तरसत नैना॥

दोहा-गीत नृत्य किय कामिनीं, करतीं यत्न अनेक।
राघव चित रढ़ना लगी, मिलै मुझे सिय एक॥
दर्श लालसा हित अटक, रहे देह में प्रान।
और अधिक दुख का कहूं, लेव हृदय से जान॥

ज्ञान ध्यान मँह कथा तिहारी, निशि दिन चित से टरत न टारी।
सारे खगपति मिल समझावें, भांति भांति से उन्हें रिझावें॥
पै उन रुचे एक हू नांही, उरझा चित्त सिया के मांही।
तुव पति दुख, काविध बतलावूं, जो उन व्यापे, किम कथ गावूं॥

दोहा—इमि कह, अतिशय विनययुत, सियसें अञ्जनिलाल।
खड़ा गुरू ढिग शिष्य मनु, सविनय नावत भाल॥
श्रवत कथन सिय मुदित ह्वै, याविध प्रश्न उचार।
कहां पाइ, पिय मुद्रिका, कहो कथन विस्तार॥

मम पिय से, किम मिलाप पाये, सिन्धु लंघ तुम कैसे आये।
कहहु सत्य पुन काविध स्वामी, कहो कुशल लच्मण बलधामी॥
कैसे चित विश्वास गहावै, अब तक तो साचात न पावै।
यों हनुमत से सीय उचारी, श्रवनन अतिहि चाह हिय धारी॥

दोहा—श्रवत सीय का प्रश्नइमि, बोले वचन रसाल।
श्रवहु माय संशय मिटै, यों कह नाया भाल॥
कोय धरा सुग्रीव सम, सारा अपना भेष।
हारे सब पहिचान में, जान सके ना लेश॥

राघव शरण असल जब आया, सारा अपना वृत्त सुनाया।
कह राघव, तुव विपति निवारों, करहु शपथ, सुध लाय चुकारों॥
गाढ़ी दुहुन प्रतिज्ञा धारी, असल, नकल, रणकीन्हा भारी।
नकल गिराय असल को दीन्हा, जाय लौट हिय आनँद लीन्हा॥

दोहा—बुला नकल, दूजे दिना, किय रघुपति संग्राम।
विद्या भागी तत्त्वणहिं, अय सन्मुख श्रीराम॥
कपट वेष के मिटत ही, घोर युद्ध, वा कीन।
पै राघव ने तुरत ही, पठाय यमपुर दीन॥

तब सुग्रीव पाय धन धामा, और सुतारा अपनी भामा।
होय मग्न, सुध लावन भूला, यों लख लखण हुये प्रतिकूला॥
नय दम्पति अपराध छमाया, तब सुग्रीव जाय सुध लाया।
सब मिल मुनि वक्तव्य चितारा, होन दशानन मरण उचारा॥

दोहा—कोट शिला गह, ताहि पुन, भुज बल लेय उठाय।
हनहैं रावण को वही, कहि निश्चय मुनिराय॥
यों सुन द्रुत राघव लखण, कोट शिला के थान।
पहुँचे खग मण्डल सहित, पूजी शिला महान॥

तबहिं लखण ने शिला उठाई, नर खग सुर जयकार मँचाई।
महाबली लक्ष्मण को जानो, रावण हन्ता लक्ष्मण मानो॥
रावण यँह पै, यंत्र रचायो, सबने मिलकर मोहि बुलायो।
कीन्ह 'आन' में रघु ढ़िग आके, सिय लाहों वाको समझाके॥

दोहा—श्री रघु कह संदेश जिम, सो मैं दियो बताय।
दीन्ह निशानी मुद्रिका, सोहू भेंटी आय।
श्री राघव के चरणमँह, मैं भी 'आन' निभांव॥
रावण को समझायकें, वेग तुम्हें ले जांव।

न्याय नीति का वेत्ता जानों, यासम बली न दूजा मानों।
गुणगण राजित महिमा जाकी, कीर्ति दशों दिश फैली याकी॥
अद्भुत काम किये हैं याने, त्रिखंड खगपति आज्ञा मानें।
हुवा प्रसिद्ध सरल सतवादी, पै क्यों तुव लख, बना प्रमादी॥

दोहा—समझैहों तो मान है, करहै नांहि विवाद।
न्याय नीति पन्डित चतुर, डरै लोक अपवाद ॥
हनुमत वच इमि सुन सियहिं, हिये न हर्ष समाय।
पुनपृच्छै, तुमसम किते, रघुकुल तिलक सहाय ॥

उत्तरदैन, न, हनुमत पायो, द्रुत मन्दोदरि वयन उचार्यो।
अह सिय, तूं ना जानें याको, यातें प्रश्न उचारा ताको ॥
भरतक्षेत्रमँह, यह इक शूरा, जानें जन्मत पर्वत चूरा।
ये रणमँह ह्वै, पतिहिं सहाई, याहि सिवाय कहाय जमाई ॥

दोहा—याने रणमँह एकले, जीतै बहुरणशूर।
पिय याको मानें अधिक, प्रेम करें भरपूर ॥
पै अचरज की बात यह, वना राम का दूत।
पिय सुन पैहै या यदी, कहि है इसे कुपूत ॥

श्रवणत दूत, कुपूत उचारी, हियमँह अग्नी भड़की भारी।
दूत सिवाय कुपूत उचारै, भ्रकुटि चढ़ी हिय अतिरिस धारै ॥
मन्दोदरि से रिसयुत बोला, मानो गिरा तोप का गोला।
हिरदय दग्ध करै, तन चूरै, कर्कश वचन वर्गणा पूरै ॥

दोहा—मय कन्या तूं जग विदित, नृप दशमुख पटरानि।
दूती वनकर आइ इत, नांहि अयश का ध्यान ॥
पति प्रसाद सुख भोग किय, अब पति करै अकाज।
तामें सहमत होय तूं, करै मृत्यु का साज ॥

पिय की सुध बुध भूली सारी, भखन चहै विप, गइ मति सारी।
तापै औरहु पुष्ट करै तूं, याही भव फल भोग मरै यूं॥
विप वारिधि, वह बूड़ो चाहे, तूं धकाय अरु बुड़ाय वाहे।
सहस अठारह हैं गृह नारी, तऊ न तृप्तो कुदृष्टि धारी॥

दोहा–तुव सयानपन जगविदित, करत निंद्य तउ कार्य।
महिपी तें भैंसी वनत, तोहि कुगति अनिवार्य॥
क्यों न रोक अन्याय तें, दिय चतुरइ विसराय।
उल्टी मोसें कहत यों, राम दूत वन आय॥

पिय कुपूत कों, नांही रोकै, उलट कुपूत कहत है मोकै।
राक्षस, शशिसम वंश लहाया, दाग लगाय कुपूत कहाया॥
लगी कालिमा शशिमुख मांही, कल्प काल तक, धुलहै नांही।
याभव, परभव सबहि विगारै, तूं समझाके, नांहि सुधारै॥

दोहा–वच यथार्थ हनुमन्त कह, पै ये अति रिपयाय।
बोली तूं कपि वान्दरा, चपलपणा ना जाय॥
सुनहि पिय जब याविधि, कीन्ह निंद्य तूं काम।
तेरी गति काविध करै, ना सहाय दे राम॥

जाने, पिय वहनोई मारा, तुम सब, उनको देत सहारा।
वे तो भूमिज, फिरें भिखारी, तुम सब उनसें कीन्ही यारी॥
उननें निजघर खोया जैसा, तुम्हें बनावें, निजसम तैसा।
उनकें मौत खींच के लाई, तुमहु मरण चह, करत मिताई॥

दोहा–दूरदर्शिता कों तजत, संकट लेत विसाह।
खगहै, भूमिज दूत वन, की अनहोनी चाह॥
अवहू कछु भी ना गयो, जाव निकट लंकेश।
भूल मना ले आपनी, मान तास आदेश॥

सुन सिय हिय अव धीर धरैना, मन्दोदरि से बोली वैना।
मंद उदर कहलावे छोटी, पै विपघट सम, है अति खोटी॥
ममपति विक्रम ना सुन पाई, तातें एता गाल बजाई।
पराक्रमिनमँह मुख्य कहाया, धनुपहिं वज्रावर्त चढ़ाया॥

दोहा–तास अनुज लक्ष्मण बली, सगरावर्त चढ़ाय।
कौन बरावरि कर सकै, उनसम वेही आय॥
रिपुवन दाहन अग्निसम, गजकों हरि के बाल।
कुतम निबारक सूर्यसम, इमि दशरथ के लाल॥

अव को, उनकों रोकनहारो, आयँ सिन्धु तर, भुजबल धारो।
तुव पति को रणमांहि पछारें, शर्म न लहि, किम रंक उचारें॥
यदि तुव पति इत जोर जनाये, क्यों न आय उत धनुप चढ़ाये।
क्यों मम पति कों कहै भिखारी, यांचन गति, तुव पति ने धारी॥

दोहा–नितही यांचत भीख इमि, देव मोहि रतिदान।
धिक धिक छिः छिः इमि कुवच, मुखसे कहत अजान॥
रघुरवि किरणों प्रखर जनु, तुव पति अंध उलूक।
नेत्र होत अन्धावनत, गिरत कुगति महकूप॥

यदि अब भी, तूं नांहि बचावै, जबरन वाकी मौत बुलावै।
समझावो, क्यों कुकृत रचो यो, पछतायै, ना मिलहै खोयो॥
मैं हूं स्वामिन, मम पतिस्वामी, तेरा पती भिखारी नामी।
बनुँ न भिखारिन, या सँग चेरी, रैहों स्वामिन, स्वामी नेरी॥

दोहा–तूं सति या व्यभिचारिणी, यदि तूं सति कहलाय।
क्यों देशै व्यभिचार यों, कुगति देन, दुखदाय॥
यदि तूं है व्यभिचारिणी, हक, न देन उपदेश।
कुलटा, दूतिन वच वृथा, सती न मानें लेश॥

यों कुदृष्टि जिम, डारी मोपै, कोउ कुदृष्टि यों, डारै तोपै।
तब तुव पति को कैसी भासै, येसइ सबकी सोच हिया सैं॥
यातें जाय पतिहि समझावो, परतिय, भगिनी, सुता लखावो।
धर्म नीति को काहे लोपै, अपना जीवन, परको सोंपै॥

दोहा–हृदय विदारक वयन सुन, रावण की सब नारि।
नागिन सम फुन्कारतीं, चहैं सीय को मारि॥
ज्योंही वे आगे वढ़ीं, बीच आए हनुमान।
जिम सरिता का वेग अति, रोकै शैल महान॥

मनो सरुजता, धाड़ मँचाई, चतुर वैद्य लख, रोक लगाई।
त्रास न दे सकि, सिय के जीको, हुइँ निराश सब, ह्वै मुख फीको॥
लौट जायकें पतिहि उचारीं, सुन रावण संतोषी सारीं।
रावण चितमँह अतिरिस छाई, अवा अग्नि जिम हिय धँधकाई॥

दोहा—गवनी, रावण नारि लख, सीय हिये हुलसाय।
विनवत अञ्जनि सुत कही, सुनहु मात चित लाय॥
वसुन्धरा सब राम की, सबके स्वामी राम।
यातें भोजन लीजिये, नांहि अटक का काम॥

कीन्ह प्रतिज्ञा पूरी पारी, पिय सुध पाई, अटक निवारी।
सुन सिय हू मन मांहि विचारै, पिय सुध पाई, ठीक उचारै॥
रखो शील, देह हू पोषों, पिय सँदेश सुन, हिय संतोषों।
यों चिन्तत सिय किय स्वीकारा, सुन हनुमत, लिय हर्ष अपारा॥

दोहा—इक सुपात्र तिय से तबहिं, सामग्री मँगवाय।
मुदित विभीषण ने सबहिं, दीन्ही तुरत पठाय॥
स्वर्ण थाल सज्जित असन, दुग्ध दधी घृत सार।
बहु मेवा, पकवान युत, व्यञ्जन विविध प्रकार॥

सिय हियमँह, श्रीजिन को ध्याई, पञ्च परम पद, शीस नमाई।
पुन पिय चरणनमँह चित दीन्हा, शुद्ध शील हिय अंकित कीन्हा॥
शुधता सहित लीन्ह आहारा, शील नियम प्रति प्रीत अपारा।
कर भोजन किय कछु विश्रामा, आय कही हनुमत गुण धामा॥

दोहा—पतिव्रते, गुणभूषणे, बैठो मेरे कन्ध।
पहुँचा धूं क्षणमँह तुझे, पिय ढ़िग, पुर किहकन्ध॥
या जो आयस हो मुझे, जाय कहूं संदेश।
जो हियमँह, जैसी कहो, संशय रखो न लेश॥

अवत गमन, झिर जल दोउ नैना, गद्गद ह्वै सिय बोली बैना।
काह कहों, का व्यथा सुनावूं, बिन आयस, कस पिय ढिग जावूं॥
कहो सँदेशा अब तुम जाके, मम उरसे तुम, शीस नमाके।
यों पिय संगम, रहस बतावूं, उन चितमँह परतीति दिवावूं॥

दोहा—चारण ऋषि वंदन किये, पड़गाहे तुव साथ।
आया मत्त मतंग तँह, कीन्ह ताहि वश, नाथ॥
इकदिन भ्रमर उड़ाय पुन, भुज पर लई उठाय।
कमल नालकी मुख दई, विहँसत, हे रघुराय॥

याविध जाय, कहो रघुराई, गुप्त समस्या तुम्हें बताई।
चूड़ामणि हू मम ले जाओ, पिय दिखाय, परतीति दिवाओ॥
तुव दयालुता है अधिकाई, इमि प्रतीति हिय मांहि समाई।
रखो शील, प्राण हू राखो, होय मिलाप यत्न सोइ भाखो॥

दोहा—सिय कह इमि हनुमन्तसे, लोचन अश्रु बहाय।
पाणि शीस धर पवनसुत, बहुतक, धीर बँधाय॥
तुव इच्छा ह्वैहै सफल, निश्चय मनमँह लाव।
ऐहैं द्रुत रघुकुलतिलक, यामँह फेर न पाव॥

सविनय शीस पवनसुत नाके, गवना, सिय से आशिष पाके।
पहिन मुद्रिका सिय हरषाई, समझी, पतिहिं समागम पाई॥
किंचित लही हिये मँह साता, दीन्ही पिय सुध, हनुमत भ्राता।
रामलखण की कुशल चितारें, अब कब होय मिलाप हमारें॥

दोहा–रावण कोपित ह्वै तुरत, बहु भट दिये पठाय।
इक विद्रोही नर सुघर, ताहि पकड़ ले आय॥
यों आयस को पाय द्रुत, शस्त्र सुसज्जित वीर।
चाले द्रुत ही पकड़नें, आये हनुमत तीर॥

रावण ने यों आयस दीन्हे, मानो हृदय प्रलय ही कीन्हे।
आय पकड़ ना, उनही मारो, जहां मिलै तहँ जाय पछारो॥
दया न कीजो रंचहु वासे, लेवो बदला जाके तासे।
किन्कर सहज क्रूरता धारें, स्वामी शयतें, और प्रजारें॥

दोहा–खोजत सब उद्यान मँह, निठुर सुभटजन वृंद।
लख हनुमत ने समझ लिय, आए करन ये द्वंद॥
तबहिं प्रगट हो सूर्य सम, मनो ग्रीष्म आताप।
भ्रकुटि चढ़ी, अरुणान नयन, होंठ डसत लै चाप॥

सुभटन, विकट वेश लख ज्योंही, थर थर कम्पे, भागे त्योंही।
कछुक् धैर्य धर आगे आये, वृक्ष उपाड़ यहू द्रुत धाये॥
शिला उठाय बहुन को मारी, कड़पै कीन्ही मुष्टि प्रहारी।
मुक्कन मार अनेक पछाड़े, भागे, कोय रहे ना ठाड़े॥

दोहा–गणधर, श्रेणिक सें कहत, हनुमत मनु मृगराज।
प्रलय पवनसम वेग इस, दिय हलाय साम्राज॥
मिलकर बहु बलहीन ये, ना कर सके बिगाड़।
याके तनमँह बल प्रबल, सबही धरे पछाड़॥

हनुमत हिय भी अति रिस छाई, लंकामँह अति धूम मँचाई।
उत्तम भवन सुगढ़ हू ढ़ाये, तत्त्क्षण सबही भूमि मिलाये॥
रत्न वापिका द्रुत ही फोड़ीं, भवनन पंकति सबहिन तोड़ीं।
बांधफोड़, सरवर के लीन्हें, कींचहु कींच मँचा पुर दीन्हें॥

दोहा–अगणित सुभट सँहार दिय, बहु व्याकुलता छाय।
कोय न आवे सम्मुखे, ऐसा तेज दिपाय॥
मह विक्रम पुन रिस चढ़ी, कपि को पीछू काट।
पुन चपलाई को कहै, मसान कर दिय हाट॥

व्याकुल हो गइ जनता सारी, मार पछारें दें किलकारी।
लंका तहस नहस कर लीन्ही, मानों भूरो बनाय दीन्ही॥
यथा प्रजा ह्वै स्वामि विहीनी, याविध गति लंका की कीन्ही।
भागा भाग मंची चहुँओरा, मेघसुवाहन दल लै दौरा॥

दोहा–इन्द्रजीत हू सैन्य ले, याके सन्मुख आय।
मँचा युद्ध घनघोर तब, कहन, न समरथ आय॥
इकला हनुमत केहरी, वे सब मृगन समान।
करे स्ववश या सिंह अब, ऐसा को बलवान॥

सैन्य सहित दोनों भ्रत आये, जब हनुमत ने इन्हें लखाये।
महा युद्ध घनघोर मँचाया, प्रलय काल मनु सजके आया॥
कोय न ठहरे याके आगे, कै गिर गए, कै पाछे भागे।
हनुमत ने रणकेलि मँचाई, जाउर पैसे, फट सम काई॥

दोहा-यों रण लंका मँह मँचो, जहँ दिख मारामार।
तसु वर्णन को कर सकै, जाको आर न पार॥
खरदूषण को लखण जिम, मर्दि मिलाया धूर।
पवनपूत ने ताविधै, कीन्हा चकनाचूर॥

बहुतसमय तक हुइ गहराई, मार मार दुहु ओरहुँ छाई।
इन्द्रजीत पुन पाश चलाके, बांधा हनुमत, दृढ़तर जाके॥
यह लख सबने आनँद धारा, हनुमत, इन्द्रजीत से हारा।
विजय पताका द्रुत फहराई, सब भट मिल जयकार मँचाई॥

दोहा-या पहिले रावण ढिगै, को इक कहै बयान।
खरदूषण का मरण ह्वै, ताका कीन्ह बखान॥
विपदग्रस्त सुग्रीव पुन, राम ढिगै द्रुत आय।
विपति निवारी राम ने, सियकी सुध वह लाय॥

खगन कहेसें, लच्मण जाके, कोटशिला को धरी उठाके।
हनूमान को सबहिं बुलाया, सिया ढिगै द्रुत ताहि पठाया॥
यंत्र भंग हनुमत ने कीन्हा, रचक मरण युद्ध मँह लीन्हा।
तसु पुत्री, वर लीन्हा याको, ये आ पुन समझाय सिया को॥

दोहा-कीन्ह पराभव रानियन, पुन सिय दीन्ह जिमाय।
तँह से आ मारे सुभट, गढ़ को दीन्ह गिराय॥
भवन अनेकों ढाह दिय, वापीं दीन्हीं फोड़।
सरवर के दृढ़ बांध हू, जाके दीन्हें तोड़॥

कींचाकींच मँचाई याने, हाट बनाई जिम उद्याने।
बस्ती में मँच हाहाकारै, जाकूँ पावै, ताहि पछारै ॥
अगणित भटकों याने मारो, रावण को यों भृत्य उचारो।
इन्द्रजीतपुन, तँह पै आया, बांधें हनुमत को ढिग लाया ॥

दोहा-चौ नजरा ह्वै दुहुन मँह, रावण अरु हनुमन्त।
रावण रिपधर यों कहै, सुन लिय तुव विरतन्त ॥
है पापी निरलज्ज तूं, सब विवेक तज दीन।
भिखमंगन का तूं भला, दूतपणा अब कीन ॥

अमिय त्याग कोउ विष जिम चाहै, दूतपणा तिम तुहू निबाहै।
त्रिखंडपति की सेवा छांरी, सेवत, जो अब आए भिखारी ॥
पवनपूत ना यातें मानों, अब तो कोय हीन का जानों।
जारजात अकुलीन दिखावे, सिंह न है अब श्याल कहावे ॥

दोहा-राजद्रोह करकें तऊ, हियमँह नांहि लजात।
बलात मृत्यू आदरै, हुवा चपल कपि जात ॥
यों मनमानें कुवच कह, सुन हनुमत विहसन्त।
ना मालुम काको हुवै, राम लखण सें अन्त ॥

सहसन तिय पै तृप्ति न पायो, मरण होन शठ परतिय लायो।
अमिय त्याग तूं विष को चाहै, शीतज्वर पै हिम अवगाहै ॥
कह्यो कोउ को, एक न मानें, बनत अभागी कुमती ठानें।
होनहार दिख टरत न टारी, गति सारूं मति तूंनें धारी ॥

दोहा–राम लखण आवें इतै, को रोकन समरथ्थ ।
पर तिय रत ह्वै जग्ररनहिं, लेत मृत्यु निज हथ्थ ॥
रत्नश्रवा का नांहि सुत, वह न्यायी नीतिज्ञ ।
तो सम पापी ना जनें, वह विज्ञन - मँह विज्ञ ॥

मालुम पड़त हीन को जायो, हियमँह पापहि पाप समायो।
सत्कृत तोकों नांहि सुहावे, निज तिय तजकें,परतिय चावे॥
जात्तण मरण श्याल का आवै, वन को तज, पुर ओर सिधावै।
यातें अबहु मान ले मेरी, सिय को भेज करै ना देरी॥

दोहा–यों हनुमत के वयन सुन, रावण अति रिसियाय ।
नांहि डरै खल मृत्यु से, दी आज्ञा खगराय ॥
ग्राम मांहि फेरो इसे, बँधा रहै यह क्रूर ।
धिक धिक छिः छिः कह सबहु, देव कष्ट भरपूर ॥

राम दूत ये पुरमँह आया, निंद्य कपूत नीच का जाया।
धिक्क धिक छिः छिः कह धिक्कारो, कंकर धूल शीस पै डारो ॥
नर नारी सब थूकें यापै, करै न कोई करुणा तापै।
द्रुत ले जाव इतै सें याको, मुख ना देखूं कलही जाको ॥

दोहा–भृत्य पकड़ हनुमन्त को, लाये बाह्य निकास ।
तबहिन तोड़ा बंध ये, चाला धरें हुलास ॥
बंध तोड़ जैसे मुनी, जांय शीघ्र शिव लोक ।
चले तथा हनुमन्त हू, लख सिय को दिय धोक ॥

अत्पर चाला द्रुत हनुमन्ता, पदाघात तें किय गढ़ अन्ता ।
लंक कोट विध्वंसा भारी, गमन निरख सिय प्रमोद धारी ॥
पुष्पांजलि पिय प्रती बखेरी, आगम मांहि लगै ना देरी ।
याविध भाव सीय हिय लाई, पिय मिलाप कब हो सुखदाई ॥

दोहा—पूर्व पुण्य अतिशय प्रबल, ता फल हनुमत एक ।
लंका दाही तउ कछू, ना कर सके अनेक ॥
पाप पुण्य द्रुत त्याग दुहु, भजो आतम चिद्रूप ।
"नायक" द्रुत ही शिवलहो, प्रगटै आतम स्वरूप ॥

॥ इति एकादशमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ श्री रामचन्द्र और लक्ष्मण के साथ, अनेक विद्याधर राजावों का दल सहित लंका गमन वर्णन

—वीर छंद—

सैन्य संग लै, हनुमत गवना, प्रमुदत राम लखण ढिग आय ।
जान आगमन पुलकत सब मिल, की अगवानी हिय उमगाय ॥

राघव हियमँह अति उत्सुक ह्वै, वृत्त श्रवण अभिलाषा कीन
आय पवनसुत शीस नाय पुन, भेंटे सबमिल आसन लीन

दोहा-सबहिं दृष्टि हनुमत तरफ, अब का वृत्त सुनाय।
पुलक सकुच हियमँह सबहिं, दिठि टिमकार न लाय॥
छणछण उत्सुक हो रहे, जा विध चन्द चकोर।
ताविध इक चित शान्त ह्वै, निरखें याकी ओर॥

कह हनुमत, सुन राम महन्ता, कीन्हा प्रथम यंत्र का अन्ता।
जाय सीय ढिग ताहि निहारी, मानो दुःख सिन्धु मँह डारी॥
शील निवास, अडोल सुमेरी, विपति बदरिया छाइ घनेरी।
सुभग शरीर सूख ह्वै कांटो, तासदशा लख ममहिय फाटो॥

दोहा-शील डिगावनहित बहुत, रावण कीन्ह प्रयत्न।
रंच न सिय हिय डिग सकी, हारा, करसब यत्न॥
निशिदिन पिय पिय. पिय रटै, करत पीय का ध्यान।
मनु चकवी को निशि हुई, पिय मिल प्रगटै भानु॥

देह नेह को बिलकुल छांड़ी, मनहु तपस्विन आसन मांड़ी।
को कह सांची या चित्रामा, ऐसी हुई तिहारी भामा॥
चूड़ामणी निशानी दीन्ही, अपना सब दुख बताय लीन्ही।
कुशल आपकी निशदिन चावै, दर्शनहित, निज जिया वितावै॥

दोहा-प्रिया आपकी दुःखमय, जीवन रही विताय।
अब जानो जैसी करहु, हे जगपति रघुराय॥

सुन संदेश अरु तसु दशा, शोक राम उर छाय।
पड़ तुषार जिम कमल पर, तिम रघुमुख कुम्हलाय॥

दीर्घ उसास राम अब लेवें, भाग्य उलाहन अति ही देवें।
यों लख लच्मण धैर्य बँधावो, प्रभो न, रंच आप अकुलावो॥
चिन्ता, सब शुभ कार्य विनाशै, पुरुषारथ, शुभ कार्य प्रकासै।
द्रुत सुग्रीवहिं, आयस दीन्हें, बस, अब यह ही निर्णय लीन्हें॥

दोहा-जावें लंका शीघ्र हम, तनक विलम ना लांय।
तरहिं बाहुबल सिन्धु या, यान बैठकर जांय॥
यों सुन इक खगपति कहै, करहु नाथ हित बात।
हैं हम सब सँग आपके, होय न सबका घात॥

नाथ, हिये मँह विवेक धारो, उकताकें, ना कछू उचारो।
जाय कपेश्वर, लंका मांही, कीन्ह उपद्रव शंके नांही॥
रावण हियमँह रिस उपजाई, मनहु मृत्यु की गाज बनाई।
यों अति भयप्रद बयन उचारा, जामवन्त सुन तिहिं ललकारा॥

दोहा-ह्वै खगपति पुन यों उचर, होय सिंह, बन श्याल।
ना सोचै, वा शीस पै, मड़राया है काल॥
सिय ना लिय, मनु यम घुटी, लीन्ही गले उतार।
उगलत, लीलत ना बनें, दोउ तरफ की मार॥

ग्रीष्म सूर्य यद्यपि तपाया, केतु ग्रसत, सब तेज नशाया।
ताविध ही अब रावण जानो, सारो यश, परताप नशानो॥

रामलखण बलवीर महन्ता, जिनके बलका नांही अन्ता।
संगै सुग्रीवरु हनुमाना, तिनके बलका नांहि प्रमाना॥

दोहा—पुन हम सब सहसरु नृपति, रामलखण के संग।
भामण्डल ही एकला, महाबली परचंड॥
यों आश्वासो याहि को, ताहि समय खगराय।
रामलखण की उर निरख, भयप्रद मुख दिखलाय॥

भ्रकुटि कुटिल नयनन अरुणाई, करन प्रलय मनु साज सजाई।
दृग तरेर, धनु ओर निहारें, कुपित काल सम रूप सम्हारें॥
विकट डरावन, लख खग सारे, डरपे, पुन ना कछुहु उचारे।
किन्तु, परन्तू यदी उचारें, सबहिन कें ये दोउ सँहारें॥

दोहा—भय, विवेक, आलस, अमल, सुख, दुख, हेत, अहेत।
मन महीप के आचरण, दृग दिवान कह देत॥
यों लख, ना, नू बिन किये, चलन भये तैयार।
सज समाज रण हेत सब, ह्वै विमान असवार॥

सांप छछूंदर की गति हेरी, उगलत, लीलत पीर, घनेरी।
ना कर दें, तो ये हू मारें, उतैं जांय, दशमुखहु सँहारें॥
दोउ भांति, दिख रहि विपदाई, भयप्रद दशा सबहिं उर छाई।
पै कायर हो, घर ना पैसें, मरण भलो अब, सोचै यैसें॥

दोहा—मनकीगती विचित्र जनु, क्षण कायर, क्षणशूर।
क्षणक रंक, क्षणमँह धनी, क्षण नियरे, क्षण दूर॥

मनके मते न लागिये, मनके मते अनेक ।
जे मन पै असवार है, वे लाखन में एक ॥

राम लखण सँग सजे उताले, धर धीरज खग सबही चाले ।
सोचें राम लखण के मांही, रावण में बल तेता नांही ॥
लछमण तनक देर ना कीन्ही, कोटि शिला द्रुत उठाय लीन्ही ।
यों चिन्तत ही धीरज धारे, द्रुत पयान के बजे नगारे ॥

दोहा—समर वाद्य का शब्द सुन, हरषे शूर अपार ।
गूँज रही दशहों दिशन, जय ध्वनि जय जयकार ॥
होन लगे शुभ शकुन तब, जय सूचक सुख दान ।
मगसिर बदि पञ्चम दिवस, इततें कीन्ह पयान ॥

अग्नि शिखा निर्धूम सु देखी, ध्वनि मयूर शुभ शकुन विशेषी ।
वनिता वस्त्र विभूषित पाई, नृत्य गीत ध्वनि श्रवणन छाई ॥
रथ सछत्र हीसें सु तरंगा, हेम कलश निर्मल जल गंगा ।
ध्वनित सङ्ख ध्वनि विजय सु भेरी, शुभ जन मङ्गल कीर्ति उचेरी ॥

दोहा—इत्यादिक शुभ शकुन युत, राम लखण सुग्रीव ।
दल बल सजि सब सँग चले, खगपति बली अतीव ॥
नरपति खगपति मिल सबै, आय करें सुर सेव ।
हनूमान के सम्मुखें, कांपै नर खग देव ।

विश्व विदित हनुमन्त कहाया, दूज नाम श्री शैल लहाया ।
यथा नाम तस गुण हू व्यापै, देख सुभटगण थर-थर कांपै ॥

सूर्य चन्द्र सम चँवर सुहाये, ढुरें शीस पर अति द्युति छाये।
महा शूर ये सब मँह जानो, यों अनेक खगपती प्रमानो॥

दोहा—विश्व विदित खगपति चले, राम लखण के साथ।
निज-निज ध्वज निज चिन्ह युत, मुकुट विराजित माथ॥
अग्रेसर सेनापती, भूतनाद कहलाय।
ता पीछे सब सजि चले, मुकुट बंध खगराय॥

वेलंधरपुर प्रथम लखाया, नृप समुद्र रण करने आया।
महायुद्ध घनघोर मँचायो, इततें नल नृप सन्मुख धायो॥
दोउ वीर अति शस्त्र चलावें, बहुत समय तक रार मँचावें।
पुन समुद्र को नल ने बांधा, प्रबल युक्ति से याको सांधा॥

दोहा—पाय शरण श्रीरामका, हरषा नृपति समुद्र।
पुरुषोत्तम का संग है, हुआ हृदय प्रतिबुद्ध॥
जैनेतर याविध कहत, राम, समुद्र लिय बांध।
बांधा नृपति, न जलनिधी, प्रबल युक्ति से सांध॥

नृप समुद्र, कन्या परिणाई, लक्ष्मण से सहवास लहाई।
जाय, सुवेल नृपति कें जीतो, विविध केलि मँह समय वितीतो॥
कर प्रयान अब जैहैं लंका, बजहै तहां विजय का डंका।
उतंग सुवरण कोट दिखावें, रत्नन ज्योती भवन सुहावें॥

दोहा—दिख रहि लंका दूरसे, शोभित स्वर्ग समान।
हंसद्वीप डेरे किये, जीत नृपति, या थान॥

भामण्डल से मिलनहित, यँहपै डेरा कीन।
ताढिग भेजा दूत इक, तनक विलम ना लीन॥

पुण्यवन्त, सबथल सुख पावें, इच्छित वस्तु स्वतः ढिग आवें।
मगनृप जे रावण आधीना, तिननें शरण राम का लीना॥
धर्मवन्तका जगहै चेरा, मिलै सुयोग लगावे फेरा।
यातें धर्म सदा ही ध्यावो, अपना आतम रूप लखावो॥

दोहा—स्वातम, स्वात्महि मँह लसत, जड़मँह व्यापत नांहि।
शठ ना याविध लखत, पुन, ढूंढै जड़के मांहि॥
भेदज्ञान का बुधजन, करत सदा अभ्यास।
"नायक" तेही शिव लहत, करें कर्म का नास॥

॥ इति द्वादशमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

विभीषण का श्रीरामचन्द्र जी से मिलाप तथा भामण्डल का आगमन वर्णन

वीरछन्द—

आया जान समीप राम दल, लंकेश्वर अति क्रोधित होय।
हर्षित हुये सुभटगण मन में, बिलखे कायर, साहस खोय ॥
बैठा आसन पै लंकेश्वर, भरा खचाखच सब दरबार।
बोला विनवत तभी विभीषण, हे भ्राता सुन विनय हमार ॥

दोहा–कलह हरन शान्ती करन, न्याय नीति अनुसार।
हितकारक सुखप्रद अतुल, मार्ग प्रदर्शनहार ॥
आप मुझे पूर्वं कहा, नित हित मोहि बताव।
यदी चूक होवै कदा, तदि विवेक दर्शाव ॥

सूर्य प्रभा जिम संध्या रोकै, पर तिय तिमिर सुयश रवि लोपै।
हिय विवेक यातें उपजावो, सियहिं राम ढिग वेग पठावो ॥
काहु भांति या अनुचित नांही, सुयश सौख्य पूरै जग मांही।
आप अतुल सुख निद्रा सोवो, विपति बदरिया क्षणमँह खोवो ॥

दोहा–अतुल भोग भोगत सुखद, पुण्योदय स्वाधीन।
परतिय निजगृह लाय अब, होवत पर आधीन ॥
तुम्हें न शोभै या कुकृत, चिन्ता प्रबल सताय।
याभव परभव दुखद नित, विरथा जीवन जाय ॥

यातें मेरी विनय सुनीजे, विपति विदारक सीख गहीजे।
आये राघव स्वयं यहां पे, भेजो सिय को वेग तहां पे ॥
नाम जानकी याका जानो, लेय जान या भांति प्रमानो।
जान जाय पुन का हो शोभा, वृथा मँचा दुहु उर तें चोभा ॥

दोहा—सुनत विभीषण का वचन, इन्द्रजीत रिसयाय।
जानें तात स्वभाव को, तजें न जोन गहाय ॥
हठयुत अब सिय लाय गृह, तजन चहै ना तात।
अभिप्राय यों जान हिय, नांहि सुहाई बात ॥

कहा विभीषण से द्रुत याने, सीख देन तुम बनत सियाने।
चुपो, नांहि अधिकार तिहारा, कायर बन यों वचन उचारा ॥
बैठो गेह विवर में जाके, भय ना व्यापै तुम्हें सिया ते।
यातें ऐसी सीख सुनावो, मान हान पे ध्यान न लावो ॥

दोहा—करत प्रलाप प्रमत्त सम, रे कायर, हत ज्ञान।
रमणी रतन लहाय पुन, तजता मूढ़ अजान ॥
वीर न छांड़ें निज विरद, चहै प्रान हू जांय।
ह्वै निर्भय संग्राम मँह, अपनी टेक निबांह ॥

सुना विभीषण अधवच याका, पुष्टि करत अन्याय पिता का।
येहू गर्ज ताहि से बोला, मानो गिरा तोप का गोला ॥
रे पापी ! अघ पोप कुकर्मी, कुल शशि राहु महान अधर्मी।
तूं सुत नांहि रिपू है याको, कुगति करन दुख देन पिता को ॥

दोहा—शीत वाय पीड़ा ग्रसित, शीतल करै उपाय।
दाह दहत, दवमँह जरत, ताहि अग्नि प्रजलाय॥
विषय चाह पितु अँधभयो, तऊ करत तूं पुष्ट।
मैं वर्जत तसु हित करन, तापै होवत रुष्ट॥

यातें कुशल रहै अब कैसे, पोषन कुमति पुत्र तुव ऐसे।
निर्मल वंश कलंक लगाके, चह जिउँ मृतक समान बनाके॥
वीरपणा को पुनहु सराहै, हेम रत्न मय लंक नशाहै।
धर कुबुद्धि तुव पितु सिय लाया, सिय न जान, विष बूटी खाया॥

दोहा—सिंह सदृश लच्मण प्रबल, तुम गज रंक समान।
सह न सकत शर प्रखरतर, चण में लेहै प्रान॥
मुकुटबंध खगपति विपुल, इक से एक अतीव।
आय मिले हनुमन्त से, भामण्डल सुग्रीव॥

वचन विभीषण के हितकारी, पै न सुहाये, हिय दव जारी।
असि गह रावण, कहि हिय रोसे, तूं न जाना, कहत हम कोसे॥
मारन हेत हुवो ये ठाड़ो, तबहिं विभीषण थंभ उपाड़ो।
हनन परस्पर उमगे दोनों, सचिवन कीन्हो बीच बिचोनों॥

दोहा—गए विभीषण निज भवन, रावण हू निज मांहि।
हूवा रावण अति कुपित, हिये समावै नांहि॥
इंद्रजीत घटकर्ण से, रावण ने कह दीन।
शीघ्र हतों मैं वाहि को, यों निश्चय मैं कीन॥

नांहि अंग प्रतिकूल सुहावें, मेरो ही, गृह आग लगावें।
यातें याको वेग निकासो, मेरी आज्ञा ताहि प्रकासो॥
इतने पर भी वा ना मानें, मो सो वैरी, और न जानें।
कैसे बात छिपै अब ऐसी, प्रगट हुई, जो कहि थी जैसी॥

दोहा–सुनत विभीषण या विधें, कुपित हुआ मन मांहि।
मैं क्या कम हूं वाहि से, रत्नश्रवा सुत नांहि॥
मैंहि स्वयं त्यागो चहत, वानें ही कह दीन।
वेग सजा दल आपना, तीस अक्षौहणि लीन॥

चला विभीषण हर्षित होके, मनो विनाश लंक का जोके।
भ्रात संग ना न्याय विराधों, चाहे सेवा परहिं अराधों॥
न्याय नीति की विजय सदा है, गहै आपनी कुशल जु चाहै।
यों विचार द्रुत चला यहां तें, राम लखण ढिग पहुँच तहां तें॥

दोहा–धिक धिक काम विकारको, जुदे किये दोउ भाय।
ऐसी मोह विडम्बना, मुख से कही न जाय॥
यों अक्षौहणि तीस का, लख एता परमान।
गज हय रथ असवार है, और पियादे जान॥

तीस क्षौहणी इता कहावें, तास प्रमाण शास्त्र बतलावें।
षट लख छप्पन हजार हाथी, सौ ऊपर रथ इतनहि साथी॥
उनिस लाख अड़सठ हज्जारा, अश्व तीन सै ऊपर सारा।
बत्तिस लख अस्सी हज्जारे, पांच शतक प्यादे सँग सारे॥

दोहा—निरख विभीषण का कटक, सारे कपि, कप जांय।
मनु तुषार ही आ गयो, म्रान बचन ना पांय॥
राम लखण युत नृपति सब, शस्त्रन ओर निहार।
पुलक सकुच वीरन हृदय, मुख छवि तेज अपार॥

आयस पाय दूत इक आया, रावव चरणन शीश झुकाया।
सादर मञ्जु वयन यों बोला, निज आगम का आशय खोला॥
जब से रावण सिय को लाया, तबसें बन्धु द्रोह उपजाया।
आज सर्वथा बिगड़ी जानो, यातें आय शरण निज मानो॥

दोहा—शरणागत प्रतिपाल तुम, न्यायवंत नीतिज्ञ।
यातें तुव सेवा करहुँ, सर्व श्रेष्ठ गुण विज्ञ॥
अपनावो निज जानकें, कहत विभीषणराय।
यों कह नायो भाल निज, अधिकहि विनय दिखाय॥

श्रवत राम, सब ओर निहारा, सबने मिलकर मंत्र विचारा।
सुमति सचिव ने इमहिं उचारी, संशय उठत हृदयमँह भारी॥
धरें कपट रावण भिजवाया, विघ्न करन ये इतपै आया।
राजनीति का कहा ठिकानो, साम दाम दंडादिक जानो॥

दोहा—याकीसुन, दूजा सचिव, कहै झूंठ ये बात।
जबसे सिय वाथल गई, मँचा बहुत उत्पात॥
न्यायवंत धर्मात्मा, प्रसिध विभीषणराय।
तत्त्वज्ञान वेत्ता कुशल, तिहिं न अनीति सुहाय॥

भाई मिल पुन बिछुड़े भाई, कर्मन गती विचित्र कहाई।
यामें रंच न अचरज मानो, अब मैं ताकी कथा बखानो॥
गिरि, गोभूत बंधु द्विज भारी, पुरमँह दुहुन श्रेष्ठता धारी।
सूर्यमेघ नृप अरु तसु रानी, देवें दान द्विजहिं मन ठानी॥

दोहा—आये दोनों बंधु द्विज, नृपति स्वर्ण तिहिं देय।
कीन्हे हिंसक भाव दुहु, कपट करन उमगेय॥
यातें असत न मानिये, है जग की यह रीत।
भ्रात भ्रात की को कहै, मां पितु हों विपरीत॥

यापै एक कथानक जानो, कौशाम्बी इक नगर बखानो।
गृहधन तास तिया सुखदानी, अहि,महि सुत, इक सुता कहानी॥
समय पाय पितु मरण लहाया, तब सब मिल इक मतो रचाया।
सम्पति बेंच रतन इक लीनो, ताको माय हाथ में दीनो॥

दोहा—उठी भावना मातु मन, दुहु सुत डारों मार।
तुरत दीन्ह अहि कर-विषं, यहु कों उठो विकार॥
याने दिय द्रुत महिदेव को, वाहू कियो कुभाव।
सबनं तब परगट किये, अपने अपनं भाव॥

सुन सब मनहिं प्रतीती आई, रत्न प्रभाव कुमति उपजाई।
कर विचार कालिन्दी डारो, धीवर ने पुन ताहि निकारो॥
धीवर से भगिनी ने लीन्हा, रत्न लेय यों कुभाव कीन्हा।
विष खिलाय कें सबको मारों, बचै न कोई, तब सुख धारों॥

दोहा–यानें फेंका रत्न द्रुत, सबसे भाव बताय।
रत्न धरा जब कर विषें, यों कुभाव उपजाय॥
चूर्ण कीन्ह तब रत्न को, कालिन्दी में डार।
ह्वै उदास जगसे सभी, तजा परिग्रह भार॥

विपिन जाय जिन दीक्षा धारी, रत्न योग निज गतिहि सुधारी।
बिगरत बनत देर ना लागै, एक गहै अरु दूजो त्यागै॥
यातें निमित ओर ना देखो, उपादान को मूलक लेखो।
उपादान जब शुधता धारै, निमित न कबहूं भाव बिगारै॥

दोहा–सबहिन मिल निश्चय कियो, नांहि छद्म की बात।
आगम आज्ञा दी तबहि, राघव हिय हुलसात॥
जाय दूत कहि स्वामि से, जो आज्ञा दिय राम।
श्रवत विभीषण मुदित चित, आय राम के धाम॥

अतिशय तेज राम का देखा, सर्वश्रेष्ठ पुरुषोत्तम लेखा।
हर्षित होकें शीस झुकाया, रघु ने याको हृदय लगाया॥
कहै विभीषण सुन हे स्वामी, यामव के हो ईश्वर नामी।
श्रीजिन यामव परभव ईशा, मम हिय धारा विश्वावीसा॥

दोहा–सुन रघुपति प्रमुदित हृदय, दिय याको सन्तोष।
करों तोहि लंका धनी, बहु विध दीन्हा तोष॥
भामण्डल ताही समय, राघव के ढिग आय।
हुये अनन्दित लखत सब, जिमि चकोर शशि पाय॥

विजयारधपति सब हुलसाये, राम लखण का तेज लखाये।
अतुल पुण्य इन दुहुन कमाया, यातें उत्तम वैभव पाया॥
स्वतः विभीषण भृत तज आयो, भामण्डल सा खगपतिपायो।
जाके दलका ओर न छोरा, दोय सहस चौहणि दल जोरा॥

दोहा—दी आयस रघुपति मुदित, करन सैन्य प्रस्थान।
सुन निदेश हर्षे सकल, वीरन हर्ष अमान॥
चली सैन चतुरंग सजि, दक्षिण लंका ओर।
मनु उमड़त है उदधि जल, रव छाया घनघोर॥

वानरवंशी अग्र कहाये, रण थानक मँह द्रुत ही आये।
विंशति योजन तसु चौड़ाई, इमि विस्तृत कछु अधिक लँबाई।
समर स्थल यह, निश्चय कीन्हो, डेरा डाल यहां पर दीन्हो।
गय हय रथ का मण्डल साजे, साज सजाय अग्र थे प्यादे॥

दोहा—रावण हू का दल उमड़, मनहु सिन्धु उमड़ाय।
चार सहस अक्षौहिणी, लाया सैन्य सजाय॥
तीनखंडका अधिपती, चक्ररत्न का ईश।
वनिता सम वसुधा करी, यातें तुछ सब दीस॥
धिक धिक काम विकार को, एक सिया के काज।
रणमँह अति संहार हो, होवे दुहुन अकाज॥
यातें ज्ञानी शान्ति तें, जीतें मदन विकार।
"नायक" रमत स्वरूप नित, अविनाशी अविकार।

॥ इति त्रयोदशमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ रामचन्द्र, रावण सैन्य प्रमाण और रावण का युद्धार्थ निकसने का वर्णन

वीरछन्दः—

श्रेणिक प्रश्न कीन्ह गणधर से, कहो अक्षौहणि दल परमान।
सुन गणधर ने प्रमुदित याविध, संक्षेपत ही कीन्ह बखान॥
ताके भेद अष्ट बतलाये, पत्ति, सैन्य, सेना तृतीयाय।
गुल्म, वाहिनी, प्रतिना षष्ठम, चमु, अनीकिनी अष्टम गाय॥

दोहा—इक गज, रथ, त्रय अश्व जनु, पांच पियादे जान।
पत्ति भेद जानो प्रथम, दूजा तिगुनो मान॥
दूजे तें तिगुना करो, तीजा जानो भेद।
याविध अटम तक करहु, संशय भाव उछेद॥

यों अनीकिनी दल परिमाना, गणधर ने संक्षेप बखाना।
इकविंस शतक सतासी हाथी, है तेते ही जसु रथ साथी॥
अरु पेंसठ सै इकसठ घोड़ा, पुन समूह प्यादन का जोड़ा।
दश हजार नौसै पेंतीसा, दश गुणकर अक्षौहणि ईशा॥

दोहा—सब इकत्र कर कहत यों, अक्षौहणि परमान।
इकिस सहस अरु आठसै, सत्तर गज रथ जान॥
पेंसठ सहसरु छह शतक, दश ऊपर हय मान।
एक लक्ष नव सहस अरु, शतक हूंठ पदवान॥

एक अक्षौहणि दल परमाना, दोय सहस राघव संग आना।
चार सहस रावण सजवाया, आरत रौद्र भाव उपजाया॥
इक न्यायी दूजा अन्यायी, इक सिय कारण नौबत आई।
होनी कबहुँ टरै ना टारी, ऐसी केवलि ध्वनी उचारी॥

दोहा-प्राण विसर्जन सहज लख, सिया न छांड़ी जाय।
विषय कषायन की दशा, वरणन में ना आय॥
सहस अठारह नारि गृह, तऊ न तृप्ती धार।
एक सिया के हेत अब, हो अगणित संहार॥

बलहिं वीर अनुमान लगावें, कइ रावण, कइ लखण बतावें
कइ राघव की करें प्रशंसा, कई कहें हनुमत बलवंका॥
इन्द्रजीत घटकर्ण बताये, कइ सुग्रीवादिक ठहराये।
या प्रकार बल तोलें शूरा, निज भावन वश आशय पूरा॥

दोहा-लंका से निकसत समय, सुभट नारि बतलांय।
घाव देख तुव गात मँह, अति प्रमोद हम पांय॥
अति उमंग हिरदय बढ़ी, फटा पुराना घाव।
रुधिर श्राव लख सुभटनी, वीरपणा दर्शाव॥

सुभट कामिनी प्रेम उछाली, दै उत्तेजन पछलग चाली।
कई कहें रण पीठ न दीजो, चाहे मरण भले ही लीजो॥
देखूं घाव तिहारी छाती, वीरपणा अनुपम दर्शाती।
कायर होय युद्ध से भागो, गृह ना ऐयो जीवन त्यागो॥

दोहा—राणी रौताणी सभी, निज पिय से बतलांय।
बखतर टोप लगायकें, कर से शस्त्र सजांय ॥
धन्य धन्य है या समय, खाया कर्ज चुकाव।
स्वामि भक्ति तत्पर रहो, परम्परा प्रगटाव ॥

स्वामी काज कृतज्ञता पूरै, ताहि अमर पद निकट, न दूरै।
मैं भी जीवन सफल मनावूं, वीरपती पत्नी कहलावूं ॥
याविध अति उत्साह दिलाया, वीरन हर्ष न हिये समाया।
चाले प्रमुदत विजय विचारें, कुकुंम टीका विरद उचारें ॥

दोहा—युद्ध करन हित प्रथम ही, निकले हस्त प्रहस्त।
हाथी के रथ पर चढ़े, शूरन मांहि प्रशस्त ॥
सेना नायक हैं दोउ, सज चतुरङ्गी सैन।
भुजा फड़कती युद्ध को, अरुण भये दोउ नैन ॥

सूर्य समान प्रतापी राजा, उमगत चले स्वामि हित काजा।
तिनके साथ बड़े सामन्ता, व्याप रही शुचि कीर्ति दिगंता ॥
केई शूर व्याघ्र रथ चाढ़े, कइ गज पै चढ़ चले अगाड़े।
जिनकी संख्या कई हजारा, निज निज वाहन पै असवारा ॥

दोहा—उमगत सुभटन के हृदय, हम आगे हो जांय।
बढ़ें परस्पर एक इक, हिये मांहि हुलसांय ॥
गणधर श्रेणिक सें कहत, राक्षस वंश कुमार।
निकसे ढाई कोट द्रुत, दिपें सूर्य उनहार ॥

मध्य मेघवाहन सुकुमारा, इन्द्रजीत बलवान अपारा।
कुम्भकर्ण रथ सूर्य समाना, दिप त्रिशूल अरु आयुध नाना॥
दिपते रावण पुष्पक मांही, शोभा वरणि सकै कोउ नांही।
मनो इन्द्र ही दीपै भारी, देवन सेना सङ्ग अपारी॥

दोहा—महितें अम्बर लों तहां, सैन्यहि सैन्य दिखाय।
यों रावण खगगण सहित, मुदित युद्ध थल आय॥
भामण्डल सुग्रीव प्रति, लहा दशानन क्रोध।
रिपुहिं सँघाती ये भये, रंच न कीन्हा बोध॥

हम भूमिज को सहाय देवें, महा विषम फल भविष्य लेवें।
रंच न हिय मँह याविध सोचा, किय मनमानी जो हिय रोचा॥
याविध रुपत चला लंकेशा, हैं अशकुन तउ गिनें न लेशा।
वर्जत अशकुन अवश्य मानो, क्षय होवैगो निश्चय जानो॥

दोहा—सेही मण्डल बांध कें, शब्द भयानक कीन।
मड़राये हें गृद्ध अति, क्षयहिं सूचना दीन॥
स्वान स्याल रोदन करें, व्याकुल हुये अतीव।
गमन वर्ज हित की कहें, मानो सुखद सदीव॥

लख रावण मन मांहि विचारी, दिखते अशकुन अति भयकारी।
पै मैं वीरपणा ना त्यागों, ना लौटों ना रण से भागों॥
कुमति विवश परतिय रत चाहे, यातें जबरन टेक निवाहे।
मन भरमत जिमि भ्रमत मतंगा, वशी हुवा उठि दाह अनंगा॥

दोहा–होनहार वलवन्त अति, सके न इन्द्र निवार।
तब को समरथ टारिवे, कर्म उदय अनिवार॥
पाप पुण्य का ठाठ जनु, दीखै या जग मांहि।
जग विपदा, को टारिवे, ज्ञानी रमते नांहि॥

राक्षस दल जब सन्मुख आया, राम लखण का दल हरपाया।
दोनों सेना सन्मुख ठाड़ी, करै वार अब कौन अगाड़ी॥
इमि विचार सज सज निजकक्षा, हृदय विजय की अतिशय इच्छा।
मनो काल ही सजके ठाड़ा, सुघर सजा यमराज अखाड़ा॥

दोहा–काल भखत है सबहिन को, जो जिय या जग मांहि।
रत्नत्रय धारें सुधी, काल भखत है नांहि॥
यातें रत्नत्रय भजहु, अमर होन के काज।
"नायक रमत स्वरूप नित, मिलै मोक्ष साम्राज॥

इति चतुर्दशमः परिच्छेदः समाप्तः

अथ रावण के सेनापति हस्त प्रहस्त का, रामचन्द्र के सेनापति नल, नील द्वारा मरण वर्णन

वीरछन्दः—

रावण सैन्य निरख कर सन्मुख, सजे राम दल के वरवीर ।
हनूमान नल नील आदि सब, पहुँचे आय शत्रु के तीर ॥
नृप अनेक निज वाहनि-वाहन, सज सज पहुँचे रणमँह आय ।
गज हय व्याघ्र नाहरन पै चढ़, आये रणमँह वाद्य बजाय ॥

दोहा—आय विभीषण मिल सबै, मणिमय दिपत विमान ।
राघव लक्ष्मण रथ चढ़े, वाहन जुपे महान ॥
कपिवंशी उद्धत हुये, वादन ध्वनी अपार ।
मानो शय ही देत यों, वेग मँचावो रार ॥

सब बातन का समय कहावै, निमित पाय जिय भाव उपावें ।
रणमँह वीर हृदय उत्साहे, अरि विध्वंशों, हियमँह चाहे ॥
शक्ति लगाय जूझते वीरा, मदद आश तज रिपु के नीरा ।
अंग बचाय आपना लेवें, घाल शत्रु पे अपना देवें ॥

दोहा—भिड़े दोउ दल गर्जते, मनो सिन्धु उमड़ाय ।
विहँसत शब्द उचारते, को सन्मुख मम आय ॥
जना वीर जिस मातु ने, युद्ध करन को आव ।
शक्ति दिखावो आपनी, प्रभु का कर्ज चुकाव ॥

श्रवणत वीर उमग के आये, अपना जौहर आय बताये।
एक गिरा, दूजा बढ़ आवै, रिपु मारन हित शस्त्र चलावै ॥
गय हय अरु रथ के असवारे, भिड़े परस्पर वार सम्हारे।
वाहन जूझे आपस मांही, गय हय ही, जिन स्वामी नांही ॥

दोहा—मरण स्वामि का हो गयो, जूझें वाहन वीर।
भक्ति परायण स्वामि के, धरें सुंड शमसीर ॥
यों अचरज को देखकें, वीर न कोउ समुहाय।
मनो काल ही आ गयो, ऐसी मार मँचाय ॥

यामें रंच न अचरज मानो, निमित पाय परिणाम बखानो।
चलै बयार शीत या ताती, परिणामन गति तिमहिं सुहाती ॥
वाहन हू पंचेन्द्री सेनी, पूर्व समर की शिक्षा लेनी।
यातें अरि पै दाव लगावें, प्रभु रक्षें, निज प्राण गमावें ॥

दोहा—शिक्षा का फल देखिये, प्रभु रक्षा कर देंय।
वार बचावें शत्रु का, वासे बदला लेंय ॥
सीख समस्या ग्रहण कर, वाहन होंय प्रचंड।
समर मांहि ये ही तुरत, करें अरिन का अंत ॥

शक्ति सेल असि चक्र कुठारा, गदा बाण इति शस्त्र अपारा।
लंक सैन्य ने अतिहि चलाये, कपिवंशिन कें शीघ्र दबाये ॥
जिम केहरि, गज यूथ पछाड़ै, तिम राक्षस दल आय दहाड़ै।
लख यों क्षोभ मँचा कपि मांही, खिगी सैन्य कोउ ठहरै नांही ॥

दोहा—लखा कपिनपति सैन्य निज, क्षण क्षण हटती जाय।
कुपित हुये बहु वीरवर, उमग वेग बढ़ आय॥
निजदल को आश्वासते, कीन्हा कठिन प्रहार।
राक्षसदल संहार दिय, मारे शस्त्र अपार॥

खिगी राक्षसन की द्रुत सेना, कोय न ठहरन, धीर धरे ना।
लख यों हस्त प्रहस्ता ज्योंही, समर करन को उमगे त्योंही॥
भ्रकुटि चढ़ीं नयनन अरुणाई, आवत मारामार मँचाई।
कपिन समूह समर से भागे, राक्षस दलपति पीछे लागे॥

दोहा—लखा नील नल, कपिनदल, पीछे हटता जाय।
रामपक्ष के दलपती, उमगे दोऊ भाय॥
आये हस्त प्रहस्त ढिग, कीन्हें शस्त्र प्रहार।
लगे परस्पर घालनें, मनहु वर्स जल धार॥

कपिवंशी सुग्रीव कहाया, ताके हैं ये दोऊ भाया।
काका के सुत नल अरु नीला, कीन्ही दोउन अति रण लीला॥
नल ने उछल हस्त संहारा, नील, प्रहस्तहिं क्षण में मारा।
मौत लिखी मनु इन कर हीसे, रावण दलपति गय दुह जीसे॥

दोहा—सेनानी के मरत ही, दल विचलित हो जाय।
सेना नायक सबल हो, सैन्यहिं धीर बँधाय॥
बिन प्रभु, धीर न आयवै, लाखन करो उपाव।
माला बिखरत ही तथा, निकसै मोती आव॥

यों सुन श्रेणिक गिरा उचारी, उठा मुझे हिय संशय भारी।
हस्त प्रहस्त महा बलवंता, हुआ दुहुन का चणमें अंता॥
कह गणधर, सुन नृप, हिय चाहा, पूरव भव इन वैर त्रिसाहा।
तातें दोनों मरणहिं पाये, चणमें उनने मार गिराये॥

दोहा–पूरवभव कृत बंध फल, या भव में जिय लेय।
जो जाको पूरव हनें, वह या भव हन देय॥
जो जाकी रचा करै, वह ताको रचाय।
पूरवभव संबंध जनु, लहै परस्पर आय॥

कुशथल नग्र सुहावन व्यापै, इन्धक पल्लव विप्र तहां पै।
बंधुन दुहु गृह निर्धनताई, पुण्ययोग शुभ संगति पाई॥
नृपति दान हित इन्हें बुलाये, अन्य विप्र हू तँह पै आये।
बटत दानमँह विवाद डारे, इन्धक पल्लव उननें मारे॥

दोहा–इन्धक पल्लव मर दुहू, भोगभूमिया होय।
तँहतें सुर पद पायकें, चय नरभव लह दोय॥
खगपति नल अरु नील हो, वे हुव हस्त प्रहस्त।
पूरव के सम्बन्ध तें, इन जीवन किय अस्त॥

यातें कभी न वैर बढ़ावो, फल नियमित करनी का पावो।
पुण्य पाप का फल यों व्यापा, एक पुण्य लह दूजा पापा॥
पुण्यी विजयहिं नियमित पावै, पापी हारै प्रान गमावै।
ऐसी जग की रीति कहाई, तजो पाप, हो पुण्य सहाई॥

दोहा—पाप पुण्य दुहु जगत जड़, क्षण बढ़ क्षण घट जाय।
गोरखधंधा सम फँसै, कभी न उबरन पाय॥
ज्ञानी मेंटै दुहुन को, शुद्धातम पद सेय।
"नायक" रमत स्वरूप नित, कर्मनाश कर देय॥

इति पंचदशमः परिच्छेदः समाप्तः

अथ गरुणेन्द्र द्वारा श्री रामचन्द्र, लक्ष्मण को विद्याओं का लाभ वर्णन

—वीर छंद—

हस्त प्रहस्त मरण सुन रावण, हुवा हृदय में अति दिलगीर।
भेजे महा सुभट द्रुत रावण, राजत जँह नल नील सुवीर॥
कपिवंशिन सेना विचलावन, शत्रु पक्ष योद्धा बलवन्त।
मार भगाये तउ कपिवंशहु, जूझे इत उत के सामन्त॥

दोहा—परस्परहि ललकारकें, जूझें समतर जोड़।
मारहि मार मँचायवें, लगा परस्पर होड़॥
एक नशै दूजा अरै, आके याके थान।
अपने शस्त्र प्रहार तें, लेवै अरि का प्रान॥

विचलित लख कपिपति निज सेना, हनूमान चित धीर धरै ना।
बढ़ा कुपित हो आगे आया, अतिशय मारामार मँचाया॥
पवनपूत अतुलित बलवीरा, टिका न कोई याके तीरा।
विपिनसिंह ही आया जैसे, भागें श्याल लखत ही तैसे॥

दोहा—कहहिं परस्पर सुभट गण, कपिध्वज रण को आय।
घनी तियां विधवा करै, देहै प्रलय मँचाय॥
माली सन्मुख आय द्रुत, रचा विकट संग्राम।
हनूमन्त ने ताहि झट, पहुँचाया यम धाम।

हता लखा, वज्रोदर आया, हनूमन्त का रथहिं नशाया।
यों लख हनुमत हू रिसयाकें, मार कृपान दीन्ह ढिग जाकें॥
मुवा लखा अय जम्बूमाली, पवनपूत से एक न चाली।
पै इक वाण अचूक चलाया, हनुमत के तन घाव रचाया॥

दोहा—समझा हनुमत कमलसम, रंच न की परवाह।
वैरी नाशन को प्रबल, उठी हृदयमँह चाह॥
भ्रम शर को घाला तुरत, अरि रथ के हरि छूट।
महा भयानक डाढ़ तिन, प्राण अरिन के लूट॥

हुई त्रसित राक्षसन सेना, दामिनि सम दमकत हरि नैना।
बदन कराल विकट तिन डाढ़ें, सामन्तन का उदर विदारें॥
मनहु तुषार तरुन पै छाये, सकल सुभट तरुसम मुरझाये।
अति व्याकुलता दल मँह छाई, जलचर सम कल्लोल मँचाई॥

दोहा—हुई सकल सेना विकल, जिम सन्सारी जीव।
भवसागर के दुख असह, भवभव सहै सदीव॥
यों हनुमत के वार सें, त्रसत सकल सामन्त।
आवें सम्मुख शूर जो, कर दे क्षण में अन्त॥

अति ही पेलापेल मँचाये, राक्षस सैन्य रगेद भगाये।
यातें सैन्य हटत ही जावें, रावण ढिग तक पछलत आवें॥
यों लख रावण अति रिसयाया, भ्रमें सिंह, तिहिं वश में लाया।
तबहिं महोदर आदि अपारा, आये राक्षस वंश कुमारा॥

दोहा—करें बाण वर्षा विपुल, हनुमत खड़े पहार।
रंच न विचलित होंय ये, बाणवृष्टि जलधार॥
मानो घेरा शैल को, कुँवरन ने चहुँओर।
यहू कीन्ह रणकेलि अति, मार करी घनघोर॥

लख कपिपतियन घिर हनुमाना, धाया कपिदल कुपित अमाना।
कपिवंशी बहु मार मँचाये, क्षण में अरिदल दूर भगाये॥
रावण देख विकल निज सेना, अरुण भये खगपति के नैना।
सन्मुख करन स्वयं ही चाला, कुम्भकर्ण ढिग आय उताला॥

दोहा—आयस ले चाला तुरत, कपिदल के ढिग आय।
विद्याबल याने अरिहिं, क्षण में दिये सुवाय॥
वानरवंशी नींद वश, गिरत फिरत भेरात।
दिखे न आंखन में कछू, मनो हुई है रात॥

यों सुग्रीव जबहिं लख लीना, निराकरण तत्त्वण ही कीना।
अवलोकनि विद्या परकासी, चण में सब की निद्रा नासी ॥
वानरवंशिन बल अति बाढ़ो, अरि सैना का पैर उखाड़ो।
लख रावण आवन मन लीना, इन्द्रजीत ने वर्जन कीना ॥

दोहा—मोय अछत पितु जाव तुम, ना शोभै यों तोय।
का मूषक पै जात हरि? देवहु आयस मोय ॥
त्रण उपाड़वे तात तुम, फरसा मती उठाव।
स्याल अरिन को नाशवे, मोकों हुकम लगाव ॥

यों आयस ले चला कुमारा, त्रिलोककंटक गज असवारा।
इन्द्रसारिखी सकल विभूती, विपुल करै अरि की आहूती ॥
तीच्चण शस्त्र चलाये यानें, अगणित अरि विध्वंसे जानें।
थकित हुये कपिवंशकुमारा, प्रबल प्राक्रम वानें धारा ॥

दोहा—इन्द्रजीत जनु इन्द्रसम, अथवा अगनिकुमार।
कपिदल बहु विध्वंस किय, लागे ढ़ेर पहार ॥
भामण्डल सुग्रीव दोउ, निरख सैन्य बेहाल।
लड़वे को उद्यत हुये, आय तहां तत्काल ॥

इन्द्रजीत ने लख सुग्रीवा, विहँस कहा या भांति अतीवा।
अहो, वाय वश तूं सुधभूला, हुवा स्वामि तें तूं प्रतिकूला ॥
सुबुध न रंच हिये मँह धारा, बैरी का तूं पत्त सम्हारा।
त्याग कल्पतरु सेय धतूरा, गह लिय कांच; रत्न को चूरा ॥

दोहा–आगा पाछा सब तजा, भूल स्वामि उपकार।
अरे कृतघ्नी निज भुजन, निज पग पटक कुठार॥
जान वृक्ष कर मूढ़ वन, ता फल वेग चखांव।
यम पाहुनगति करन को, यम घर तुझे पठांव॥

इन्द्रजीत की सुन सुग्रीवा, विहँस कहा या भांति अतीवा।
मान सिखर पे है तूं बैठा, यातें गाल बजावत ऐठा॥
अपनी नेत्र फुली ना देखे, परकी रंच दृगन की लेखे।
पितु पापी को ना समझावै, परतिय लाके प्रान गमावे॥

दोहा–सहस अठारह नारि पै, हृदय तृप्ति ना पाय।
परतिय नेह लगाय अब, विरथा प्रान गमाय॥
तूं कपूत सुत ऊपजो, नांहि देत उपदेश।
पर की ओर निहारता, निज ना देखे लेश॥

बात बात में अति ही बाढ़ी, उठि दोउन हिय अति रिस गाढ़ी।
चले परस्पर शस्त्र अपारा, बरसत मेह प्रबल जलधारा॥
बहुत समय तक हुइ गहराई, महाभयंकर रार मँचाई।
लख भामण्डल चला उताला, मेघनाद ने घेरा डाला॥

दोहा–महारथी ये दोउ भिड़े, कीन्ह परस्पर वार।
शेल खड़ग बरछी गदा, आदिक किये प्रहार॥
ऐसे दोनों उमड़ते, मनहु सिन्धु उमड़ाय।
हुते वीर अतिशय प्रबल, मारामार मँचाय॥

इन्द्रजीत किय शस्त्र प्रहारा, वज्रदंड से यह विदारा।
इन्द्रजीत ने जलशर छोड़ा, द्रुत सुग्रीव ताहि को तोड़ा॥
जलशर ने किय पानी पानी, वायु वाण से करदी हानी।
याविध विद्या शर अति चाले, दोइ परस्पर इत उत वाले॥

दोहा—जाविध से इनका हुवा, अतिहि घोर संग्राम।
त्यों भामंडल, तसु अरी, लीन्हा नांहि विराम॥
मेघनाद ने अग्नि शर, भामण्डल पै छोड़।
जलशर से याने तुरत, दीन्हा वाको तोड़॥

अग्नी शर, अग्नी बरसाया, जलशर तबहिं मेह फिर लाया।
वानें वाके रथ को तोड़ा, वानें वाके मारे घोड़ा॥
दूजे रथ चढ़ सन्मुख आये, पुनहू मारामार मँचाये।
मेघनाद शर तामस घाला, महाअंध दल फैल उताला॥

दोहा—भामण्डल को ना दिखै, तामस वाण प्रभाव।
मेघनाद ने द्रुत तबहिं, लखा आपना दाव॥
नागपाश से तिहिं तुरत, बँधनमँह कर लींन्ह।
भामण्डल मूर्छित पड़ा, सब सुध बुध खो दीन्ह॥

याविध तो गति हुइ अब याकी, ताविध से हुइ गति भी वाकी।
इन्द्रजीत अहिपाश चलाया, महावीर सुग्रीव फँसाया॥
राम पक्ष के दोनों योधा, फँसे बंध मँह रंच न बोधा।
लखा विभीषण दोनों वीरा, फँसे बंध मँह रिपु के तीरा॥

दोहा–विनत राम से यों कहा, सुनहु प्रभो मम बात।
महारथी दोउ फँस गये, नागपाश, रिपु हात॥
वेग छुड़ावो दुहुन को, सैन्य हुई बेहाल।
दुहु ही दल नायक प्रभो, फँसे विपति जंजाल॥

सुत रावण के दोउ बलधारी, महारथी दोउ पकड़े भारी।
कुम्भकर्ण से हनुमत हारा, ताहि पकड़ बंधन मँह डारा॥
सैन्य सबहिं अब भई अनाथा, आप कृपा से होय सनाथा।
ले न जाय झट उपाय सोचो, सब की विपदा द्रुत ही मोचो॥

दोहा–रावण के सुत, बन्धु दुहु, प्रान रहित इन जान।
यातें गवने हर्ष धर, करन युद्ध अन थान॥
अभी बँधे अहिपाश से, उन्हें उठाले आंय।
मूर्छा नाशन हेत रच, उनको वेग बचांय॥

लख अंगद हनुमत बलधारी, कुम्भकर्ण ने मुश्कें डारी।
पहुँचा कुम्भकर्ण के थाने, खींचा वस्त्र तासु का छाने॥
खुला वस्त्र सम्हारन लागे, द्रुत हनुमत ता कर से भागे।
ये हो लज्जित पटहिं सम्हारो, अंगद ढिग हनुमान सिधारो॥

दोहा–जिमि पिंजर तज खग भगे, तिम भागे हनुमान।
अंगद अरु हनुमान दोउ, बैठे एक विमान॥
दिव्य देह ऐसी दिपे, मनहु स्वर्ग सुर आंय।
कंठहार सोहे, मुकुट, कपिका चिन्ह सजांय॥

चला विभीषण बढ़के आगे, इन्द्रजीत लख, तँह से भागे।
काका तात जुदे हैं नांही, समतर समझो दृहु हिय मांही।
यातें रार उचित ना जानो, न्यायरु नीति उलंघन मानो।
चिन्त्यतसन्मुख तज दिय याका, मेघनाद हू समझा काका॥

दोहा–राम लखण विह्वल हुये, कठिन अवस्था आय।
वात बनें कैसे अवै, होवै कौन सहाय॥
सुध आई गरुणेन्द्र की, "वचन" रखा भंडार।
चिन्तत ही मैं आवँगो, याविध वयन उचार॥

प्रमुदित राघव ताहि चितारा, गरुणेन्द्रहु ने अवधि विचारा।
मेरा आसन काहे कांपा, चिन्त्य प्रतिज्ञा बंधन थापा॥
तब ही एक देव को भेजा, राघव ढिग सामग्री लेजा।
देय तिन्हों की विपति निवारो, आज्ञा लह वह वेग सिधारो॥

दोहा–आय देव राघव ढिगै, विनवत शीश झुकाय।
सिंहवाहिनी द्रुत दई, सिंह पराक्रम पाय॥
गरुणवाहिनी लखण कें, गदापुनीतरु दीन।
चन्द्र सूर्य सम छत्र दिय, अरि कांपै ह्वै दीन॥

राघव को हल मसूल दीनें, देव पुनीतरु शस्त्र नवीनें।
शस्त्र अमोघ विचित्र कहावें, लगतइ अरिहू प्रान गमावें॥
पुन सादर यों बोला बानी, प्रभो भिजाया हे विज्ञानी।
कहा कछुहु देवे सक नांही, सुन हरखे राघव हिय मांही॥

दोहा—जगनिधि हमको देय पुन, लघुता यों बतलाय।
धन्य धन्य गरुणेन्द्र तुम, बहु उपकार रचाय॥
याविध से परशंस बहु, सुन सुर हर्षित होय।
गवना निज प्रभु के ढिगें, वरणा जाविध जोय॥

राम लखण किय साधुन सेवा, जित उपसर्ग भये जिनदेवा।
तास तात ने वचन निवाहा, तत्त्वण हुवा हृदय का चाहा॥
याही भव में फल को पाया, धर्म कल्प मनवांछित लाया।
यातें आतम श्रद्धा धारो, आया संकट वेग निवारो॥

दोहा—जगविपदा नाशे तुरत, भरें पुण्य भंडार।
पुण्य नशै, ध्यावें अटल, निज स्वरूप सुखकार॥
श्रद्धा ज्ञानरु आचरण, तीनों सम्यक होय।
"नायक" शिवपद द्रुत लहत, गुण अनंत को जोय॥

॥ इति षष्ठदशमः परिच्छेदः समाप्तः॥

अथ रावणद्वारा लक्ष्मण को शक्ति लगने का वर्णन

वीरछन्द:—

राम लखण वर वीर मनोहर, तेज सूर्य सम अटल प्रकास।
अतिशय सुदृढ़ कवच तन धारें, विजय श्रिया कर रही निवास॥
सिंह गरुड़ वाहन के रथ चढ़, प्रविशे रणमँह निर्भय होय।
देवन समतर रूप मनोहर, छवि द्युति वरणों का कवि कोय॥

दोहा—देख सकलजन इन विभव, विस्मय चित रह जांय।
महापुण्य मण्डित दिपत, अनुपमेय दिखलांय॥
प्रभाव गरुणहिं अहि सकल, भागे तुरत अतीव।
बंध रहित दोनों हुये, भामण्डल सुग्रीव॥

साधुन संगति कुभाव लाजे, गरुड़ निरख तिम अहिहू भाजे।
वीर दुहू सोवत से जागे, आये राम लखण के आगे॥
सब मिल जय जयकार मँचाये, धन्य रामपति, लखण कहाये।
विभूति अद्भुत अनुपम दीसै, मनहु आइ ढिग स्वर्गपुरी सै॥

दोहा—श्रवत राम प्रमुदित कहा, तजा आपना देश।
पुन क्रम से सब कथन कह, छूट सका ना लेश॥
वंशस्थल गिरि का कथन, विस्तृत सब बतलाय।
"वचन बद्ध" गरुणेन्द्र हो, तासे वैभव पाय॥

साधु सेव की महिमा भारी, हो तीर्थंकर पद का धारी।
सम्यक सहित जाहि घट वासा, वांछित मिलें बिना किय आशा ॥
यातें धर्म आप का रूपा, राग सहित हो पुण्य स्वरूपा।
जग माहात्म्य पुण्य दिखलावे, धर्म माहात्म्य मोक्ष सुख पावे ॥

दोहा—चला युद्ध बहु दिनन लों, इत उत दोनों ओर।
हार जीत होवे नहीं, दोउ दल अति सहजोर ॥
कबहुँ हटें या पक्ष के, कबहुँ वाहि हट जाय।
याविध बीतो बहु समय, रावण हिय रिसयाय ॥

लंकेश्वर ने बहु भट भेजे, राम पक्ष से बहुत लरे ते।
भयो दोउ दल अति संघट्टा, चाहें सुयश वीर बलवत्ता ॥
यातें मार करें घनघोरा, घालें रिपुनहिं शस्त्र कठोरा।
राक्षस भट कपि सैन्य दबाई, लख नल नीलहु मार मँचाई ॥

दोहा—अति प्रहार नल नील किय, भागी राक्षस सैन्य।
बढ़ आये बहु वीर भट, धीरज इनको देन ॥
राक्षस दल की मार सें, कपि दलहू हट जाय।
भिड़ें परस्पर यम मनो, इतें लड़न को आय ॥

देख लंकपति विचलित सैना, चला कुपित ह्वै हिय बेचैना।
प्रलय काल सम सजके आया, तुरत रामदल मार भगाया ॥
तबहिं विभीषण सन्मुख धारा, विहँस दशानन याहि उचारा।
रे निरलज्ज हटो अब मोसों, लखन न चह कुलदागी तोसों ॥

दोहा–तोहि लखत मेरे हृदय, खेद अग्नि धँधकाय।
कुल नाशक मँह अधम तूं, मिला शत्रु से जाय॥
श्रवत विभीषण हू कहा, तूं अन्यायी होय।
पर तियहर किय अघ विषम, ऐसा करै न कोय॥

अब रावण पुन याहि उचारा, धृष्ट क्लीव पापिष्ठ अपारा।
तूं खग की सन्तान कहावै, सेवा को भूमिज की जावै॥
पाप कर्म रत हो जब जीवा, धर्म तजत दुख लहत सदीवा।
परे जाव मुख नांहि दिखावो, नातर जस किय तस फल पावो।

दोहा–श्रवत विभीषण यों कहा, प्रथम सुनहु मम बात।
पुन मन चावै सो कहो, मिट सकल उत्पात॥
करहु मित्रता राम सँग, ताकी सिय दे देव।
चिरजीवो, जग सुयश लह, आशिष सबकी लेव॥

ना मानों यदि सीख हमारी, मौत निकट तदि आइ तिहारी।
हो उन्मत मद मोहरु जोवो, वृथा आपना जीवन खोवो॥
परतिय कुगतिगामिनी सेवो, का दुख भोगो कछु चित देवो।
न्याय नीति मँह अग्र कहावो, परतिय देके सुयश लहावो॥

दोहा–मेह बरसते तृण जरै, बाड़ि खेत कें खाय।
भूप करै अन्याय तो, न्याय कौन पै जाय॥
सज्जन तो सौ सौ गहै, दुरजन गहै न एक।
ज्यों कठोर पाषाण पै, गाड़ी गड़ै न मेख॥

सदुपदेश भ्राता ने दीने, श्रवणत रावण हिय रिस लीने।
चाह दाह अति हियमँह जागी, जिम जल में दावनल लागी॥
जाविध सर्प दुग्ध को पीकें, जहर बनावे विषघट छीकें।
त्यों रावण का हो हिय काला, द्रुत ही अपना जहर उगाला॥

दोहा—रुपित दशानन ने तजे. अति प्रचंड दिवि अस्त्र।
रोक विभीषण ने लये, वाले अपने शस्त्र॥
वहू चलावै शक्ति भर, लैन अरी के प्रान।
मनों लड़त हैं केहरी, जूझें रणमँह आन॥

बहुत देर तक दोई जूझें, बन शर मण्डप, कछू न सूझें।
इन्द्रजीत लख, हिय रिसयाया, पिता पक्ष को वेग सिधाया॥
लख सवेग लक्ष्मण ने टोका, कहां जात रे, कहकर रोका।
तात करत अन्याय न रोकें, जात चचा पै, निज बल जोकें॥

दोहा—इन्द्रजीत ने श्रवण कर, दीन्हा इन्हें जवाब।
भिखमंगे दर दर फिरत, जिम मोती बिन आब॥
हम आपसमँह सुरझिहैं, तुम को रोकनहार।
याको निष्ठुर फल लहो, मूरख, छली, गँवार॥

चचा हमारो तुमने फोड़ो, हमरा रिश्ता तुमने जोड़ो।
तुमरे संगे वाहू लागो, तज सुभाग अब बनो अभागो॥
आप मरो अरु औरन मारो, ऐसी न्यायरु नीति उचारो।
जबरन मौत आइ है तेरी, खींच लाइ अब मेरे नेरी॥

दोहा—यों कह तीक्षण बाण से, कीन्हा कठिन प्रहार।
मनो वज्र से इन्द्रजित, फोड़न चहत पहार॥
की वर्षा घनघोर शर, मनु जलधर की वृष्टि।
तह पर तह शर बिछ गयो, ढक गइ सारी सृष्टि॥

कुम्भकर्ण लख चला उताला, लखत राम ने घेरा डाला।
कहां जात अब छिपके मोसें, मेरी सुन, जो कहता तोसें॥
मती भ्रष्ट भ्राता की मेटो, वृथा काह कों सबहिं समेटो।
कहा लाभ या मांहि उठावो, मम प्रिय भेजो, अति सुख पावो॥

दोहा—कुम्भकर्ण अब राम वच, यद्यपि न्याय रसाल।
तऊ लगे असुहावनें, बिछा मोह का जाल॥
भ्रात पक्ष कैसे तजें, इक घट को औंधाय।
औंधे ही औंधे रहें, कोटक करो उपाय॥

कुम्भकर्ण, राघव से बोला, मानो गिरा तोप का गोला।
त्रयखँड पति रावण कहलाया, तीनखंड स्वामित्त्व लहाया॥
रावण ढिग सिय सुन्दरि सोहै, भिखमंगा को कभी न मोहै।
घंटा, गजगल मांहि सुहावै, श्वान गले नहिं शोभा पावै॥

दोहा—यों कह अति ही कुपित हो, मारे तीक्षण बान।
राघव हू यासे भिड़े, कसकें मारे तान॥
शेल खडग बरछी गदा, हल मूसल तिरसूल।
चाले दोई ओरसें, मानों बरसें फूल॥

हनुमत भामण्डल सुग्रीवा, मारा मारहि करें अतीवा।
रण क्रीड़ा हनुमान मँचाई, प्रलय समान हुतास लगाई॥
बचें न कोई याके तीरा, मनु उपजा ना कोई वीरा।
अगणित मार मही पर डारें, गय हय रथ सामंत सँहारें॥

दोहा—गज गर्जें हय हींसवें, सुन कायर छिप जाय।
लड़ें शूर जीतें अग्नि, रण की खाज खुजाय॥
कहें वचन ललकारकें, वीर परस्पर जोय।
प्रभुधन खातन नीक लग, प्रान देत दुख होय॥

स्वामी तुमको पालें पोपें, येही दिनकों चुकाव मोकें।
प्रभु कृतज्ञता वीर न भूलें, प्रान तजत हिरदय मँह फूलें॥
क्षत्री एतन को ना मारें, बाल वृद्ध, तप जो जिय धारें।
पशु पक्षी तिय नपुन्सताई, रोगी मूर्छित, गह शरणाई॥

दोहा—कायर, पागल, रण तजें, अवध्य इनकों जान।
वीर न एतन को हनें, है जिनशासन आन॥
याविध न्यायरु नीति से, मँचा घोर संग्राम।
वही सरित श्रोणित तनी, डूबीं लाश तमाम॥

कइ कों चीरा कइ कों फाड़ा, समर नांहि, मनु यमहिं अखाड़ा।
मरण समय कोउ अधिक सिसारें, अर्ध मृतक ह्वै पड़े कल्हारें॥
को, काको सुध लेनेवारो, पुण्य पाप का ठाठ विचारो।
बाह्य निमित्त तो खोटो दीसे, कोइ सुधारें इसी गली से॥

दोहा—मारै दुरबल को सबल, निबलहु सबलहिं मार।
अघटित घटना हू दिखै, या संसार मँझार॥
पुण्य उदय जय सूचवै, पाप हार ही देय।
यों फल निश्चय मानिये, पूर्व बँधा रस लेय॥

इन्द्रजीत ने बहु शर छोड़े, लक्ष्मण ने वे तत्क्षण तोड़े।
इन्द्रजीत हू बहु गंभीरा, लक्ष्मण हू प्रचंड बलबीरा॥
इन्द्रजीत तम बान चलाया, प्रचुर अंध सेना में छाया।
लक्ष्मण सूर्य बाण परकासा, द्रुत ही सारे तमको नासा॥

दोहा—नाग बाण छोड़ा तबहिं, इन्द्रजीत बलवान।
गरुड़ बाण तें वेग ही, कीन्हा लक्ष्मण हान॥
लक्ष्मण तसु रथ तोड़ दिय, दूजे रथ चढ़ आय।
तब लक्ष्मण ने वेग ही, पन्नग बान चलाय॥

गिरा मही पर इन्दरजीता, विवश, शक्ति से हूवा रीता।
नाग नाग ही तनमँह दीसें, मूर्छित पड़ा, न चेत कहीं सें॥
राघव, कुम्भकर्ण को फासा, वहहू गिरा, तजत जिय आसा।
महाबली ये बँध गये वीरा, रावण पक्ष कोय ना नीरा॥

दोहा—मेघनाद की ना चली, भामण्डल के संग।
वह हू बँध अहिपाश से, व्यापे अहि सब अंग॥
यों रावण के पुत्र दोउ, कुम्भकर्ण सा भ्रात।
फँसे जाय रिपुबंध मँह, हितू न कोय दिखात॥

गणधर, श्रेणिक को समझावें, सुर पुनीत ये अस्त्र कहावें ।
प्रथम एकसम ये सब दीसें, पुन प्रेपक की पुण्य कलीसें ॥
अरि ढिग जाय रूप बहु धारें, क्षण में वाको जाय सँहारें ।
दंड चक्र असि अहि विस्तारो, गरुण प्रकाश अंध फल धारो ॥

दोहा–रावण और विभीपणहु, कीन्ह युद्ध घनघोर ।
करें परस्पर वार को, ताका ओर न छोर ॥
क्रुद्धित रावण कटु वयन, कहा, सहो अब घाव ।
टेर कौन तेरा हितू, मरता करै बचाव ॥

गह त्रिशूल छोड़ा बलवन्ता, निकसत अग्नि फुलिंग अनंता ।
फैला महि नभ लौं परकासा, वरुण बाण तें, लखण विनासा ॥
वाके ढ़िग ना आवन दीयो, लख रावण अति रिस हिय लीयो ।
देव शक्ति को झपट उठाई, मनो प्रलय की साज सजाई ॥

दोहा–जब रावण की ना चली, ह्वै तब काला नाग ।
फण जाका दब जाय जिम, ता अहि उपजे आग ॥
हुती विभीपण के प्रती, अब लक्ष्मण पै आय ।
कीन्हा भंग त्रशूल मम, हियमँह अति रिसयाय ॥

अरु लक्ष्मण ने त्रशूल देखा, शक्ति विभीपण की ना लेखा ।
यातें द्रुत ही वाहि बचाया, आप स्वयं ही सन्मुख आया ॥
सुन्दर श्याम सलोनों रूपा, लखतहु भड़का रावण भूपा ।
कटुक वयन या भांति उचारा, क्यों रे, यममुख पैसनहारा ॥

दोहा-काहे मृत्यु बुलावता, मेरे सन्मुख आय।
तोमें एता बल नहीं, मोर शक्ति सह जाय॥
खेल न जानें शक्ति को, सर्वश्रेष्ठ यह जान।
अमोघ विजया शक्ति यह, क्षणमें लेहै प्रान॥

भाग भाग द्रुत प्रान बचाके, धरी मौत क्या ? इतै बुलाके।
यातें बात हमारी मानें, वृथा सिया की हठ ना ठानें॥
जो चाहो सो मोसे लेलो, विजया शक्ती को या झेलो।
बोलो शीघ्र समय है नांहीं, निर्णय करले निज मन मांही॥

दोहा-रणकर, चिर बीता समय, लक्ष्मण तन अहुलास।
खेदखिन्न पीड़ा सहित, ना थी रण की प्यास॥
लख प्रसंग या वीर हिय, पुनहु न हेटी खाय।
बलात अरि के सम्मुखै, सीना रहा फुलाय॥

अब रावण की कर्कश बानी, निरी पापमय थी अघसानी।
पुनहू ये वीरत्त्व बतावै, पाप उचरता नांहि लजावै॥
यातें विहँस लखण द्रुत बोला, मानो गिरा तोप का गोला।
रे पापी, तूं तनक न सोचा, लज्जा रहित वयन को मोचा॥

दोहा-छलिया चोर श्रगाल तूं, क्या तेरा वीरत्त्व।
सम्मुख लेता सीय को, तबहिं जानता स्वत्त्व॥
सीय राम अर्धांगणी, सो राघव ढ़िग आय।
यामें रंच न फेर जनु, तूं ही जान बचाय॥

वृथा शक्ति का जोर जनावें, जिमहिं नपुंसक आंख दिखावें।
कर न सकै कछु हिम्मत थोरी, ताविध समझों मैं गति तोरी॥
शैल समान डील को धारे, वृथा भूमि तो भार सम्हारे।
तूं वसुधा को वृथा लजावे, मां पितु कुलमँह दाग लगावै॥

दोहा—श्रवत दशानन कटु वयन, दीन्ही शक्ति चलाय।
अमित तेज दुस्सह दुखद, लच्मण हिया विधाय॥
गिरा अवनि पै द्रुत लखण, मानो कीन्ह मिलाप।
वसुन्धरासम शांत ह्वै, रंच न शोक विलाप॥

लखा राम ने लच्मण मूवा, लगा वज्र सम, पै ना छूवा।
रिसधर रावण पै द्रुत आया, महा भयंकर युद्ध मँचाया॥
द्रुत ही ताके रथ को तोड़ा, दूजे रथ के मारे घोड़ा।
तीजा चौथा पंचम नाशा, षष्ठम पै चढ़ तऊ विनाशा॥

दोहा—कीन्हा सप्तम घात जब, तउ रावण बच जाय।
तब राघव विस्मित हृदय, बोले वयन उचाय॥
सुन खगेश, मम बाण तें, ढह जाता है शैल।
तो नर की का बात पुन, नांहि वचन की गैल॥

पै कछु आयु शेष है तोरे, यातें बचा प्रहारन मोरे।
अब या समय युद्ध को रोको, भ्रात क्रिया करनी है मोको॥
दूजे दिन पुन समर रचाहों, याकी सम्मति तोसे चाहों।
श्रवत वयन रावण मुस्क्याया, स्वीकृत कर, हिय चैन मनाया॥

दोहा–दो में से एक ई बचा, प्रात लेवँगा मार।
तब तो सिय बेवश रहै, मानेगी झखमार॥
यों विकल्प उठ विविध विध, दल ले किय प्रस्थान।
आया अपने भवन मँह, भ्राता, सुत न दिखान॥

चहुँउर देखै, दृष्टि पसारै, पुत्र, न भाई दिखै हमारै।
यातें ये सब, बँधे रिपू तें, लगा वज्र सम आंखें मूचें॥
उठी सबहिं की जीवन शंका, भ्रत मारा, बहु मार निशंका।
जब मैंने तसु भ्राता मारो, लेवै बदला अवश हमारो॥
दोहा–याविध सुखदुख गर्त मँह, पड़ा दशानन भूप।
पै न तजत हठ आपनो, जो है दुख का कूप॥
यातें ज्ञानी हठ तजें, गहत आपना भाव।
"नायक" रमो स्वरूप नित, अविनाशी पद पाव॥

॥ इति सप्तदशमः परिच्छेदः समाप्तः॥

अथ विशल्या द्वारा लक्ष्मण की शक्ति निष्कासन वर्णन

—वीर छंद—

ज्योंही राघव पहुँचे जँहपै, लखणभ्रात पौढ़े भू मांहि।
हाय भ्रात कह मूर्छा लीन्हें, तनकी सुध बुध रहि कछु नांहि॥
खगपतियन मिल सचेत कीन्हा, व्याकुल वदन विलाप उचार।
मां पितु कुल धन धाम खोयपुन, सीता अरु भ्राता सुकुमार॥

दोहा—हा बालक! तूं कँह गयो, मुझे अकेला छोड़।
तो बिन मैं ना रह सकों, तूं क्यों चल मुख मोड़॥
मां पितु ने सौंपा मुझे, तुझे धरोहर जान।
अब मैं भी तो संग मैंह, अपना देहों प्रान॥

तिया नशै, दूजी मिल जावै, मां पितु भ्रात मिलन ना पावै।
यातें सुन ल्यो सकल समाजा, जाव लौट सबही साम्राजा॥
घना न मोसे कछु उपकारा, भारी यह अपराध हमारा।
क्षमो सभी लघु जानो मोकें, कहत सवन सों मैं लघु होकें॥

दोहा—बोले वचन सशोक यों, राम, माथ धर हात।
छाई चिन्ता उर घनी, सूख गया सब गात॥
मनु दमार ही लग गई, उठ लपट हिय मांहि।
विकल नीर बिन मीन सम, क्षणहु चैन है नांहि॥

पुन सशोक या विधि उचारा, अहो विभीषण किय उपकारा।
कर न सको, मैं तास चुकारो, या चिन्ता उर दहै हमारो॥
वेही उत्तम जन कहलावें, बिन यांचे उपकार चुकावें।
मध्यम पांछे देय चुकारें, भूलें, तिनको अधम पुकारें॥

दोहा—कर विरोध निज भ्रात से, आये मेरे पास।
हम कृतज्ञ ना हो सके, यही रही अभिलाष॥
नांहि सोच तिय भ्रात का, जितना यही सताय।
रचहु चिता अब भ्रात की, मैं भी भस्मों काय॥

यों कह ज्योंही परसन चाया, त्योंही मंत्री रोक लगाया।
दिव्य अस्त्र से मूर्छा धारी, छुओ न इनको विनय हमारी॥
समयोचित कर्त्तव्य विचारो, व्याकुल होय न कार्य बिगारो।
विपति मांहि जे धीरज धारें, तेही नीके कारज सारें॥

दोहा—धीरज उर में धारिये, सब संकट टल जाय।
अकाल मृत्यू ना लहें, नारायण पद पाय॥
श्रीगुरु वचन अकाट्य है, शिला उठावै कोय।
निश्चय सेती वह पुरुष, रावण हन्ता होय॥

यातें जीवै भ्रात तिहारो, ऐसा मन में निश्चय धारो।
यों सुन सबकें धीरज आयो, गुरु ने निश्चय सत्य बतायो॥
यत्न सोचवे सब खग बैठे, आई विपदा कैसे मेंटे।
सूरज उदय होन ना पावे, तास उपाय पूर्व बन आवे॥

दोहा—निमिष मात्र में मिल सभी, दीन्हा तम्बू तान।
चौकी मेल्ही सप्त तँह, बैठे भट बलवान॥
नील विभीषण आदि सब, शस्त्र हाथ में लेय।
करें चौकसी विविध विध, वायु नांहि प्रविशेय॥

लखण निधन पे रावण मोदा, अंग एक राघव का खोदा।
चिन्त्य चिन्त्य यों हर्षित होवें, पुन बंधुन सुध आनँद खोवे॥
भ्रात पुत्र हू बन्धन पाये, सुध आवत ही शोक सताये।
मैं भी अंग भंग को पाया, अपना हू सर्वस्व गमाया॥

दोहा—दीखे ना उनकी कुशल, निश्चय मारे जांय।
तासु बन्धु कीन्हा निधन, वे हू अति रुपियांय॥
होनहार बलवन्त दिख, प्रगट करूं ना शोक।
नातर सब समझाय कें, देंय युद्ध से रोक॥

मैं तो सिय को कभी न देवूं, चाहे मरण भले ही लेवूं।
कूप खाइ सम दीखे हानी, हार दशानन ने अब मानी॥
जब तो सिया राम को देवै, यांच बन्धुवन निज के लेवै।
यातें ऐसा होन न देहों, शोक दबाय आपना लेहों॥

दोहा—लगी लखण को शक्ति सुन, सिय मूर्छा को पाय।
मूर्छित लख द्रुत दासियां, हिय उपचार रचाय॥
लई सचेती सीय ने, कीन्हा विपुल विलाप।
हा बालक! मो निमित से, लहा घोर सन्ताप॥

माय तात को, तजके गेहा, जोड़ा हमसे तूंने नेहा।
आंखन भूलै विनय तिहारी, बिछाय शय्या देय हमारी॥
असन कराय फेर तूं खावै, पग पग पर तूं विनय दिखावै।
कभी न मेरो शीस निहारै, हरदम दृष्टी पगपै धारै॥

दोहा—हे बालक! मम हिय कमल, कब सुन हों तुव बैन।
यों कह हुइ गद्गद हृदय, झरे अश्रु दुइ नैन॥
उरथल करसे कूटवै, मानो कुरुचि पुकार।
नयन मेह ऐसे झरें, मनु गिर मूसलधार॥

लख दासी; समझाई याको, मृत मत समझै, भ्रात पियाको।
अकाल मृत्यु याहि नां आवै, पदवीधर यो पुरुष कहावै॥
यातें शक्ति निकासी जाये, कछुहु उपाय अभी बन आये।
अशकुन वचं को नांहि उचारो, अभी हिय मँह धीरज धारो॥

दोहा—श्रेणिक को सबही कथन, गणधर दीन्ह बताय।
अब रणथल का कथन कह, जँह बैठे रघुराय॥
एक मनुज सुन्दर सुदृढ़, आय वेग ता थान।
लख भामण्डल ने उचर, कहा प्रयोजनवान॥

अवतहिं याको उत्तर दीन्हा, राम दर्श की वांछा लीन्हा।
लक्ष्मण प्रान बचावन चावो, कह हौ हमें उपाय बतावो॥
तदि उपाय भी तुम्हैं बतैहों, निश्चय सेती प्रान बचैहों।
अब भामण्डल, हियो उमंगै, आय राम ढिग लैके संगै॥

दोहा—जब राघव ढिग आय वह, सविनय कीन्ह प्रणाम।
प्रमुदत्त कह, लच्मण जियै, जनहु सत्य श्रीराम॥
अबो कथन अपना कहूं, तासे निश्चय होय।
होनहार होती प्रबल, मेंट सकै ना कोय॥

नगर देवगति अनुपम जानो, नृप शशिमंडल मोपितु मानो।
चन्द्रपीत मम नाम सुहाया, इक खग मम मितु बनके आया॥
वा मम तिय से नेह लगाके, लेय गया मुझ को फुसलाके।
मारग मांहि द्वंद वह कीन्हा, अंतिमशक्ति घाल वह दीन्हा॥

दोहा—लघु परणी विद्या सहित, गिरा गगन तें आय।
सरयू सरिता तट गिरा, भूपति भरत लखाय॥
छिन्न भिन्न मम तन लखो, शक्ति लगी नृप जान।
अनुपम जलके छिड़कतइ, तन हुव मदन समान॥

दृग खोलत ही उनको देखा, नवा जन्म दिय, यों सुख लेखा।
मैंने उनकी थुती उचारी, मिला न तो सम मुहि उपकारी॥
आशातीत दशा थी मेरी, किय कंचन सम लगी न देरी।
मो तनपै अमृत छिड़काये, जासे लागी शक्ति भगाये॥

दोहा—सुन राघव याका कथन, लच्मण समतर पाय।
उत्सुकता से कहि इसे, हमको वेग बताय॥
कहां मिलै वह जल सुखद, होवै शक्ति विनाश।
मम हिय दीपक जगमगै, पावै जीवन आश॥

सुन कहि वह मैं सब कुछ बोलों, ता जल को भी रहस्य खोलों।
मैंने भरत नृपति से पूंछा, उनने मोकों याविध सूंचा॥
एक समय पै देश हमारा, लह अति दुख हुई व्याधि अपारा।
रोगन की मनु बाढ़हि आई, गृह गृह मँह अति धूम मँचाई॥

दोहा–फोड़ा फुन्सी आदि बहु, भांति भांति के रोग।
महा दाह ज्वर शूल बहु, को वरणै का भोग॥
वही व्याधि सरिता यहां, चैन न क्षण भर देत।
तब या जल से रोग नश, तास बतावत हेत॥

मातुल द्रोणमेघ बुलवायो, उनको दुख का हाल सुनायो।
उनने मोसे विहँस उचारा, याविध ही हो देश हमारा॥
प्रजा दुखी लख मैं दुख लीना, मोकों युक्ति कछू सूझी ना।
समय पाय तिय गर्भ लहाई, तास उदर मँह कन्या आई॥

दोहा–गर्भ आगमन होत ही, अरी मरी नश नाय।
आदि व्याधि सबही मिटीं, पुन वह जन्म लहाय॥
तास न्हवन जल लायकें, छिड़का देश मँझार।
हुये सुखी नर नारि सब, व्याधीं मिटीं अपार॥

याविध भरत नृपति बतलाया, सुन हिय मँह अति हर्ष लहाया।
जाय तास ढिग मैंने पूजी, नाम विशल्या लखी न दूजी॥
तँह तें चले विपन मँह आये, तँह चतु ज्ञानी मुनिहि लखाये।
विनवत मैंने प्रश्न उचारो, का अतिशय या कन्या धारो॥

दोहा—अनुपम पुण्य उपारजो, जिहि जल न्हौन प्रभाव।
मिटगईं जग व्याधीं सकल, सुखी हुये रँक राव॥
बताव गुरुवर या मुझे, अन्तरयामी देव।
होय निशंकित मम हृदय, हिय श्रद्धांजलि लेव॥

यों सुन गुरु ने मोहि उचारो, अब, संशय मिट जाय तिहारो।
जम्बु विदेह देश पुँडरीका, त्रिभुवानंद नाम नगरी का॥
तँह पै चक्री छह खँड स्वामी, अनंगसरा सुता तसु नामी।
चक्री सुभट देख तसु रूपा, विधा काम से मदन स्वरूपा॥
दोहा—हरकर धरी विमान में, गमन गगन से कीन।
सुन चक्री कन्या हरन, अति रिस हियमँह लीन॥
भेजे भट ताके ढिंगै, सुता छुड़ा के लाव।
लखा याहि ने भटन को, शस्त्रन सहित सजाव॥

भययुत कन्या नभ ते छांरी, लघुपरणी विद्यायुत डारी।
पत्र समान पतत ये आई, विकट भयानक बनी लखाई॥
महान अंध तहां पै देखी, इतै सहाई कोय न लेखी।
थर थर कम्पै याका गाता, आया भीषण कर्म असाता॥
दोहा—बहु रुदनी मूर्च्छा लई, फेर सचेती पाय।
पुन विलपै रोदन करै, हाहाकार मँचाय॥
नर खग सुर परवेश नहिं, केवल लखि तिरयंच।
याको धीरज देय को, कोय न सहाई रंच॥

चक्रवर्ति की सुता दुलारी, अशुभोदय दुख पायो भारी।
यास बनी का अोर न छोरा, सहै परीषह ऋतुन झकोरा ॥
वन फल खाय झिरन का पानी, आरत तज हिय समता सानी।
बहु अकाम निरजर तप कीनो, काया मोह सहज तज दीनो ॥

दोहा—पूरव के सुख साज सब, चित से दिये बिसार।
वीतो तप करतो समय, वर्ष तीन हजार ॥
अन्त समय समभाव धर, लीन्हा मृत सन्यास।
करूं गमन शत हाथ लों, त्याग आगिली आस ॥

रही आयु छह दिन की बाकी, हुई भावना दृढ़तर याकी।
गहि मर्यादा कभी न टारों, घोर दुःख मँह समता धारों ॥
ताही समय सेठ इक आवै, सुमेर वंदन यँह ते जावै।
यहां अचानक याहि लखाई, चीन्हा चक्री सुता कहाई ॥

दोहा—प्रमुदित सेठ विचार किय, लेय चलूं निज थान।
द्रुत आया याके ढिगै, मन का भाव बखान ॥
सुन कन्या ने तुरत ही, निज दृढ़वृंत बतलाय।
मैं सल्लेखन ले चुकी, समता भावन ध्याय ॥

शीघ्र सेठ चक्री ढिग आके, लेय गया तसु वृत्त बताके।
जा समये इत दोनों आये, कन्यहिं निगलत अजगर पाये ॥
लखत दृश्य चक्री रिसयाया, अजगर मारन खड़्ग उठाया।
त्योंही कन्या वर्जन कीन्हा, निज हन्ता को बचाय लीन्हा ॥

दोहा—अभयदान दिलवाय दिय, धन्य सुता का भाव।
सुता भावना पूर्तिकर, चक्री खेद लहाव॥
मिली न सुध मोहि आज तक, मिलि यों दृश्य लखाय।
काविध मन धीरज धरै, सर्प सुता को खाय॥

पै कन्या ही कीन्ह इशारे, नांहि पिता अजगरहिं विदारो।
अभयदान अजगरहिं दिवाई, आप हृदय मँह समता ध्यायी॥
छह दिन शेष आयु के जीते, सही परीषह सुख सों बीते।
धन्यधन्य जिय, दृढ़व्रत जीको, शुद्ध ध्यावै आतम ही को॥

दोहा—तज शरीर देवी हुई, परम विभूती पाय।
अतिशय पुण्य कमाय फल, इन्द्रीसुख अधिकाय॥
स्वभाव सम्यक ना गहो, गह लेता यदि जीव।
तिय पर्याय न पावता, सम्यक सहित सदीव॥

सुता भावना पितुने पूरी, हनन भावना कीन्ही दूरी।
पै अति खेद हृदय मँह लीन्हो, जग असारता चिन्तन कीन्हो॥
मैं चक्री, यह सुता हमारी, अशुभ उदय भोगी दुख भारी।
यातें झूठा जग का नाता, आपहि भोगे कर्म असाता॥

दोहा—बीस सहस द्वय सुत सहित, चक्री दीक्षा लेय।
आत्म ज्योति उरमें जगी, निज स्वभाव प्रगटेय॥
पुण्योदय वैभव तजा, निज वैभव प्रगटाय।
रत्नत्रय परगट कियो, स्वातम निधि कहलाय॥

चक्री सुभट, सुता हर लीना, रिपुभय से द्रुत तिहिं तज दीना।
विद्या सहित गगन से डारी, पुन ना पाई खोज निहारी ॥
खेदित ह्वै मुनिव्रत को धारा, कर दुर्धर तप स्वर्ग सिधारा।
भोग स्वर्ग सुख, चयके आया, ह्वै दशरथसुत लखण कहाया ॥

दोहा–सुभट तपहिं करते समय, कीन्हा भाव निदान।
मैं तप के परभाव से, पूरों चाह निधान ॥
या भवमें चक्री सुता, नांहि मिली है मोहि।
परभवमें मिलवै अवश, तप फल प्रगटै योहि ॥

देवी, लह दिवि सुख अधिकाई, भोग चयी पुन तिय गति पाई।
द्रोणमेघ गृह उपजी कन्या, पुण्योदय से लह लावण्या ॥
नाम विशल्या तात रखायो, पूरव तप फल अतिशय पायो।
किय तप दुर्धर, पूरव जैसा, कर न सकत मुनिवर भी तैसा ॥

दोहा–त्रय हजार वर्षन तलक, महतप दुर्धर धार।
रंच न चितमें खेद लिय, पूरव भोग विसार ॥
यों इच्छा के नाश से, महतप याका होय।
तपफल, अतिशय ह्वै प्रगट, ऐसा लहै न कोय ॥

जास न्हौन जल व्याधी नाशै, जगके सबसुख सहज विकाशै।
सुभग विशल्यहिं, लक्ष्मण पावै, याभव मँह तसु नियोग आवै ॥
विधि, या हित ही बनाय राखी, याविध, मुनिने, मोकों भाखी।
पूरण, वह नर राघव सेती, कह दी कथा सुनी थी जेती ॥

दोहा–पुन प्रसंग वश भरत प्रति, मुनि का कहा, बताय।
व्याधी उपजी देश मँह, का कारण को पाय॥
इमहि प्रश्न गुरु से कियो, भरतहि, गुरु दर्शाव।
तास सविस्तर सुन कथन, चित देके रघुराव॥

गजपुर मांहि एक व्यापारी, लादा बोझ पशुन पै भारी।
भैंसा गधा बैल पै लादे, आय अयोध्यहि पांव पियादे॥
मास इकादश यहां बितायो, इक भैंसा को घायल पायो।
पड़ा पंक मँह, प्रजा सतावे, अकाम तपसे, सुर सुख पावे॥

दोहा–अकाम तपके योग से, महिप अमर पद पाय।
अवधिज्ञान बलसे अमर, पूर्व वृतान्त लखाय॥
पूरब में भैंसा हुतो, कटी पींठ, दुख भूर।
पंक मांहि फँस्या हुता, था मुहि दुख भरपूर॥

मो पैसे निकसें नर नारी, हुता पंक मारग में भारी।
मोकें फँसा पंक मँह देखो, मारग निकसन साधन लेखो॥
सब ही पैर धरत थे मोपै, रंचहु दया करी ना तेपै।
यापै पैर धरत हैं कैसे, दीन पशुहि न सतावें जैसे॥

दोहा–पुरवासी हैं निरदई, मो पै दया न कीन।
अब मैं भी तड़फांव इमि, जल बिन तड़फै मीन॥
यों विचार सुर आयकें, व्याधी पुर उपजाय।
हुये दुखी पुरवासि सब, सुर प्रसन्न हो जाय॥

पुण्य विशल्या अति ही धारी, मिट गई व्याधीं पुर की सारी।
केवल नीर न्हौन का पाया, चाने संकट दूर भगाया ॥
तास न्हौन का जल द्रुत लावो, लागी शक्ती वेग नशावो।
याविध मनुज शीघ्र ही बोला, जल का मर्म राम से खोला ॥

दोहा–श्रवणत ही प्रमुदित हुये, मनो शक्ति हुइ दूर।
जल आवेगो च्छणक में, करें शक्ति को चूर ॥
भामण्डल हनुमान अरु, अंगद बैठ विमान।
वेग आय अवधा विषें, पहुँच भरत के थान ॥

निद्रा वश, नृप भरत जगाया, लखण शक्ति का, वृत्त सुनाया।
श्रवत भरत हिय अतिरिस जागी, युद्ध दुंदभी बाजन लागी ॥
सेना सत्वर भरत सजाई, द्रुत लंका पै करों चढ़ाई।
व्याकुल हुये अवधपुर वासी, निशासमय क्या विपदाभासी ॥

दोहा–कीन्ही कोय चढ़ाइ रिपु, यों सुभटन मन भास।
सज सज आयुध च्छणक में, आए भरत के पास ॥
सुभटानी कइ हुईं विकल, पति हिय, गल लिपटेय।
कइ भययुत धन शीघ्र ही, तहखाने धर देय ॥

कइ तिय सोवत भर्टाहि जगाये, ते सब आयुध सजकें आये।
लख भामण्डल अरु हनुमन्ता, भरत प्रेमवश हुवा रुपन्ता ॥
कहा, सुनों नर नाथ हमारी, वहां जान ना गम्य तिहारी।
फौजन फांटा को द्रुत रोको, जो हम कह, चितमांहिधरोसो ॥

दोहा-लंका नगरी बसत है, बीच सिन्धु के मांहि।
बिना सेतु पहुँचन कठिन, भूचर की गम नांहि॥
श्रवत भरत बोले तुरत, और उपाय बताव।
भामंडल बोलें इन्हें, न्हौन नीर मँगवाव॥

सूरज उदय होन ना पावै, यदि हो? प्रान बचन ना पावै।
यामें फेर तनक ना मानो, नीर मँगावो जैसे जानो॥
श्रवत भरत द्रुत इन्हें उचारी, तिहिं ले जावन, राय हमारी।
जब श्रीगुरु, संबंध बताये, लछमण यासे ब्याह रचाये॥

दोहा-द्रोणमेघ प्रति दूत को, तत्त्वण दीन्ह भिजाय।
वानें जाके नृपति से, सबही वृत्त बताय॥
प्रथम यह रोपित हुये, तुरत सजी निज सैन।
लड़ने को उद्धत भये, अरुण भये दुइ नैन॥

तभी भरत सँग केकइ लाये, वे सब खगहु साथ में आये।
भरत, माम को वृत्त बताया, केकइ ने ह सब समझाया॥
जैसो मुनि संबंध उचारो, श्रवत नृपति ने रोप निवारो।
पठाय पुत्री द्रुत ही दीन्ही, कछुहू शंका, पुन ना लीन्ही॥

दोहा-ढुरें चँवर तसु शीस पर, रामकटक में आय।
चकित होय देखें सबै, मुख छवि द्युति अधिकाय॥
ज्यों ज्यों आवै लखण ढिग, त्यों त्यों साता लीन।
ढिगै आय ठाड़ी भई, शक्ती हुई विलीन॥

लखण अंग से निकसी शक्ती, ज्योति सिखा सम लखि आरक्ती।
हनुमत ने द्रुत पकड़ी ताको, रूप लखाया मनहु तिया को ॥
कहै, नाथ क्यों पकड़त मोकों, मैं तो सत्य बतावत तोकों।
लखो न कछू भ्रष्टता मेरी, जो आराधै, उसकी चेरी ॥

दोहा—हूं अमोघ विजया सकति, जग प्रसिद्ध मम नाम।
विकल न कबहूं होत हों, प्रान लैन मम काम ॥
मैं अपना अब वृत्त कहुँ, जा विध रावण पाय।
चेरी हुइ मैं तास की, यातें हुई सहाय ॥

एक समय बाली ऋषिराया, अष्टापद पै ध्यान लगाया।
रावण ने तँह बहु थुति कीन्हीं, धरणेन्द्रासन कपाय दीन्ही ॥
अवधिज्ञान से इन्द्र विचारा, लखत भक्ति, गिरि आय सिधारा।
हठयुत याको दीन्ही मोकें, मैं काहू पै रुकों न रोकें ॥

दोहा—एक विशल्या टार कर, कोय न समरथ आन।
करै निवारण जो मुझे, ना निकसूं, लूं प्रान ॥
याने अनुपम पुण्य को, संच्या पूरव मांहि।
त्रय हजार वर्षन तलक, किय तप, चिगि है नांहि ॥

याविध शक्ती वृत्त बखानी, याकी शक्ती अधिक कहानी।
यापै वश ना चालै मेरा, ये ना आती होत सवेरा ॥
तो अवश्य मैं विजयी होती, कोइ शक्ति ना मोकों खोती।
यों शक्ती हनुमतहिं उचारी, सत्य जान हनुमत ने छांरी ॥

दोहा-नर्यो विशल्या राम को, बहु आशिष दी राम।
तो बल ही भ्राता बचो, धन्य धन्य इमि भाम॥
सखियन के संकेत से, लक्ष्मण के ढिग आय।
पांव पलोटी तासु के, बेचैनी सब जाय॥

लखण नींद से उठकर जागे, जानें रावण ठांड़ा आगे।
पै रावण को नांहि निहारा, तब रोपित हो इमहि उचारा॥
कहां गया रिपु, रावण यांसे, बताव वेगी ? सुन सब हांसे।
अहा चेतना लक्ष्मण पाई, सब मिल जय जयकार मँचाई॥

दोहा-ह्वै प्रमुदित राघव तुरत, लीन्हा गले लगाय।
कहा, अहो, जीवन हृदय, लहा प्रान सुखदाय॥
या कन्या के पुण्य ने, दीन्ह तुझे जिय दान।
रिपु, शक्ती को मारकें, समझा लीन्हें प्रान॥

रण का वृत्त, राम बतलाया, पुण्य पुरुष आगम दर्शाया।
प्रान बचावन मग बतलायो, निज आगम संकेत सुनायो॥
मनो पुण्य ने भेजो याको, उऋण न होवूं, मैं तो ताको।
वृत्तहिं श्रवत आइ मुस्कयाई, निरखि विशल्या, मनु निधिआई॥

दोहा-लोक सुन्दरी ही रची, विधि ने रुचिर बनाय।
अनुपम छवि को निरखतइ, मन कीलित हो जाय॥
सब मिलकर उत्सव रचा, पाणिग्रहण कराय।
मनहु इंद्र शचि सम दिपें, दया धर्म ढिग आय॥

हुये युद्ध में घायल प्रानी, हुई सबहिं की सब दुख हानी।
चंदन परस विशल्या कीना, घायल तन पर लगाय दीना ॥
लगतइ, हुइ कंचन सम काया, मनो अमिय का लेपन पाया।
हुये सुखी पशु भी या लेपा, नर की कथा कहा सुख चेपा ॥

दोहा—अतिशय पुण्यी इकहु से, सुखी हुये सब जीव।
जगमँह महिमा पुण्य की, पावत सौख्य सदीव ॥
शिवमँह महिमा आतम की, रत्नत्रय प्रगटाय।
"नायक" रमत स्वरूप नित, अविनश्वर सुख पाय ॥

॥ इति अष्टदशमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ रावण को बहुरूपिणी विद्या सिद्ध होने का वर्णन

—वीर छंद—

लक्ष्मण वृत्तहिं सुना दशानन, आइ विशल्या ता ढिग मांहि ।
त्योंही शक्ती तन से निकसी, चणहु ठहर सकी तँह नांहि ॥
तब सचेत व्है लक्ष्मण सुखयुत, ता सँग पाणिग्रहण रचाय ।
महान उत्सव हुवा कटक मँह, ताकी शोभा वरणि न जाय ॥

दोहा—सुन रावण तउ मुख छविहिं, जवरन राखी शान्त ।
मनो कछुहु ना व्है असर, उठी न कोई भ्रान्त ॥
तदपि सचिव सब मिल तबहिं, करें विनय, व्है दीन ।
सुनहु प्रभो, अरदास यों, हम सब निर्णय कीन ॥

आप रोष चह तोष गही जे, पै हम सब की अब सुन लीजे ।
हम सब, हित की बात उचारें, उचरन मँह संकोच न धारें ॥
हैं रिपु, प्रबल पराक्रम स्वामी, सिंह, गरुण विद्या लहिं नामी ।
यातें शत्रु अजित अब जानो, तिनपरभाव प्रत्यक्ष दिखानो ॥

दोहा—कुम्भकर्ण तुव भ्रात अरु, युगल पुत्र रणमांहि ।
बँधे जाय बंधन विषें, जीवन आशा नांहि ॥
अमोघ शक्ती हुइ विफल, सबविध दीसै हार ।
यातें सोचो अब प्रभो, है यो विनय हमार ॥

आप अवज्ञा कवहुँ न कीन्हें, हित की वात मान ही लीन्हें।
यातें परतिय राग निवारो, या भव परभव सुख अवधारो ॥
राम ढिगै दूत सीय पठाओ, संधि करन प्रस्ताव रचावो।
जामें होवै विपुल बढ़ाई, निर्मल वंश रहै प्रभुताई।

दोहा–याविध सचिवन नें कहा, पुन निर्णय यों कीन।
दूत भिजावें राम ढिग, ताको समझा दीन ॥
पै रावण कल्मष हृदय, तिहि कीन्हा संकेत।
मनहिं भाव दर्शाय दिय, जो निज हिय अभिप्रेत।

दूत समझ लिय, निज मन मांही, संधि करन, प्रभु इच्छा नांही।
आय कटक मँह, वृत्त सुनाया, आज्ञा पाय राम ढिग आया ॥
कहा, सुनहु मैं जो कुछ बोलों, कहै प्रभू तसु आशय खोलों।
त्रिखंड भूपन का हूं स्वामी, मैंने जीते हरि से नामी ॥

दोहा–यामें तुम अनभिज्ञ हो, ना जानत हो मोय।
मूरखपन को ना करो, समझावत हों तोय ॥
सिन्धु लंघ आये इतै, जीवत कैसे जाव।
यातें मानो वात को, ये ही बचन उपाव ॥

राजनीति में तुम ना जानो, यातें सिय की हठ ना ठानो।
लेव विभव अरु आधी लंका, सुख भोगो, हिय होहु निशंका ॥
यदि न मान हो, याविध मेरी, तव तो शामत आई तेरी।
भ्रात सुतन निज, छुड़ाय लेवें, ना मानन फल तुमको देवें ॥

दोहा-मृत्यु मुख ना आदरो, निज पर हितहि लखाव।
काहे जवरन सिंह मुख, प्रविशत नांहि डराव॥
यातैं मानो सीख को, सुखी होय सब संघ।
याविध उचरी दूत ने, मन में धरैं उमंग॥

श्रवत राम हिय रोप न लीन्हा, शान्ति युक्त तिहि उत्तर दीन्हा।
मोकों विभव प्रयोजन नांही, मेरा चित्त रमा सिय मांही॥
भेजो प्रिया ढिगं दूत मेरे, मैं भी भेजों, भूतसुत तेरे।
प्रिय युत गहन मांहि मैं रेहों, जीवन सुखयुत तहां वितेहों॥

दोहा-श्रवत दूत राघव वयन, मद युत पुनहु उचार।
अहो राम! रजनीति मँह, हो तुम अज्ञ अपार॥
अतुल वली रावण खगप, मारे रिपुहि महान।
अस्थि ढेर लागे जनहु, हैं कैलाश समान॥

अब भामण्डल हिय रिसयाया, दूत हनन हित खडग उठाया।
कहा, कुवच रे दूत अजाना, क्या उचरै तूं निज मनमाना॥
राम, सीय को लेही आवें, वाहि पाप का मजा चखावें।
तूं पापी का विरद उचारै, विरथा डींग प्रभू की मारै॥
दोहा-चोर, अधर्मी, छल निपुण, ताहि प्रशंसत भूर।
ऊपर से उचरत सुयश, कहत ताहि है शूर॥
विन विवेक की वात कह, ताका फल तूं भोग।
गति सारूं मति तें लई, ठाना मरण नियोग॥

यों कह मारन खडग सम्हारा, तबहि लखण ने हनन निवारा।
कहा, अहो विक्रम तुम धारो, नांहि दीन पै रीस निसारो॥
पड़ै खडग वीरन शिर मांही, दीन हतनहित ये असि नांही।
रंच न दोषी याको जानो, यो सब दोष प्रभू का मानो॥

दोहा–जिमि शुक बोलै मिठवयन, ना जानें तसु मर्म।
बजै बीन मिरदंग जिम, नांहि बजन का भर्म॥
नीको फीको ना लखै, ताविध दूत स्वभाव।
प्रभु सारू ही ऊचरै, नांहि विवेक लहाव॥

याविध लक्ष्मण वयन उचारा, भामण्डल का क्रोध निवारा।
कीन्ह तिरस्कृत, दूत निसारो, प्रभु ढिग वह ह्व जाय पुकारो॥
शीस नाय कर वृत्त बताया, आप कहे की, सर्व सुनाया।
पै सिय की वह हठ ना छारै, निज तिय की ही चाह उचारै॥

दोहा–कहे, दशानन विज्ञ नर, लोक निंद्य वचभाख।
यों उचरत तसु पाय फल, नरक निगोदन चाख॥
जिव्हा के शत टूंक हों, परतिय चाह बखान।
जो सेवत, परतिय रमत, उन दुख लख भगवान॥

मैं तो निज तिय सीता चाहों, बन में जा जीवन निरवाहों।
विभव चाहता ना मैं वाका, राज्य चहों ना मैं लंका का॥
धरि तुम परतिय की आसक्ती, मैं निज की किम धरों विरक्ती।
परहित करत मरन तक चाहें, क्यों ना निज कर्त्तव्य निवाहें॥

दोहा-याविध राघव ने उचर, न्याय नीति दर्शाय।
पुन सुग्रीवहु ने विहँस, मोसे यों बतलाय॥
तुव स्वामी जो यों बकत, उपजा वायु विकार।
फेरा पड़ा पिशाच का, वशी होय उच्चार॥

याविध मालुम पड़तामोकों, तास उपाय बतावत तोकों।
रोग नाशवे वैद्य बुलावो, मंत्रवादि से ताहि झरावो॥
पुनहू रोग जाय ना वाका, तो द्रुत लच्मण हर है ताका।
सर्व रोग रणमांहि मिटावै, आधा व्याधा सर्व भगावै॥

दोहा-तिरस्कार कीन्हा प्रभो, याविध से सुग्रीव।
केवल राघव ही उचर, न्यायरु नीति अतीव॥
शेष खगप विहँसत मुझे, अति दीना धिक्कार।
कहा कहों हे जग प्रभो, सब मिल दी दुतकार॥

अब रावण जो दूत उचारो, है उदास मन मांहि विचारो।
यदी कदाचित अरि को फांसै, तो आगामी ऐसो भासै॥
भ्रात सुतन की कुशल न दीसै, वे छूटें अब कौन गती सै।
सिय को भेजूं उन्हें बुलावूं, तब तो अति अपमान लहावूं।

दोहा-शूर-वीरता में मुझे, यदि हानि कछु आ जाय।
तबतो निश्चय समझहों, जीवन मृतक कहाय॥
यातें ताके रचवे, रचहों सविध उपाय।
साधों विद्या बहुरुपी, येही अन्तिम भाय॥

पर्व अठाई हू अब आया, विद्या साधन भाव समाया।
दी आज्ञा अनुचरहिं बुलाके, सजाव शीघ्र चैत्य सब जाके॥
शान्तिनाथ का सजो विशेषा, कोई त्रुटी रहै ना लेशा।
जनता हू प्रभु पूज रचावै, संयम भाव हृदय मँह ध्यावै॥

दोहा-मन्दोदरी बुलाय कर, कहा प्रिये सुन लेव।
तलवर निकट बुलायके, ताकों आज्ञा देव॥
अष्टान्हिक वृष पर्व में, करै न कोइ कषाय।
दया दान पूजा विषै, अपनो समय विताय॥

होय जितेन्द्री ध्यान लगावें, सहें परीषह बाधा आवें।
याविध मेरी आयस जानो, यामें फेर रंच ना मानो॥
करै उलंघन दंडो जावै, चाहे कोई हितू कहावै।
रणहिं पर्व तक वर्जन कीन्हा, याविध आज्ञहिं दशमुख दीन्हा॥

दोहा-मन प्रसन्न उत्साह युत, निर्मल पट पहिरेय।
रत्न खचित भूषण पहिर, मुकुट शीश धर लेय॥
श्री जिन भवन प्रवेश किय, दर्शन पूज रचाय।
पुन विद्या को साधने, इक चित ध्यान लगाय॥

मनो मुनी ही ध्यान लगाया, ऐसा आसन सुदृढ़ जमाया।
फटिक माल, कर मांही धारै, पवित्र मन से मंत्र उचारै॥
एक मात्र विद्या को साधै, दूज बात ना चित आराधै।
कर्म नाशने ज्यों मुनि बैठें, कर्म समूह स्वयं ही ऐंठें॥

दोहा—पति आयस जाविध करी, ताविध ही पटरानि ।
तलवर वेग बुलायके, उचरी अपनी बानि ॥
कीन्ह घोषणा तलवरहु, सारी लंका मांहि ।
अष्टान्हिक नृप पर्व मँह, क्रोध करे कोइ नांहि ॥

चाहे कितना कोय सतावै, तउ कषाय ना चितमँह लावै ।
विद्या सिद्ध न जब तक होवै, तबतक समय व्यर्थ ना खोवै ॥
संयम मांही समय बितीतै, आय पड़ै उपसर्गहि जीतै ।
याहि उलंघन कोय न कीजे, नातर ताफल अति दुख लीजे ॥

दोहा—श्री राघव के कटक मँह, फैली जब या बात ।
सिद्ध होय, इकचित जपै, अष्टपहर दिन रात ॥
यदी बीच में हिय विषै, उठै क्रोध की अग्नि ।
सिद्ध न होवे तदि उसे, होय नियम सब भग्न ॥

याहि विभीषण बात उठाई, सब मिल पहुँचे ढ़िग रघुराई ।
निज प्रस्ताव राम से कीन्हा, श्रवत राम ने उत्तर दीन्हा ॥
क्षात्रवृत्ति मँह करें न यैसे, जो तुम सब मिल उचरत जैसे ।
नियमधार जिन भवन विराजा, तापै रचो उपद्रव साजा ॥

दोहा—श्रवत सभी हर्षित हुये, न्यायवन्त नीतिज्ञ ।
राम कबहुँ ना ऊचरैं, विज्ञन मांही विज्ञ ॥
पै निज काज बनावनें, लक्ष्मण के ढ़िग आय ।
इनसे कह सुन सबहि ने, अन्तिम सहमत पाय ॥

सहमत पाके कपिन कुमारा, चाले प्रमुदत नगर मँझारा।
धर्मारूढ़ लखे पुरवासी, लख, विस्मितता सबको भासी ॥
लंकेश्वर का धीरज देखो, बंधु बँधे तउ साहस लेखो।
तनक न चितमँह व्याकुलताई, धर्म भावना सब उर छाई ॥

दोहा–कहै विभीषण का तनुज, बाल वृद्ध तिय छोड़ ।
धूम मँचाओ पुर विषें, देवो वापी फोड़ ॥
याविध कीन्हा कपि कुँवर, पुरमँह सब अकुलाय ।
राजाज्ञा से कोय भी, कीन्हें नांहि कपाय ॥

नृप के भवन मांहि पुन पैसे, पैसे आरण भैंसा जैसे।
महा उपद्रव तहां मँचाया, लख भय नृप रजद्वारे आया ॥
तब पटरानी कहै पिता से, लौट जाव तुम राजाज्ञा से।
शान्ति भंग फल, हो दुखकारी, मानो विन्ती पिता हमारी ॥

दोहा–होय स्वछन्दी कपि कुँवर, घोर उपद्रव कीन।
नगर कोट को भंग किय, फोड़ वापिका दीन ॥
उद्यानन को दल मले, बागहु दिये उजाड़।
नगर माँहि मँचि खलबली, मचायँ धूम जिम सांड़ ॥

शान्ति चैत्य की करते सेवा, जिन शासन के रक्षक देवा।
लखा उपद्रव, क्रोधित होंकें, निकस, भयंकर रूप रचोकें ॥
लख कपि कुँवर ततक्षण भागे, ठहर न पाये इनके आगे।
तब इन मदद कटक सुर आये, लंक सुरन ने मार भगाये ॥

दोहा पूर्ण और मणिभद्र सुर, राघव के ढिग आय।
राघव ने कीन्हा विनय, यथा योग्य बैठाय॥
तब प्रसन्न हो सुर कहें, सुनहु राम गुणवन्त।
न्याय नीति परिपूर्ण तुम, महापुरुष, महसन्त॥

या विध फैली महिमा भारी, विरद उचारें दुनियां सारी।
इतने पै भी कुँवर तिहारे, करें उपद्रव जा नृप द्वारे॥
पुरवासिन को पीड़ा देवें, जो ही चाहें सो कर लेवें।
याको क्या तुम उचित विचारो, हम पै याका न्याय उचारो॥

दोहा-सुन उलाहना सुरन का, लक्ष्मण बोले बैन।
अहो तुमहु यक्षाधिपति, करहु न्याय सुखदैन॥
राघव पुरुषोत्तम सुखद, जिनका विरद उचार।
रावण, तिन तिय को हरै, तास पक्ष तुम धार॥

हमने तुम्हरा कहा विगारा, वाने तुम्हरा कहा सुधारा।
जो उलाहना देने आये, तुमहु न्याय पै ध्यान न लाये॥
सुन सुर हिय मँह लज्जा धारी, सत्य, लखण ने गिरा उचारी।
पुन सुग्रीवहु अर्घ चढ़ाया, कहँ सुनहु लंका सुर राया॥

दोहा-नांहि प्रयोजन अन्य कुछ, केवल इक अभिप्राय।
साधे विद्या बहुरुपी, ताहि डिगावन जाय॥
होय न विद्या सिद्ध तुहि, यह हमरो मन्तव्य।
दूज कछू ना जानियो, याहि होय भवितव्य॥

श्रवत सुरन ने तथास्तु बोला, पै अति वर्ज, रहस को खोला।
पुरवासिन को नांहि सतावो, केवल ताको रिस उपजावो॥
यों कह लज्जित होकें चाले, गये लैन, दे चले उताले।
असता पक्ष दिखावै नीचा, महासभा मँह सबहिन बीचा॥

दोहा—सुरन गये पै, हर्षयुत, अङ्गद आदि कुमार।
गजारूढ़ हो दल सहित, आये नगर मँझार॥
सीधे रावण के भवन, सब मिल कीन्ह प्रवेश।
मणिन चौक को सर समझ, शंकित हुये विशेष॥

सर समझत सब पांछे हाटे, धर साहस चल पाथर आटे।
तब मणि चौक समझ सब पाये, भूल समझ कें हास्य मँचाये॥
भवन रावणहिं भूल भुलैया, समझ न आवै मार्ग किथैयां।
देखा इन्द्रनीलमणि हाथी, सचमुच समझें अङ्गद साथी॥

दोहा—हुये भयातुर कपि कुँवर, पांछे सभय हटेय।
अंगद ने समझाय कर, सबको धीरज देय॥
मणि निर्मित दीवाल से, टकराये सब शूर।
मनो अंध भैरात फिर, कष्ट लहें भरपूर॥

शान्ति चैत्य का शिखर लखाया, तँह प्रविशन का मग ना पाया।
लखो मूर्ति तिय, सचमुच जानी, कही बताव मार्ग, शैतानी॥
वह ना बोली चांटा मारो, खाय चोट अंगुष्ठ विदारो।
तब समझे शिल्पी चतुराई, है नकली, कर असल दिखाई॥

दोहा—जसतस मन्दिर मँह प्रविश, अंगद आदि कुमार।
अंगद सबको बाह्य तज, प्रविशा चैत्य मँझार ॥
भक्ति सहित थुति उच्चरी, शान्तिनाथ महराज ।
धन्य धन्य मुद्रा सुखद, शान्ति अनूपम साज ॥

जाविध है प्रभु नाम तिहारो, शान्तिप्रदर्शक सुख विस्तारो।
भव्य जीव निज आतम निहारें, अशान्तभावहिं शीघ्र विदारें ॥
याविध अंगद थुती उचारी, पुन रावण की मूर्ति निहारी ।
मनो अचल, गत चेतन दीसै, लगाय आसन मूर्ति सरीसै ।

दोहा—लख अंगद बोला रुपित, हे पाखण्डी चोर ।
घना ढोंग तूंने रचा, ली माला झकझोर ॥
वस्त्र छीन कह कटु वयन, क्या चाहत है बोल।
श्री भगवन के सम्मुखों, अपना आशय खोल ॥

अनाचार कर यह प्रभु भक्ती, तूं क्या जानें विषयाशक्ती ।
चांवल अर्थि तुपन कों कूटै, दंभ रचाकें आनन्द लूटै ॥
अरे मूढ़ वृप मोक्ष निकेता, दंभ रचें क्यों प्राणहि देता ।
उठ उठ जल्दी निकस यहां से, नातर मारों बचे कहां ते ॥

दोहा—नांहि डिगा अंगद लखा, तब अन्तःपुर मांहि ।
जाय लाय सब तियन को, घेरा शंक्या नांहि ॥
पकड़ें केश घसीटता, मनु हैं वे सब गाय ।
आप बलध सम बीच में, सबहिन दई सताय ॥

वे सब विलपें किलपें भारी, तउ रावण दिठि नांहि निहारी।
तब अंगद पकड़ी पटरानी, मनहु सिंह चंगुल मृगि आनी॥
कहै कुवच सुन रे लंकेशा, हो चेरी सुग्रीव महेशा।
हो शक्ती तो याहि छुड़ावो, केश पकड़ पुन ताहि भ्रमावो॥

दोहा–पटरानी विलपत उचर, सुनहु लखो महराज।
घोर कष्ट देवै मुझे, द्रुत बचाव खगराज॥
तुम अपार बलके धनी, तऊ लहें हम कष्ट।
ना देखो ना कछु लखो, भई बुद्धि तुव भ्रष्ट॥

तउ रावण चित नांही रीसे, क्रोध अग्नि मनु गत जड़ हीसै।
इमि सुमेर सम ध्यान लगाया, रुपा हृदय ना कम्पी काया॥
जैसे मुनिवर ध्यान लगावें, लहें मोक्ष फल कर्म नशावें।
तिमि रावण ढ़िग विद्या आई, तत्क्षण जय जय कार मँचाई॥

दोहा–कहै नाथ मैं सिद्ध हुइ, बहुरूपिणि मम नाम।
गहो मुझे हे खगपती, द्यो आज्ञा क्या काम॥
चक्री अध चक्री सिवा, सबको वश कर लेवँ।
येसी मम सामर्थ्य जनु, कहो कहा कर देवँ॥

अंगद लखा सिद्ध ये कीन्हा, पटरानी को द्रुत तज दीन्हा।
नभ मारग से तत्क्षण भागा, सब ही भगे देर ना लागा॥
जिम रवि उदय अंध द्रुत भागे, तत्क्षण भगत देर ना लागे।
मनो कोय ही इत ना आया, याविध भय, हिय मांहि समाया॥

दोहा-सुन रावण विद्या वयन, अतिशय लखा प्रकास।
तब हिय मँह निश्चय भया, सचमुच पूरी आस॥
पंच परम पद को नमा, सिद्धन शीस नमाय।
सब चैत्यों को नमन किय, हर्ष न हृदय समाय॥

ताहि समय सब याकी नारीं, रुदनत वृत्त सुनाई सारीं।
आप होत था अंगद छोरा, किय अपमानित खूब भमोरा॥
यों सुन रावण, धीरज दीनें, ताहि मृत्यु मुख समझो लीनें।
अरु सुग्रीव निरग्रीवा जानो, सबहिं मरे सम, अब मैं मानो॥

दोहा-राम लखण दोनों अनुज, भूमिज कीट समान।
करों कोप का उन प्रती, सहजइ दीन समान॥
दुठ खग मिल भेले भये, नष्ट होन के काज।
सब नश हैं अब छणक में, जिम नश कीट समाज॥

महा मान युत याविध बोला, छिड़कअमियसमतियहिफफोला।
समझै, अब तो सब रिपु मारे, बचै न कोई मोर अगारे॥
प्रमुदत निकस चैत्य मे आया, सुगंध लेपन द्रव्य लगाया।
किय अभिषेक, तियें हो भेली, प्रेम प्रहार सबहिं ने झेली॥

दोहा-मुदित होय रावण पुनहु, जाय पूज भगवान।
आय असनशाला विषें, कीन्हा भोजन पान॥
कछुक देर लेटे तऊ, चैन चित्त में नांहि।
विद्या परखन हेत अब, करी चोट भू मांहि॥

हुवा प्रलय सम महा धड़ाका, सबहिन को तब लगा कड़ाका।
अचरज लीन्हा सब नर नारी, काहे पृथ्वी कपती भारी ॥
राम कटक भी इत उत डोले, हुये भयातुर कौन झकोले।
क्यों हो ऐसा समझ न पाये, मनो देव कोउ प्रलय मँचाये॥

दोहा–लख रावण विद्या विभव, प्रबल शक्ति या मांहि।
तत्क्षण आज्ञा तिहिं दई, सुन या देखो नांहि ॥
ऐसा अद्भुत रथ रचहु, वह आज्ञा अनुसार।
रच दीन्हा द्रुत क्षणक मँह, विस्मित हो संसार ॥

मह विशाल ये रथहिं बनाई, सहस्र हाथी जुपे बताई।
अंजनिगिरि ही मनु दिखलावे, लख रावण हिय हर्ष उपावै ॥
सिय की ओर चलन चित चायो, ज्योंही सिय ने रथहिं लखायो।
आवत मोढ़िग श्याम घटासी, हुई भयातुर सुध बुध नासी॥

दोहा–कहै सखिन से वेग ही, कहो कहा ये आय।
सुन वे निश्चय कर इसे, विद्या विभव बताय ॥
खगपती ने साधी प्रबल, बहुरूपिणि इस नाम।
ता बल रथ निर्माण किय, रिपु नाशन मृत धाम ॥

सुन सिय गात कपा भरपूरा, हुवा हृदय मानो अब चूरा।
राम लखण यद्यपि बलधारी, तदपि शक्ति अब याकी भारी॥
सुनों न अब मैं निधन उनों का, या भामंडल भ्रात जनों का।
यों विचारती हिय मँह कांपी, रावण ढ़िग आ, याको भांपी॥

दोहा-देख भयातुर अतिघनी, रावण याहि उचार।
हे देवी ! मेरी सुनहु, कपट वृत्ति, मैं धार॥
कीन्हा तेरा अपहरण, क्षात्रहिं वृत्ति उलंघ।
कर्मोदय ने भाव किय, हुता पूर्व सम्बन्ध॥

मैं ना कीन्हा बलातकारा, व्रत केवलिढिग मैंने धारा।
जो तिय मोको नांही चाहे, ना सेवूं यों 'आन' निवाहै॥
याते चाली तेरी चाही, मैंने हू निज 'आन' निवाही।
अब तो राम लखण ना जीवें, मम प्रहार तें विछें मही में॥

दोहा-यातें तूं अब मान ले, बैठ यान में संग।
विहरें सुखयुत गगन मँह, हम तुम धरें उमंग॥
यामें फरक न जान तूं, उनकी कुशल मनाय।
मान हमारी बात को, तो वे हू बच जांय॥

सुन सिय बोली गद्‌गद् बानी, सुनहु दशानन हे विज्ञानी।
कहूं कदाचित रणमँह तोसों, मो वल्लभ से सन्मुख होसों॥
हनन पूर्व संदेश सुनावो, भामण्डल की बहिन जतावो।
तुम जीवन तक जीवन जानो, यामें रंच न शंका मानो॥

दोहा-तुम दर्शन हित टिक रहे, प्रान हमारे जान।
हुई वियोगिन दुख असह, लह नो लख भगवान॥
यों कह सिय मूर्छित हुई, जिमहि लता मुरझाय।
तरु आश्रय जब ना रहे, तिमहि दशा सिय पाय॥

महा सती को मूर्छित देखो, रावण हियमँह अब दुख लेखो।
दम्पति प्रेमी हैं अनिवारी, जुदे करन ना शक्ति हमारी ॥
धिक धिक मोकों युगल विछोयो, महा नीच सम कार्य सँजोयो।
मुझ पामर को ये प्रिय भासी, अब दिखती नागिन विष आसी ॥

दोहा—तज विवेक मैं मूढ़ ने, मानी ना हित बात।
भ्रात विभीषण ने मुझे, सम्बोधा दिन रात ॥
सचिवन मारीचादि ने, न्याय नीति दर्शाय।
पै मुझ मानी ने विवश, सबको दिय ठुकराय ॥

मित्र, राम को बनाय लेतो, मोकों यश जग सारा देतो।
अब यदि सिय को तहां पठावूं, तदि भीरू जग में कहलावूं ॥
तो पुन रण की करों तियारी, तामें हिंसा होवै भारी।
बिना प्रयोजन दुई तरंगें, नाशें मेरी हृदय उमंगें ॥

दोहा—कि कर्त्तव्य विमूढ़ सम, संकट मोपै छाय।
सकलप विकलप बहु उपज, पुन निष्कर्ष लहाय ॥
राम लखण को जीवतइ, पकड़ युद्ध में लेवँ।
पुन आदर युत तिनहिं को, तिनकी सीता देवँ ॥

बहु सम्पति युत सिय को देवूं, अपार कीर्ति जगमँह लेवूं।
राम लखण हैं दोई न्यायी, शेष सभी हैं अति अन्यायी ॥
यातें सबकों तुरत सँहारों, दुष्ट खगन कों एक न छांरों।
तियें सताई अंगद छोरा, ताका फल दउँ दंड कठोरा ॥

दोहा—सब भूमिज निर्वंश कर, शुद्ध धरा पुन थाप।
तीर्थंकर हर हलधरहु, खगकुल में ही व्याप॥
अनहोनी यों चिन्त्या, मनो विधाता आप।
जो चाहै सो होयगो, पुन्य करै या पाप॥

सबकी होवै यहि मनमानी, जगमँह ना हो मोह कहानी।
रावण तो याविधि चितारे, होनहार विपरीत विचारे॥
अशकुन दिखन लगे अतिभारी, करें सूचना क्षय की सारी।
इन्द्र चक्रि हू यासे हारे, काल चक्र ने सबहि सँहारे॥

दोहा—दूजे दिन दरबार में, बैठा रावण भूप।
भ्राता अरु पुत्रन बिना, भासै सभा कुरूप॥
चिन्तातुर लख के सभी, कीन्ह विनय सुन नाथ।
शक्रहि तुला अब छांड़ दो, यों कह नाया माथ॥

श्रवणत तोहू नांहि निहारा, ना कोई से कछू उचारा।
मान सहित उठ करके चाला, पहुँचूं मैं द्रुत आयुध शाला॥
पूर्व छींक तत्क्षणहिं निवारी, मृत्यु होय दर्शावन हारी।
आगे सर्प भयंकर काला, मग में बैठा रोकन वाला॥

दोहा—कहां जात धिक धिक तुझे, कुशल नांहि ये शब्द।
अनिष्ट सूचक सुन पड़े, हा हा अतिहि कुशब्द॥
पटरानी मन्दोदरी, लखकर यों उत्पात।
समझ गई चित के विषें, क्षय सूचक प्रख्यात॥

तत्क्षण सचिव बुलाये याने, कहायँ जग में सचिव सयाने।
तिन सबसे ये गिरा उचारी, देखो अशकुन होते भारी॥
यातें प्रभु को हित दर्शावो, हित का मारग ताहि सुझावो।
जलै झोपड़ी, कूप खनावै, अहित होय, पुन का दर्शावै॥

दोहा—नृपति अहित लखकें सचिव, पतिहिं अहित तिय टार।
सरुज अहित लख वैद्य हू, देवै विपति निवार॥
यातें अशकुन लखत अब, चेतो क्यों ना सर्व।
बीत जायगी शीस पै, कौन काम सब दर्व॥

श्रवत सचिव या भांति उचारे, अज्ञ नांहि हैं प्रभो हमारे।
न्याय नीति सब के विज्ञाता, पै अब उनको कछु न सुहाता॥
ना कोई की सुनें न मानें, होनहार वश अपनी ठानें।
तुम उनकी अर्धांग कहावो, क्यों ना तुमहू हित दर्शावो॥

दोहा—सुन पटरानी याविधै, वेग स्वामि ढिग आय।
कहै सुनो हे मम प्रभो, यदि समझत हितदाय॥
आप मुझे पद पट दिया, मुख्य रानि संबोध।
अतः क्षमो मम कटु वयन, जगाव हिय मँह बोध॥

आप उचरते मुझे महैषी, और समझते मुझे हितैषी।
तदि रण शंकित तुला निवारो, चित कुमार्ग से अब तुम टारो॥
पर तिय अग्नि शिखा सम देखो, यासम दुख ना दूजा लेखो।
यातें सिय को वेग पठावो, निज बन्धुन को तुरत बुलावो॥

दोहा–बड़े बड़े क्षय हो गये, पर तिय नेह लगाय।
रूप धरों जैसा कहो, क्या तुम कमी लखाय॥
अहो ग्राम की ग्रामिणी, तापर मोहित होय।
सुधा तजत विष को चहत, यापै अचरज मोय॥

रत्न छांड़ के कांच बिसावो, यातें कहा प्रशंसा पावो।
तिया पिया की है हितकारी, यातें मानो बात हमारी॥
वेग नाथ तुम आज्ञा देवो, तुमहु काम या बनाय लेवो।
राघव ढ़िगै सिया लै जावूं, भ्रात सुतन को वापिस लावूं॥

दोहा–रण में हिंसा होय अति, नर्क निगोद पठाय।
आप जगत के हो प्रभो, सब जीवन सुखदाय॥
अभयदान देवो जगहिं, विपुल सुयश फैलाव।
याविध से पटरानि ने, न्याय नीति दर्शाव॥

सुन रावण रिसयाया भारी, गर्व सहित यों गिरा उचारी।
दूर हटो ना मुख दिखलावो, बक कर निज पान्डित्य बतावो॥
निजको निन्दे परहि प्रशंसे, वीर तिया हो दीन उचंसे।
यदि सिय रक्षा ना कर पावे, सोंप मुझे परसों करवावे॥

दोहा–सुन प्रीतम के कुपित वच, तो हू ये रहि शान्त।
पुनहु विनय युत यों कहे, चित्त करहु विश्रान्त॥
शास्त्र मांहि उचरी प्रभो, नव हर हलधर होय।
अरु प्रतिहर को हर हनें, मेंट सकें ना कोय॥

हुये सप्त, अष्टम की पारी, तुमको उचरैं दुनियां सारी।
नाथ आप प्रतिहर कहलाये, वे हर हलधर दोनों आये॥
परतिय हठ को वेग निकारो, शक्ति होय तो मुनिव्रत धारो।
पायन पड़ती हूं मैं तोरी, इतनी विनय मान ल्यो मोरी॥

दोहा-विनय प्रिया की देखकर, रावण पुलकित होय।
हिये लगाके यों कहा, सुनहु कहत मैं तोय॥
तिया जात अबला सहज, यातें भय तूं धार।
व्यर्थहिं हर हलधर उन्हें, तूंने दिये उचार॥

नाम मात्र हर हलधर होवें, नाहर नाम भयहिं सब जोवें।
नाम इन्द्र रख इन्द्रहु माना, ताको क्या मैं ना पहिचाना॥
नाम सिद्ध क्या सिद्ध कहावै, पदवी सिद्ध मोक्ष की पावै।
यों वे हर हलधरहु कहाये, नाम गुणन अति भेद लहाये॥

दोहा-यों सन्तोष धराय पुन, क्रीड़ भवन में जाय।
दम्पति निशा वितीत कर, प्रातः काल लखाय॥
मन्दोदरि विनवत कहै, आप विजय कर आव।
श्रीजिन पूज रचावँगी, विमल भाव दर्शाव॥
जगमँह पुण्य प्रधान जनु, शिवमँह आत्म प्रधान।
"नायक" रमत स्वरूप नित, पावै पद निरवान॥

॥ अथ एकोनविंशतितमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ लक्ष्मण द्वारा रावण का निधन वर्णन

वीर-छन्द—

पद्मनाग इक सुन्दर दृढ़ रथ, विद्या से रावण निरमाय।
तापै रावण होय सुसज्जित, भारी अशकुन तभी लखाय॥
सर्व दिशायें लखी भयानक, रोकें पक्षी रवि उद्योत।
मड़राकें अति शब्द मँचाये, क्षय सूचक ये अशकुन होत॥

दोहा—तउ रावण प्रस्थान किय, दलयुत रण थल आय।
तभी राम विस्मित हृदय, याविध प्रश्न उचाय॥
कहो कौन सा शैल यह, रण थल में दिखलात।
सुन जाम्बूनद ने उचर, विद्या रथ प्रख्यात॥

रथ निरमापा विद्या द्वारा, जामें हाथी जुपे हजारा।
बहुत खिजाया अंगद जाके, कोप न उपजा तोभी ताके॥
सुन राघव चित ना भय खाया, चढ़ वाहन रण साज सजाया।
शकुन अनेक तहां पर देखे, निश्चय विजय आपनी लेखे॥

दोहा—भिड़े कटक दोउ आयकें, मारामार मँचाय।
मनो प्रलय सज आ गयो, रुण्ड मुण्ड दिखलाय॥
गय हय रथ चढ़ जूझते, करें परस्पर वार।
एक गिरें दूजा अरें, अपनी पक्ष सम्हार॥

चिगी राक्षसन की लख सेना, अरुण भये रिस तें मय नैना।
आगे बढ़, बहु वीर सँहारे, लख हनुमत हूं आय अँगारे॥
याने मयके रथ को चूरा, दूजा रथ चढ़ आ मय शूरा।
वाको भी या वेग विदारो, तीज चढ़ा तो ताहि सँहारो॥

दोहा–लख रावण मयकी दशा, पुन पुन रथन विहीन।
विद्या से निरमाप रथ, भेजा सुदृढ़ नवीन॥
मय तापर आरूढ़ हो, हनुमत का रथ तोड़।
भामण्डल अय मदद पै, ताहू का दिय फोड़॥

लख सुग्रीव साम्हने आया, याहू का रथ मार नशाया।
तबहिं विभीषण सन्मुख लीना, मय ने याको घायल कीना॥
राम पक्ष के यों लख वीरा, हो हताश मय नृप के तीरा।
लखा राम, किय सन्मुख वाको, कीना विह्वल क्षण में ताको॥

दोहा–विकट मार राघव करी, मय की सुध बुध भूल।
लख रावण आ मदद पै, रोक लखण ले शूल॥
कहै कुवच रे दुष्ट तूं, कहां जात पापिष्ठ।
परतिय दीप पतंग नर, मेरे सन्मुख तिष्ठ॥

राघव नृप दिय आज्ञा मोको, पकड़ चोर पुन दण्डो वोको।
सुन दशमुख हू रिस धर बोला, मानो गिरा तोप का गोला॥
अरे मूढ़ ना जानें मोकों, का समझावूं अब मैं तोकों।
जग प्रसिद्ध मैं रावण शूरा, करे अरिन को मैंने चूरा॥

दोहा-सब वसुधा का स्वामि हूं, सब पै मम अधिकार।
सुन्दर सुन्दर वस्तुएँ, हैं मेरी गलहार॥
घंटा गज गल सोहवै, नांहि श्वान गल मांहि।
महल योग्य सिय जान तूं, भिखमंगन कुटि नांहि॥

तोकों दीन रंक मैं जानूं, कहा युद्ध मैं तोसों ठानूं।
श्रवत लखण यों विहँस उचारा, नीके तोकों जानन हारा॥
है पृथ्वी का यो तूं स्वामी, महा चोर पाखंडी नामी।
अब करनी का मजा चखावूं, माय छठी का दुग्ध पिवावूं॥

दोहा-सुन उत्तेजक यों वयन, रावण हिय रिसयाय।
कीन्ह बाण वर्षा विपुल, श्रावण भाद्र मँचाय॥
तऊ लखण ने क्षणक मँह, दीन्हें ताहि विदार।
रावण ने दिवि शस्त्र का, कीन्हा तुरत प्रहार॥

बाण मेघ रावण ने मारा, जल निमग्न सब भूमि निहारा।
लखत लखण ने पवन चलाया, मेघ बाण को द्रुत विघटाया॥
बाण अग्नि रावण ने छोड़ा, वरुण बाण से लच्मण तोड़ा।
पुन लच्मण ने पाप प्रहारा, लेके पुण्य दशानन टारा॥

दोहा-इन्धन को लेके लखण, अरि पै कीन्ह प्रहार।
अग्नि बाण से तुरत ही, किय रावण परिहार॥
तिमर बाण से लखण ने, फैलाया द्रुत अन्ध।
सूर्य बाण से दशमुखहु, किय प्रकाश सम्बन्ध॥

सर्प बाण को रावण छोड़ा, गरुड़ बाण से लक्ष्मण तोड़ा।
विघ्न बाण को रावण मारा, सिद्ध बाण को लखण विसारा॥
अन्य बाण से विफल उतारै, पै वह विफल पणों ना धारै।
चलो परस्पर दश दिन ऐसो, रण घनघोर बतायो जैसो॥

दोहा–धर्म युद्ध ह्वै विविध विध, राज नीति अनुसार।
करें परस्पर पक्ष दोउ, आपस में संहार॥
कहूं विरोधी पक्ष का, यदि घायल हो जाय।
सेवा सुश्रूषा करें, भोजन पान कराय॥

वीरपणा की लड़ें लड़ाई, रिपु सन्मुख, तब मार मँचाई।
गिरै ताहि को मार न डालें, शस्त्र रहत पै वार न घालें॥
यों लख सुरहू कीन्ह प्रशंसा, न्याय नीति रण निर्मल वंशा।
क्षात्र वृत्ति को कभी न टारें, सुमन वृष्टि जयकार उचारें॥

दोहा–ताहि समय पै खग सुता, आठ हुती नभ मांहि।
कीन्ह प्रतिज्ञा अठहू नें, वरें लखण अन नांहि॥
सीय स्वयंवर के विषें, लक्ष्मण धनुष चढ़ाय।
तबसे कीन्ही लालसा, इहिं सम्बन्ध रचाय॥

अब पिय जूझै है रण मांही, जियन मरन का निश्चय नांही।
हुईं शंकित देखें पिय ओरा, इनसे इक सुरि कीन्ह निहोरा॥
कहो, तिहारी लक्ष्मण मांही, प्रीति दिखै, दूजै पै नांही।
सुन उनने निज वृत्त बताया, हमने याको पति ठहराया॥

दोहा-प्राणन प्यारा है पती, या स्वाभाविक बात।
अब जूझै वह रण विषें, क्या निष्कर्ष लहात ॥
यों सुर खगि दोउन विषें, अति सम्भाषण होय।
पड़ा लखण के कर्ण मँह, दृष्टि करी उपरोय ॥

ज्योंही लक्ष्मण उन्हें निहारा, त्योंही उनने "सिद्ध" उचारा।
कार्य सिद्ध हो नाथ तिहारो, ऐसो आशिष सबहिं उचारो ॥
सुन लक्ष्मण को द्रुत सुध आई, विघ्न विफल हो, सिद्ध सहाई।
मार "सिद्ध" द्रुत विघ्न निवारो, पुण्योदय ही कार्य सुधारो ॥

दोहा-वन रण वैरी अग्नि जल, शैल शिखर अरु शुन्य।
सुप्त प्रमत्तरु विषमथल, रक्षक पूरब पुण्य ॥
कहां लखण,कँह सुरि खगीं, कँह आपस सम्बाद।
कहां लखण का हेरनों, कहां "सिद्ध" हो प्राप्त ॥

रावण शिर लक्ष्मण ने छेदो, छिदतइ इक शिर,हुय तब वे दो।
दो छेदे तब चार दिखानें, चार छिदे तब आठ लखानें ॥
याविध जितने लखण सँहारा, दूने दूने बढ़े अपारा।
बहुरूपिणि विद्या बलसारूं, लक्ष्मण भेदन हुवा उतारूं ॥

दोहा-इक रावण ही रण विषें, हुै सब थल मँह व्याप्त।
सत सहस्र की को कहे, समर मँह अपर्याप्त ॥
भुज अनेक से लखण पै, रावण कीन्ह प्रहार।
पै लक्ष्मण अति वीरवर, किय सबका परिहार ॥

रावण माया कीन्ही जेती, तउ लक्ष्मण ने नाशी तेती।
तनक न हिम्मत लक्ष्मण हारा, क्षण क्षण मांही कीन्हा वारा॥
अब रावण को कठिन दिखानो, बाढ़ी श्वांस पसीना आनो।
वृहद् रूप से चली न याकी, स्वांग तजो असली काया की॥

दोहा—रावण के निश्चय हुआ, रिपु अजीत बलवान।
चक्र-रत्न को सुमिर तब, वह करमँह द्रुत आन॥
सहस्र आरे मय दिपै, मनो अग्नि की ज्वाल।
ठाड़ा मानो सम्मुखै, विकट काल विकराल॥

सूर्य प्रभा भी हो गइ फीकी, मुद्रा रौद्र लगै ना नीकी।
चक्रपाणि दशमुख को देखा, याका सभी विषम फल लेखा॥
पै लक्ष्मण का हिय ना कांपा, अन्तिम शस्त्र रिपू का भांपा।
सब विध से रिपु हिम्मत हारी, तब ही चक्र उठाया भारी॥

दोहा—लक्ष्मण बोले रे अधम, कृपण कोंड़ि सम लेय।
शक्ति न कमती राख तूं, अब प्रहार कर देय॥
यों सुन रावण कुपित ह्वै, कीन्हा चक्र प्रहार।
हुआ भयानक शब्द तब, कांप उठा संसार॥

मनो प्रलय ही सज के आया, सबने शस्त्र अमोघ उठाया।
नाग बाण बल लक्ष्मण कीना, हल मूसल को राघव लीना॥
भामण्डल ने खडग सम्हारी, सुग्रीवहु ने गदा सुधारी।
तेज त्रिशूल विभीषण धारो, हनुमत ने लांगूल सम्हारो॥

दोहा–चक्र निवारण ना हुवो, हुइ अद्भुत या बात।
दीन्ही तीन प्रदच्छिणा, आय लखण के हात॥
शिष्ट शिष्य सम किय विनय, लच्मण कर तिष्टेय।
लख राघव दल ह्वै मुदित, जय जय जय उचरेय॥

सब हर्षित हो यही विचारी, केवलि की ध्वनि सत्य उचारी।
ये लच्मण अष्टम हर जानो, राघव अष्टम हलधर मानो॥
यों लख रावण चक्र दशा को, कहा केवली सत्य हुवा सो।
भूमिज मोकों रण में जीतें, कछू न जिनके, आये रीतें॥

दोहा–धिक रजलच्मी च्णिक यह, विष मिल अन्न समान।
रत्नत्रय ही सार इक, देवै पद निरवान॥
इतने में लच्मण कहा, सुन रावण मुझ बात।
अभी न काहू विध गया, सब है तेरे हात॥

सौंप जानकी शीघ्र उचारो, राम कृपा तें जियन हमारो।
तूं रजलच्मी भोगो तैसे, जाविध हुती पूर्व में जैसे॥
मैं ना कछुहू तेरा चाहों, न्याय नीति ही पूर्ण निवाहों।
बन्धु तिहारे अबही छांड़ों, कहा वचन सो पूरा पाड़ों॥

दोहा–काल चक्र आया शिरें, यातें हिय रिसयाय।
विहँसत रावण यो उचर, अहो रंक गर्वाय॥
मैं अधिपति त्रयखंड का, तूं भूमिज है रंक।
नन्हो मुख बातें बड़ी, जकें न कहै निशंक॥

सुन लक्ष्मण ने विहँस उचारा, अब तो यह निष्कर्ष निकारा।
मेरे हाथ मौत है तेरी, है नारायण पद्वी मेरी ॥
सुन रावण ने इसे उचारो, नारायण पद मन से धारो।
तूं कुपूत को तात निकारै, नारायण पद क्यों ना धारै ॥
दोहा—हे वनचर निर्लज्ज तूं, ताको मैंने जान।
चक्र येवली पाय कर, फूला मूढ़ अजान ॥
खली टूक पावै निधन, फूला नांहि समाय।
ताविध तेरी ह्वै गती, विरथा गर्व बताय ॥

सुन लक्ष्मण हू चक्र घुमाया, किय प्रहार, रावण ढिग आया।
रोकै रावण, रुका न रोके, कर विदीर्ण, गय वापिस होके॥
पुन लक्ष्मण के कर मँह आया, प्रान रहित रावण को पाया।
पड़ा भूमि मँह त्रिखंड स्वामी, मनो शैल ही छाया नामी ॥
दोहा—भागी सेना दशमुखहिं, गत चेतन सम होय।
प्रभु का क्षय लखकर सभी, ठहर सका ना कोय ॥
लखत राम के वीरवर, सब को धैर्य बँधाय।
अभय दान दीना तुरत, शान्ति ध्वजा फहराय ॥

लखा विभीषण भाई मूवा, महा विकल ये चित में हूवा।
गल मँह छुरी मारनी चाई, भ्राता प्रीति उमड़ कें आई ॥
लखा राम द्रुत हृदय लगाकें, सम्बोधा अति धैर्य बँधाकें।
उच्चस्वर तउ विलाप कीन्हा, शोक विभीषण अति ही लीन्हा॥

दोहा—कहे भ्रात मम हिय पते, मैंने हित दर्शाय ।
क्रिय तूंने अवहेलना, रंच न मानी हाय ॥
आज कहाँ पौढ़े प्रभो, यह ना पौढ़न थान ।
मिष्ट वचन उचरो मुझे, बालक अपनो जान ॥

याविध रुदनत विलाप कीन्हा, अन्तःपुर हू यह सुन लीन्हा ।
सहस अठारह आई नारी, बिलपीं किलपीं सबही भारी ॥
नाना विध से विरद उचारें, मनु पति श्रवणत यों गति धारें ।
संधी करके सिया पठावो, अपने बन्धु वेग बुलावो ॥

दोहा—राघव महनर मह हृदय, हैं अति करुणावन्त ।
सब तियँ सम्बोधी अतिहि, पुनपुन पुन उचरन्त ॥
भ्रात विभीषण को पुनहु, सम्बोधा सुखदाय ।
"नायक" रमत स्वरूप नित, गुण अनन्त प्रगटाय ॥

॥ अथ विंशतितमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ केवली के निकट कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत, मेघनाद आदि का दीक्षा ग्रहण तथा रावण की अठारह हजार स्त्रियों को आदि लेकर अनेकन का संयम ग्रहण वर्णन

वीर छन्द—

दूर करन हित शोक विभीषण, भामण्डल इक कथा सुनाय ।
कहै सुनहु हे भूप विभीषण, अक्षय नामक नगर कहाय ॥
भूप अरिन्दम कछु कारण वश, बिना कहे ही किय प्रस्थान ।
आय अचानक भवन सजा लख, शृङ्गारी तिय रती समान ॥

दोहा—यों लख नृप अचरज लहा, हिय उत्सुकता ठान ।
कीन प्रश्न तिय से तुरत, मम आगम किम जान ॥
विनत रानि याविध कही, सुनहु नाथ बतलांव ।
आहारन हित अय मुनी, भवन मांहि पड़गांव ॥

निरन्तराय असन मुनि लीन्हा, पुन बैठन को आसन दीन्हा ।
कब आवें नृप प्रश्न उचारी, उत्तर हित उन अवधि विचारी ॥
पुन उनने या भांति बताया, आंय अचानक आजहि राया ।
यों सुन हम शृङ्गारहिं धारा, सुन नृप कौतुक चित्त विचारा ॥

दोहा–देखूं मैं कैसे मुनी, मन की बात बताय।
यों विचार द्रुत ही नृपति, मुनि आश्रम मँह आय॥
छिपत प्रश्न किय मुनि प्रती, बताव मन की बात।
तब मैं जानों मह गुरू, ज्ञानवान प्रख्यात॥

सुन मुनि अवधि विचार उचारो, मैं कब मरहों विकलप धारो।
वज्रपात से सत दिन मांही, होवे मरण, बचें तू नांही॥
अमुक थान पै कीटक होवे, विष्टा मांही भव तूं जोवे।
रंग रूप आकार बताया, सुन नृप के हिय संशय छाया।

दोहा–होय कदाचित सत्य वच, यातें भय चित धार।
कहा पुत्र से आय कर, जाविध मुनी उचार॥
पै तुम देखो कीट को, द्रुत विदीर्ण कर देव।
जातें तिर्यग योनि में, दुख न लहों स्वयमेव॥

कहा मुनी जाविध से ज्योंही, सप्तम दिवस मरण हो त्योंही।
उपजा नृप विष्टा में जाके, लखा पुत्र ने तंह पै आके॥
ज्योंही मारन चाहा वाको, त्योंही छिपा मिला ना याको।
तबहिं पुत्र आ मुनि से बोला, सारा रहस पिता का खोला॥

दोहा–सुन मुनि ने यासे कहा, तूं विषाद मतलाय।
नरक योनि को छांड़ लिय, शेष मांहि रम जाय॥
वृथा पाप तूं क्यों करै, हिन्सा भाव अतीव।
भोगे निज निज फल जिया, चउ गति मांहि सदीव॥

षट् द्रव्यन का रूप बताया, स्वभाव विभाव भी दर्शाया।
गहो स्वभाव विभावहिं छांरो, अपनो आतम रूप निहारो॥
रत्नत्रय ही जिय हितकारी, धन, जिन निज पर्याय सुधारी।
मुनिपद ही इक हितकर ऐसा, शिव सुख देत चहत जिय जैसा॥

दोहा—सुनत कुँवर दीक्षा धरी, तज विषयन से राग।
सुनो विभीषण जगत मँह, झूंठा नाता लाग॥
को पितु, भ्राता को रिपू, सब झूँठा सम्बन्ध।
निज निज भावन वश जिया, पुण्य पाप लह बन्ध॥

लोक रीति के तुम हो ज्ञाता, लक्ष्मण का हरपद विख्याता।
प्रतिहर को हर अवश्य मारै, ऐसी केवलि ध्वनी उचारै।
वृथा शोक कर भाव बिगारो, यातें अपना भाव सुधारो।
जातें गती बँधै ना ऐसी, वृथा भ्रात ने बांधी तैसी॥

दोहा—सुनत विभीषण हित वचन, सम्यग्ज्ञान चितार।
शोक भाव द्रुत ही तजो, वस्तु स्वरूप विचार॥
पुन सब मिलकर मंत्र किय, जियै, रिपू कहलाय।
मरण भये नांही रिपू, भावन समता लाय॥

लंकेश्वर परलोक सिधारे, उन प्रति ना रिपु भाव हमारे।
यातें सब मिल दाहन देवो, अगरादिक चंदन को लेवो॥
पद्म सरोवर पै सब जाके, कीन्ही दग्ध क्रिया तँह आके।
राघव हिय मँह परम दयालू, रिपु बन्धुन पै हुये कृपालू॥

दोहा-दीन्ही आज्ञा तुरत ही, रिपु बन्धुन को लाव।
करो मुक्त बन्धन उन्हें, दर्शाया निज भाव॥
यों सुन सब खगपति कहा, नहिं वे छांड़न योग्य।
मरन देव बन्धन विषें, उनके भाव अयोग्य॥

सुन राघव द्रुत तिन्हें उचारा, क्षात्र वृत्ति का धर्म हमारा।
सुप्त, भयी शरणागत आवें, मागें दांतन तृणहिं दबावें॥
बाल वृद्ध तिय नपुंस रोगी, धारें संयम कहाय योगी।
क्षत्री इनको कबहुँ न मारें, न्याय नीति भी यही उचारें॥

दोहा-राघव की आज्ञा प्रबल, टार सकै को भौन।
पै रिपु से सब भय लहें, बिगड़, सम्हारें कौन॥
अभी विभीषण हू लखै, बन्धुहिं बन्धन मांहि।
चिंता लखैं निज भ्रात की, विश्वस्तो इहिं नांहि॥

भामण्डल ने गुप चुप जाके, कहत भटन से हुकम लगाके।
बंधन सहित अभी तुम लावो, ना प्रमाद मग मांहि दिखावो॥
आज्ञा सारूं लेकर आवें, पै वे विराग हिय मँह ध्यावें।
सौम्य दृष्टि ईर्या पथ चालें, इतैं उतैं ना दृष्टी डालें॥

दोहा-मनो मुनी ही आ रहे, शान्ति भाव उल्लास।
राघव ढिग आके सभी, बैठ विभीषण पास॥
पुन इक स्वर बोले सभी, धन्य राम पुनवन्त।
रावण अक्षय बल धनी, ताका किय तुम अन्त॥

रिपु, गुण मांहि प्रशंसा पाये, जगत श्रेष्ठ वीरत्व लहाये
काविध विरद तिहारा गावें, इन्द्र कहत हू पार न पावें।
श्रवत राम लक्ष्मण सम्बोधा, महाभाग्य तुम हो जग योधा
राक्षसपति हू वीरा भारी, मरण तलक ना हेटी धारी।

दोहा—अब हम तुम सब एक जनु, भोगो पूरब भोग।
जैसे पहिले से हुते, हो हम तुम संयोग॥
विविध भांति से अमिय वच, राघव लखण उचार।
मह पुरुषन की सुजनता, लह परशंस अपार॥

श्रवत सभी द्रुत इनें उचारी, भोगन पै ना दृष्टि हमारी
धिक धिक भोग, बढ़ें जिम लिप्सै, इन्धन योग. अग्नि ना तृप्सै
नांहि प्रयोजन अब भोगों तें. काटें बन्धन अब योगों तें
क्षमो आप अपराध हमारो, कटुक शब्द जो पूर्व उचारो

दोहा—श्रवत सभा विस्मित हुई, धन्य धन्य इन भाव।
वैर भाव तजकें सभी, ममता भाव लखाव॥
कहें विपुल राघव लखण, पै न धरो इन राग।
रत्न परख का कांच गह, दृढ़तर जगो विराग॥

निमित योग बलवान कहावै, छप्पन सहस मुनी सँघ आवै
अतुलवीर्य आचार्य पधारे, महा ऋद्धि बल वैभव धारे।
यदी पूर्व में ये इत आवें, रावण आदि मरण ना पावें।
मैत्री भाव परस्पर धारें, ऋद्धि शक्ति जिनराज उचारें॥

दोहा-होनहार होवै प्रबल, कस आवें इहि थान।
जो देखी सर्वज्ञ ने, होय वही बलवान ॥
जाको जिहि जिस हेतु से, होना लाभरु हान।
निश्चय सेती होयगो, यों भाखै भगवान।

जादिन इत आचारज आये, तादिन केवल ज्ञान उपाये।
आय सभी हरखे नर नारी, आये सुर इन्द्रादिक भारी ॥
प्रमुदत पूजा सब मिल कीन्हें, धर्म श्रवत ही आनँद लीन्हें।
वस्तु स्वरूप ध्वनी उचारी, भेद प्रभेद बतावन हारी ॥

दोहा-पुण्य, पाप अरु शुद्ध त्रय, स्वर्ग, नर्क, शिवदाय।
त्रय के विशद स्वरूप को, केवलि ने दर्शाय ॥
श्रवत सभी हर्षित हुये, मनो अमिय किय पान।
मेघनाथ अरु इन्द्रजित, विनत प्रश्न यों ठान ॥

पूर्व भवावलि कहो हमारी, कौन कौन पर्यायें धारी।
प्रश्न होत ही ध्वनी उचारै, कौशाम्बी इक नगर मँझारै ॥
प्रथमरु पश्चिम थे दो भाई, धर्मश्रवण कर रुची उपाई।
दोनों क्षुल्लक वृत्ती धारी, आया इक दिन मुनिसँघ भारी ॥

दोहा-मुनि वंदन हित पुर नृपति, आय वंद्य, मुनिराय।
ताहि समय पुर श्रेष्ठी, वंदन हित इत आय ॥
नृप, आदर किय सेठ का, पुण्योदय परभाव।
लख क्षुल्लक पश्चिम तभी, किय निदान दुरभाव ॥

धर्म प्रभाव पुत्र होऊँ याको, रत्न बेंच फल कांचहिं आंको।
कँह तप स्वर्ग मोक्ष दातारी, कँह निदान से नरगति धारी॥
सेठ गृहै सुत उपजा येही, रतिवर्धन नामा गुण गेही।
भोगै भोग सेठ गृह मांही, धर्म रुची यँह पै रहि नांही॥

दोहा-प्रथम भ्रात क्षुल्लक वृती, उपजा स्वर्ग मँझार।
अवधिज्ञान बल सब लखा, निजरु भ्रात भवसार॥
भ्रत निदान वश सेठ गृह, उपजा भोगै भोग।
धर्म रुची अब ना रही, चिन्त्य, धरै किम योग॥

यों लख क्षुल्लक बन के आया, नृप मद धार ताहि निकसाया।
यों लख, सुर ने अति रिस लीन्हें, रतिवर्धन सम सूरत कीन्हें॥
नृप का पुर सब उजाड़ दीन्हा, नृप लख अचरजमनमँह लीन्हा।
मैं तो सेठ पुत्र को चाहा, यानें उल्टा धर्म निबाहा॥

दोहा-मिला सेठ अरु पुत्र तसु, नृप को नगरी मांहि।
तब समझा है दैव कोउ, वह रतिवर्धन नांहि॥
नृप को पकड़न आय सुर, तब नृप ने थुति कीन्ह।
क्षमो मोय, अविनय करी, मैं ना तुमको चीन्ह॥

बताव आज्ञा देवो मोकें, विनय करत हूं अब मैं तोकें।
तब सुर, सेठ पुत्र से बोला, पूर्व जन्म का रहस्य खोला॥
हम अरु तुम थे दोनों भाई, प्रथमरु पश्चिम वृष रुचि पाई।
क्षुल्लक वृत्ति दुहुन ने धारी, मैं तप से सुर हूवा भारी॥

दोहा–तुम निदान कर सेठ गृह, जन्में भोगे भोग।
भोगन में रम मूर्ख ह्वै, कीन्हा धर्म वियोग॥
कछु इक पूरव पुण्य तें, नरदेही पुन पाय।
विषय कषायन में रमों, विरथा जन्म गँवाय॥

यातें नर्क निगोदन जावो, अपनी करनी का फल पावो।
यों सुन सेठ, पुत्र ते दोई, भोगन अरुचि दुहुन को होई॥
पिता पुत्र दोउ मुनिव्रत धारो, तप कर सुत तिहि स्वर्ग सिधारो।
जँह पै भ्रात देव पद पाया, ता थानक पै ये भी आया॥

दोहा–काल पाय दोनों चये, नृप नरेन्द्र गृह आय।
उर्वरु उर्वस पुत्र ह्वै, तप कर स्वर्ग सिधाय॥
तँह तें चय रावण गृहे, उपजे दोनों देव।
इन्द्रजीत अग्रज हुवा, मेघनाद दूजेव॥

सेठ तिया था भव की माता, या भव भी हो मां का नाता।
यातें अधिक नेह वह धारें, यों केवलि की ध्वनी उचारें॥
हो विरक्त दोउ मुनिव्रत लीन्हा, कुम्भकर्ण हू सब तज दीन्हा।
मय नृप ने भी मुनिव्रत धारा, नृप अनेक गृह भार उतारा॥

दोहा–पटरानी मन्दोदरी, सुना सुतन व्रत धार।
अति ही तभी विलाप किय, मानो कुरुचि पुकार॥
पिता गये सुतहू गये, सब ही दीक्षा लीन।
धर कुटेक पति मरण किय, सब मोकों तज दीन॥

लख शशि कान्ता नामक आर्या, कहि मत रो, दशमुख की भार्या।
अजु तक भ्रमी चतुर्गति मांही, ताको तोकों सुध है नांही॥
पितु पति सुत ह्वै तेरे केते, करो ढेर सुमेर सम तेते।
रुदनी भव भव पार न लेवै, वहै अश्रु समुद्र भर देवै॥

दोहा—ले शरणा अब धर्म का, रुदन शोक अब त्याग।
जासे भव भ्रमणा मिटै, हित आतम के लाग॥
याविध सुन मन्दोदरी, हिय उपजाय विवेक।
हुइ उदास भवभूति मँह, जगा आत्म रस एक॥

मन्दोदरी परिग्गृह छांरो, निज चित से अब मोह निवारो।
शीघ्र आर्यिका के वृत धारी, चन्द्रनखा आदिक सँग सारी॥
सब मिल अड़तालीस हजारें, शीघ्र आर्यिका के वृत धारें।
संयम ठेलि मनो नद आई, श्रावक जन जयकार मँचाई॥

दोहा—वही हितू दे धर्म को, नैया देय उतार।
वही अरी है जगत मँह, डुबा देय मँझधार॥
यातें नौका पै चढ़ो, अपनी आप बनाय।
"नायक" रमत स्वरूप नित, अविनाशी पद पाय॥

॥ अथ एकविंशतितमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ श्रीरामचन्द्रजी का सीता सती से मिलाप वर्णन

—वीर छंद—

प्रमुदत श्रेणिक प्रश्न उचारा, कहो प्रभो सिय राम मिलाप।
सुन गणधर ने गिरा उचारी, हुवा मिलन मिट सब सन्ताप ॥
मनो चन्द्र को मिली रोहिणी, या चकोरि कों विधु सुखदाय।
सरुज अमिय सम औषधि पायो, यों मिल दम्पति हिय हुलसाय ॥

दोहा जा समये लंका विषें, प्रविशे खग नर नाथ।
ता समये नर नारि मिल, मुदत झुकायो माथ ॥
आपस मँह वर्णन करें, ये राघव सिय प्रान।
महावीर अतिशय बली, मोंहें पद्म समान ॥

आपति विपति दंपतिन भोगी, प्रथम विभूती गृहहिं वियोगी।
तात "वचन" को पूर्ण निबाहा, रंच न वैभव तँह का चाहा ॥
भरत भ्रात को राजा कीन्हा, आप अरिणि का मग धर लीन्हा।
पिया संग सिय प्राण पियारी, हो प्रेमिन वनि विपन विहारी ॥

दोहा-ये देखो लच्मण अनुज, दिपै राम के तीर।
वनवासी ये भी हुवो, प्रेम विवश रघुवीर ॥
मां पितु तजकर आपने, आय भ्रात के साथ।
शिष्ट शिष्य समकर विनय, सदा नमावैं माथ ॥

पितु मां सम भृत भावज मानें, तिन सम सेवा वृत्ती ठानें।
उनें खिलाय आप पुन खावै, पांछे शयनें शयन करावै॥
वली त्रिखंडी याने मारो, अतिशय पुण्य चक्र कर धारो।
महावली जगमँह प्रख्याता, कोट शिला उठाय लिय गाता॥

दोहा—ये हनुमत श्री शैल जनु, जन्मत चूरो शैल।
चक्र चूर विद्या तनों, लंका की करि गैल॥
चूरे गढ़ कोटन सुदृढ़, दिय सिय पिय सन्देश।
आवझीं रानी सवहिं, चित में डरा न लेश॥

भगिनी सम सिय को सम्बोधा, कराय भोजन चित में मोदा।
सिय ग्यारा दिन असन न लीन्हें, पिय की सुध लह भोजन कीन्हें॥
डिगाय त्रिखंडि तऊ न हाली, ता वल ही अजु पिय को पाली।
धन्य सुदृढ़ता साहस ताको, को कह सक यश मुख से वाको॥

दोहा—यासे पिय हलधर मिलो, देवर लक्ष्मण वीर।
ये भामण्डल भ्रात मिल, सोहै लक्ष्मण तीर॥
जाको सुर जन्मत हरो, लाय चन्द्रगति थान।
है भूमिज तउ चित विपें, अपने को खग मान॥

एक सहस अक्षौहणि लाया, राघव का सव काज बनाया।
धन्य धन्य यह सिय का भाई, त्रिपति मांहि द्रुत हुवा सहाई॥
यो सुग्रीव कपिन महराजा, राम सुधारो याका काजा।
रिपु को हन दिय राज्यहिं याको, सव सुख पाया मिला प्रिया को॥

दोहा–याहू सिय सुध ला दई, बहुतक कीन्ह प्रयास।
जासे सबही पुन मिले, मनहिं बुझाई आस॥
चन्द्रोदय का सुत यही, नाम विराधित भूप।
लक्ष्मण की दहिनी भुजा, भोगत पुण्य अनूप॥

चला जात ये अंगद वीरा, डरा नांहि ये रावण तीरा।
नग्र मांहि उपद्रव कीना, देवन की ही एक चली ना॥
गये उलाहन देवे देवा, हो अति लज्जित ते स्वयमेवा।
पक्ष अनीति गही थी यातें, लक्ष्मण नीति दिखाई जातें॥

दोहा–इमहिं बतावें नारि नर, निज निज मन की बाव।
सबहिन विरद बखानवें, जैसो जिनें सुहात॥
यदपि लंकपति निधन लह, तऊ न शोकै कोय।
परतिय हर अन्याय फल, मिला ताहि ने जोय॥

अन्यायी का कोय न साथी, विद्या हू ना बनी सँघाती।
तजा संग इक मां का जाया, भ्रात विभीषण बहु समझाया॥
होनहार वश तऊ न माना, कीन्हा वह ही जो चित ठाना।
ताका फल परलोक सिधारा, पावे दुख, निज भाव विगारा॥

दोहा–राघव उत्सुकता बढ़ी, प्रिया मिलन की चाह।
यातें हिय धीरज तजे, उठी प्रेम की दाह॥
ढिगं सखी लख ताहि से, प्रश्न राम ने कीन।
कहो कहां तिष्ठी प्रिया, दुख सागर लवलीन॥

भामण्डल की बहिन दुलारी, शील सुमेरी सत ना छांरी ।
ता फल से हो मिलन हमारो, पुण्य सहाई सुख विस्तारो ॥
श्रवत सभी जयकार उचारे, धन्य सिया, पिय राम दुलारे ।
मेरु दुःख को कीन्हा राई, अन्तिम विजय सफलता पाई ॥

दोहा–सखि संकेतो राम कें, वह दिखाय सिय थान ।
पुष्प प्रकीर्णक नाम गिरि, तँह सोहै सुखदान ॥
चँवर ढ़ोरती सखि कही, सुन राघव हरषाय ।
चले वेग सिय ओर को, अति अधीर मन पाय ॥

मनो आज ही परिणय होवै, हिया कली खिल सुख को जोवै ।
बहुत समय से बिछुड़न पाये, यातें हिय उत्सुकता छाये ॥
वर्ष समान क्षणहु क्षण बीतै, राघव विवश क्षणन को जीतै ।
ग्रीष्म तृषातुर धर जल आसा, चालत मग पै अति अभिलाषा ॥

दोहा–सिय ढ़िग हू जो सखि हुती, वा भी विहँसत बोल ।
देखो ढ़िग आवत पिया, बुझै चाह अनमोल ॥
जास मिलन निशिदिन जिमहि, मेह पपीही चाय ।
या चातकि वह बूंद जल, चन्द्र चकोरि लखाय ॥

श्रवत सिया हिय हरषी भारी, मनो स्वप्न या सचमुच धारी ।
हिय मँह चाह बढ़न अब लागी, पिया मिलन की घड़ि अब जागी॥
ताहि समय राघव ढ़िग आये, हिय मँह फूले नांहि समाये ।
मनो चन्द्र रोहिणि ढ़िग आया, सकुच पुलक अनुपम सुख पाया ॥

दोहा–दम्पति का सुखयुत मिलन, वर्णन में ना आय।
सम्बोधन काविध करें, सुख जैसो उन पाय॥
मनो कामि को कामिनी, निर्धन, धन गह लेय।
मृतहिं अमिय,हिमऋतु अगनि, चिन्तामणि सुख देय॥

पिय ढ़िग आवत सिया लखाई, उठकें चरणन शीस झुकाई।
धूल धूसरित तन दिख याको, बिखर केश,मुख कृश है ताको॥
तन लावण्या अतिहि गमाई, मानो लता गई मुरझाई।
याविध राघव सियहिं निहारी, नीठ नीठ मिल जनक दुलारी॥

दोहा–गिरी कान्ति राघव तनी, सिय मुख कलि विकसाय।
मनो कुमुदनी शशि किरण, पड़तह ही सरसाय॥
कामदेव रतिसम मिले, देह दोय इक जीव।
या मानो कोमल लता, तरु से लिपट अतीव॥

दोई भुजा गले में डारीं अब द्रुत ही ना जांय निकारीं।
लख सुर मुदत पुष्प बरसाये, सब मिल जय जयकार मँचाये॥
शील अडोल सिया ने पाला, काम विकार हिये से टाला।
कँह तक महिमा गावें याकी, नांही जगमँह समतर जाकी॥

दोहा–विनत भक्तियुत आ लखण, सिय चरणन दिय धोक।
प्रेम विवश सिय हो विकल, अश्रु सकी ना रोक॥
लगाय उरसे लछमणहिं, पुन तसु विरद उचार।
धन्य वत्स तेरा सुयश, छाया जगत मँझार।

महा मुनिन ने पूर्व उचारी, होवै लच्मण हरपद धारी।
हो वलभद्र भ्राता जाका, सर्व श्रेष्ठ वल होवै ताका॥
विरह अग्नि से मुझे निकामी, जगत विभूति हुई तुव दासी।
पुण्य प्रभाव चक्र कर धारो, पुन सब मिल जयकार उचारो॥

दोहा-भामण्डल आया ढिगै, सिय हिय लियो लगाय।
कहै सहोदर मम हृदय, इक सँग जन्म लहाय॥
घनो पुण्य मेरो हुतो, हितू मिलन पुन होय।
प्रेम विवश अश्रू वहे, रोक सके ना दोय॥

याविध पुन हनुमत हू आया, सिय चरणन प्रति शीस झुकाया।
सिय ने आशिष याको दीन्हा, भ्रातपणा मैं तोसे लीन्हा॥
जिम रक्षा मों भ्राता चाहै, तूं भी ताही भांति निवाहै।
यदि पिय सुध ना आके देतो, वलात मरण मोर जिय लेतो॥

दोहा-याविध सबहिन खगपती, आ सिय कों दिय धोक।
निज निज नाम उचारकें, आय ढिगै सब लोक॥
सियाराम दोनों मिले, अतिशय पुण्य प्रभाव।
"नायक" रमत स्वरूत नित, अविनाशी पद चाव॥

॥ इति द्वयविंशतिः परिच्छेदः समाप्तः॥

अथ श्री रामचन्द्र, लक्ष्मण की आज्ञा द्वारा, परिणी हुई कान्ताओं को नृपति विराधित सब स्थलों से लेकर आया ताका वर्णन

उमगत हिरदय मिले दम्पती, राघव चन्द्र, कुमुदनी सीय ।
सीतहिं आनन वारिज विकसत, राम दिवाकर उदय लखीय ॥
आगत स्वागत हिलमिल होकर, निज कर राघव सियहिं उठाय ।
बैठ पील पै प्रमुदित दम्पति, जिनकी शोभा कही न जाय ॥

दोहा—लखण विशल्या कर महित, गजारूढ़ शोभाय ।
सब खग मिल उत्सव रचत, महल मांहि ले आय ॥
वही महल जिहिं दशमुखहु, प्रमुदे अपनो मान ।
आज राम सिय लखण युत, प्रविशे अपनो जान ॥

वस्तु वही पै भावन मांही, उपजै विनसै थिर है नांही ।
निज स्वभाव ही थिर कहलाया, तीन काल मँह इक सम पाया ॥
ज्ञान दर्शयुत चित जिय जानो, अचित पांच जड़ पुद्गल मानो ।
वर्ण गंध रस फरस अचेतीं, पुद्गल मांही व्यापे एतीं ॥

दोहा—शान्तिनाथ का जिनभवन, तँह पर सब मिल आय ।
सहसथंभ सुवरण मयी, रत्नन भित्ति सुहाय ॥
त्रय प्रदक्षिणा देयकें, प्रविशे मन्दिर मांहि ।
निरख विम्ब रत्ननमयी, शान्ति छवी अन नांहि ॥

मनु तिहुँ भवनन शांति विराजी, अनुपम मूरत की छवि साजी।
दर्श करत ही राघव सीता, शीस नमाये धर हिय प्रीता॥
लखण विशल्या हू शिर नावें, हिय मँह फूले नांहि समावें।
पुन अब मिल यों थुती उचारी, खेंचो नैया पार हमारी॥

दोहा—काल अनादी से पड़ी, मम नैया मँझधार।
खेवटिया तुम हो प्रभो, खेय लगावो पार॥
विकट भवोदधि में भ्रमत, पायो नांहि सुघाट।
बूड़त उखरत पुन पुनहु, हुये बारावाट॥

ये भव सागर अपरम्पारा, तामें भँवर पड़े गति चारा।
क्रोध मान माया अरु लोभा, लहर मांहि मँच हिरदय चोभा॥
जामें मोह मगर दुख कारी, अरु मिथ्या वडवानल भारी।
तासें कबहुँ पार ना पाये, यातें प्रभु तुव शरणें आये॥

दोहा—पार लगावो हे प्रभो, सेवक अपनो जान।
बार बार शिर नाय पुन, पूजे श्री भगवान॥
हनूमान आदिक सकल, भामण्डल सुग्रीव।
दर्शें पूजें थुति करें, भावन सहित अतीव॥

बाहिर निकस भवन में आये, यथा योग्य सब आसन पाये।
तब रावण के सर्व कुटुम्बी, रुदने व्यापी महि नभ चुम्बी॥
हा रावण हा वीर हमारा, हमको छांड़ा कहां सिधारा।
कँह पै जाके सूरत देखें, कँह सन्तोपें, जँह सुख लेखें॥

दोहा–याविध विरद उचारके, सबही करें विलाप।
ताहि श्रवत पाथर द्रवे, उर फूटें लह ताप॥
राम लखण दोनों अनुज, बहुत बँधावें धीर।
तबहिं विभीषण यों कहा, होवो मती अधीर॥

दादा तात सुनों सब मेरे, है तुम से सम्बन्ध घनेरे।
प्रथम आयु तज इतपे आये, इतकी तज परलोक सिधाये॥
आयु नशे को राखन वारो, विना वदी को मारन हारो।
जाकों होनी होवे हानी, ताको त्यों हो कहि जिनवानी॥

दोहा–सांझ वादरे रंग या, विजुरी सम जीतव्य।
लिखी न मिटहै कोयकी, होनी जो भवितव्य॥
क्षणमँह पलटन देर नहिं, अरहट घड़ी समान।
रीतत सोई भरत पुन, रीत भरें परमान॥

करनी होय जास की जैसी, भरनी भरें नियम से तैसी।
यातें अब सब धीरज धारो, अपने हिय से शोक निवारो॥
आप सियाने सब कुछ जानो, बात हमारी हू अब मानो।
अपुन गेल में यम के ठाड़े, पछतावें परहित अति गाढ़े॥

दोहा–वीतराग का धर्म गह, करहु आत्म कल्यान।
जासे आगे भव नशे, पावो शिवपुर थान॥
नीठ नीठ सम्बोध पुन, निज महलन मँह आय।
पटरानी को शीघ्र ही, न्योतन दूत पठाय॥

पांछे स्वयं आप हू आया, दम्पति न्योतो विनत जताया।
मम गृह पवित्र करन द्रुत चालो, यों कह सारा नगर उछालो॥
राघव सीता चढ़े सवारी, लखण विशल्या चढ़ असवारी।
बैठे वाहन खगपति सारे, वन्दीजन ने विरद उचारे॥

दोहा—वादित्रन की ध्वनि हुई, गूंजी दश दिश मांहि।
नर्तें बहुविध सुभग तियँ, मनो सुरी उमगांयि॥
नट नटिनी भी विविध विध, कला दिखायँ अपार।
पदाघात रज नभ छयी, हुवा गाढ़ अँधियार॥

मनु नगरी ही नाच रही हो, हुइ मदमाती झूम रही हो।
मनो पुरन्दर पुरमँह आयो, देवन सेना सँग मँह लायो॥
पगन पांवड़े विछाय दीन्हें, अर्घ पाद्य विभीषण कीन्हें।
हुवा नगर मँह उत्सव भारी, गावें गीत नगर की नारी॥

दोहा—का शोभा वर्णन करें, ह्वै जो लंका मांहि।
नर नारिन के हृदय मँह, हर्ष समावें नांहि॥
आए विभीषण के महल, राम लखण सिय साथ।
भवन पद्मप्रभु मँह प्रविश, मुदत नमाये माथ॥

शान्ति भवन की रचना देखी, ताही विधै यहां पर लेखी।
सहसथंभ सुवरण के देखे, रुचिर रचो लख अति सुख लेखे॥
रत्नन भित्ति अनूपम सोहै, नर नारिन के मन को मोहै।
राम लखण मुद प्रविश तहां पै, बिंब विराजें विमल जहां पै॥

दोहा—पद्मप्रभू की छवि निरख, ह्वै प्रमुदित सिय राम।
मनो भविक हिय पद्मको, विकसन हित सुख धाम॥
हर्ष समाय न हिय विषै, यों पुलकित चित होय।
दर्शें पूजें थुति करें, वरणि सकै ना कोय॥

मनो अमिय ही सुख रस पीयो, विपुल हृदय मँह आनँद लीयो।
राम लखण सिय और विशल्या, कह प्रभु त्वहा बोध कैवल्या॥
वस्तु चराचर आप निहारे, नाशे संकट सर्व हमारे।
जग का आवागमन मिटावो, सेवक विनवें चित मँह लावो॥

दोहा—या विध मिल बहु थुति करी, सहस नृपन के संग।
इक स्वर से सब उच्चरें, हिय मँह धरें उमंग॥
निकसन चित ना चाह पै, आच्छादन भय लाय।
निकसे बैठे महल मँह, लखण सिया रघुराय॥

द्रुत उबटन की हुई तियारी, राम लखण अरु जनकदुलारी।
सुभग विशल्या हू बिठलाई, सुगंध द्रव्यें महक सुहाई।
रत्नन चौकिन पै बिठलाकें, कराय नहवन बाद्य बजाकें।
गायन मंगल गावें नारी, सुभग चीर पहिराये भारी॥

दोहा—पीताम्बर राघव पहिर, नीलाम्बर लखणाय।
चीर अमोलक सियहिं पुन, विशल्याहि पहिराय॥
पाहुनगति कीन्ही घनी, मुदत विभीषण राय।
दूध दधी घृत युत सकल, व्यञ्जन विविध जिमाय॥

नृपन पंकती बिठाय लीन्हें, सब विध व्यञ्जन जियाय दीन्हें।
पकवानन की राशि लगाई, मनहु कुलाचल पंकति छाई ॥
सलिल अमिय सम शरबत प्याये, भांति भांति के रस ले आये।
फल स्वादिष्टहु विविध परोसे, तृप्त यों कह लिलै न मोसे ॥

दोहा–भरीं बाबड़ीं तउ रहीं, व्यंजन बचे अपार।
मनु जग जीमनवार हो, यासें सजे पहार ॥
परमा पैं परमा करी, हुये तृप्त नर नारि।
कहें विभीषण तोर सम, भक्त न जगत मँझारि ॥

जाविध भक्ती तुम हिय लीन्ही, अबी न देखी अनुपम कीन्ही।
सर्वोत्तम पूरी सामग्री, इक से इक स्वादिष्टी सग्री ॥
सग्र कटक सादर जिमवाया, पुन अति मंगल नृत्य रचाया।
हिय मँह फूला नांहि समाये, राम लखण सिय मम गृह आये ॥

दोहा–इन प्रसाद ही बंधु अब, आये मम गृह मांहि।
हुई सफल घड़ि आज हिय, हर्ष समावै नांहि ॥
सेवा धर्म निबाहबो, कठिन जगत में काम।
जग परशंसै यश बढ़ै, तसु शोभै धन धाम ॥

मिल सब खग निष्कर्ष निकारे, राम लखण दुहु नाथ हमारे।
दुहुनन को अभिषेक रचावें, किय प्रस्ताव स्वीकृत पावें ॥
हुई त्रिखंडी राय कहायें, यातें हम अभिषेक रचायें।
श्रवत राम लक्ष्मण ने रोका, राजा भरत कहाय हमों का ॥

दोहा–नृप सनाथ भरतहिं पितू, सब थल तसु अधिकार।
हम तसु सेवक हैं दुहू, चहत न अबुध विचार॥
श्रवत सभी जय ऊचरें, धन्य लखण श्रीराम।
जगमँह मर्यादा पुरुष, करें कीर्ति का काम॥

पुन हर्षित हो सभी उचारे, हैं आज्ञा में भरत तिहारे।
स्वप्न मांहि ना आज्ञा टालें, आप "आन" रख निशिदिन चालें॥
यातें आप सबहि के स्वामी, वासुदेव बलभद्र नामी।
यों कह जय जयकार उचारी, गूंजा महि नभ मँह रव भारी॥

दोहा–बड़े न लोपें लाज कुल, लोपे नीच अधीर।
उदधि बहे मरजाद में, उमड़ि बहें नद नीर॥
राम लखण कुलवन्त दुहु, इनके श्रेष्ठ विचार।
तात "वचन" पालन निमित, तजा अपुन घर द्वार॥

स्वर्ण रत्न के कलश भराये, दुहुनन का अभिषेक रचाये।
हर्षित होय सभी घट ढारें, पुन सब मिल जयकार उचारें॥
नारायण बलभद्र उचारे, दुहू त्रिखंडी नाथ हमारे।
याविध सियहिं विशल्या को भी, किय अभिषेक तियें थीं जो भी॥

दोहा–ये दोनों महिषी हुईं, मुख्य सबहिं तिय मांहि।
जिन प्रसाद सब सुख मिलो, इन सम तिय, जगनांहि॥
सियहिं शील अनुपम जगत, विकट परीषह जीत।
थवी न देखी जगत मँह, सह लिय जो कछु बीत॥

सुभग विशल्या, महिमा भारी, "तियारत्न" की पदवी धारी।
वासुदेव कों जीवन दीनो, पूर्व तपहिं फल परगट कीनो॥
जाके न्हौन नीर से व्याधीं, टिकीं न क्षणभर तत्क्षण भागीं।
याविध महिमा सब ही गाये, हियमँह फूले नांहि समाये॥

दोहा—समय पाय लक्ष्मण हिये, पूर्व तियन सुध आय।
आए दिलासा देय कर, जिनसे सौगंध खाय॥
यातें उनें बुलायँ द्रुत, याविध कीन्ह विचार।
नृपति विराधित योग्य जनु, यातें ताहि उचार॥

संबंधिन से कहो सँदेशा, उच्चरें मम प्रभु, सुनो महेशा।
निज पुत्रिन कों वेग पठावो, आज्ञा पाती जाय सुनावो॥
आयस पाय विराधित चाला, संबंधिन ढिग आय उताला।
श्रवत सभी हिय हर्षित होकें, पठाई पुत्रीं, विभव सँजोकें॥

दोहा—राम लखण की सब तियां, वैभव युत, इत आय।
सब ही प्रमुदें हिय विषें, सादर हमें बुलाय॥
आज शपथ पूरी हुई, बुझी लगी थी आस।
याविध मुलकत सब तियां, आईं पिय के पास॥

राम लखण का वैभव देखीं, अति ही सुख सब हिय मँह लेखीं।
करतीं नूतन नित ही क्रीड़ा, पिय सँग रमें करें बहु लीला॥
रा॰ लखण पट वर्ष बिताये, सुख दिन बीतत समझ न पाये।
कहां बीत गए ये दिन सारे, निशिदिन भोगत सुःख अपारे॥

जग मँह पुण्य प्रधान जनु, सर्वोत्तम ये पांय।
त्रिखण्ड भूपति आयकें, चरणन शीस झुकांय॥
करें केलि नित प्रति दुहू, है नहिं ताका पार।
"नायक" रमें स्वरूप नित, लह शास्वत सुख सार।

॥ अथ त्रयविंशति: परिच्छेद: समाप्त: ॥

अथ कुम्भकर्ण इन्द्रजीत और मेघनाद मुनियों को केवल ज्ञान पूर्वक निर्वाण गमन महामुनी मय का माहात्म्य वर्णन।

कुम्भकर्ण श्री इन्द्रजीत अरु, मेघनाद तप कीन्हा घोर;
रिद्धीं सिद्धीं बहुतक प्रगटीं, पै ना दृष्टी तिनकी ओर॥
ग्रीष्म शीत या पावस ऋतु मँह, सहें परीषह श्री मुनिराय।
बेला तेला कीन्हें अनशन, क्षीण हुई श्री मुनि की काय॥

दोहा-उपसर्गन को जीतते, रहें आत्म लवलीन।
कर्म क्षपण का भाव सज, क्षायिक श्रेणी कीन॥
सप्त प्रकृति पहिले नशीं, कीन्ह आयु त्रय नाश।
नवम मांहि छत्तिस छयीं, दशमें लोभ विनाश॥

बारम थानक सोल विदारीं, याविध त्रेसठ प्रकृतीं टारीं।
तेरम केवलज्ञान उपाया, द्रव्यन ज्ञान चराचर पाया ॥
गंधकुटी रच कुवेर दीन्हें, सुधर्म ध्वनी श्रवण सब कीन्हें।
धर्म पियूष पियत सुखयाये, भव्य जीव शिव मारग पाये ॥

दोहा–अभव्य कबहुँ न श्रद्धहै, स्वात्म रूप का आय।
मूंग घोरडू ना सिझै, कोटक रचो उपाय ॥
होंय भव्य त्रय भांति के, निकट दूर दूरान ।
निकट दूर तो सीझवें, पै न सीझ तृतियान ॥

शीलवती जिम विधवा नारी, ह्वै पति वियोग गर्भ न धारी।
दूरान्दूर भव्य इमि जानो, निमितनलह,नस्वहितपहिचानो॥
वाल तिया सम दूर कहावै, समय पाय पुन शिवपुर जावै।
निकट भव्य जनु व्याही नारी, पती समागम गर्भहिं धारी ॥

दोहा–यातें शिक्षा आदरो, स्वात्म स्वरूप लखाव।
सर्व विभाव नशायकें, अविनाशी पद पाव ॥
याविध हुइ ध्वनि केवली, गह भावन अनुसार।
बहुजन संयम ग्रहण किय, बहुतक श्रद्धा धार ॥

शेष आयु तक जिय सम्बोधे, नशे अघाती आतम शोधे।
जगका आवागमन मिटाये, अविनाशी पद तीनों पाये ॥
धन्य धन्य ये आत्म विहारी, जिननें निज पर्याय सुधारी।
आप तरे औरन कों तारे, स्वात्म अनन्त अचल गुणधारे ॥

दोहा—ससुर रावणहिं मय मुनी, उग्र उग्र तप कीन ।
रत्नत्रय भूषण सजत, चारण ऋद्धी लीन ॥
वंद्यें क्षेत्र अढ़ाइ जिन, प्रतिमा अतिशयवन्त ।
जिनकल्पी अनुपम विमल, आत्म स्वरूप रमन्त ॥

हुइ प्रभावना इनकी भारी, निमित मिलो हुइ निर्विप नारी ।
तास कथानक याविध जानो, नोदन विप्र ध्यानपुर मानो ॥
हुती तिया ताकी अभि नामा, ह्वै निर्धन द्विज आ वन धामा ।
तिया संग पै पास न कौड़ी, यातें तिय को वन में छोड़ी ॥

दोहा—पै द्विजनी के पुण्य तें, कररुह नामक भूप ।
आय विपन वन केलि हित, ताने देखा रूप ॥
देख रूप मोहित हुआ, निज गृह मँह ले आय ।
केलि करत निशि के समय, लागो पग शिर जाय ॥

नृपति कौतुकी कहै सभा में, बताव हमको निर्णय यामें ।
मोरे शिर में जो पग मारै, क्या हो पग? निष्कर्ष उचारै ॥
हुते सभा में पण्डित भारी, हनों ताहि यों सभी उचारी ।
अब नृप की मुद्रा रिसयाई, उल्टी तिय पग हनन सुनाई ॥

दोहा—हेमांकित इक चतुर द्विज, वह नृप छवि लख लीन ।
अब उत्तर नृप रुष्ट हुव, तब विचार यों कीन ॥
अवश्य यामें रहस कुछ, पग हन कौन अजान ।
समझ गयो द्विज चित्त मँह, पग लागो निशि जान ॥

यातें वेग नृपति को बोला, निर्णय दैन आप मुख खोला।
पग पूजो भूषण पहिरावो, मोर समझ यों निर्णय आवो ॥
श्रवत नृपति द्रुत हर्षित होके, कैसे जानी कह द्विज मोके।
विहँगत द्विज ने रहस बताया, मैंने यों अनुमान लगाया ॥

दोहा—हुती चाह ज्यों हिय विषें, त्यों नृप निर्णय पाय।
धनी द्रव्य द्विज को दई, उच्चासन बैठाय ॥
पुर मँह इक विधवा द्विजी, हुता तास इक बाल।
देख मूर्ख निज बाल को, दी शिक्षा तत्काल ॥

रे सुत धिकधिक बुद्धी तेरी, तेंने कूख लजाई मेरी।
तोर तात धनु विद्या धारी, लह आदर भूपति से भारी ॥
जिम हेमांकित या सम पाया, तूंने धन अरु मान गमाया।
यों कह अति ही रुदन मँचाई, श्रवत पुत्र चित करुणा छाई ॥

दोहा—कहै माय ना हो दुखी, मैं अब पढ़ने जांव।
होवँ निपुण तब आउँगो, तोकों मुख दिखलांव ॥
यों कह चाला द्रुत तभी, नगर व्याघ्रपुर आय।
धनुर्वेद विद्या गही, धनु वेदी ढिग जाय ॥

बीतो समय निपुणता पाई, यापुर नृप की सुता लखाई।
रूप सुरी सम तानें धारो, लखत विकल हो हरन विचारो ॥
निज बल तें ताको हर लीन्ही, तास भ्रात रणभेरी कीन्ही।
या इकले ने सबकों जीते, भागे सब ही हां भय भीते ॥

दोहा—गर्वित याने धनुष बल, कररुह नृप को जीत।
महा प्रतापी ये हुवो, सब से हुवा अजीत॥
धन सम्पति बाढ़ी विपुल, माय ढिगैं ये आय।
देख माय सुत बुध विभव, हिय से लियो लगाय॥

कररुह रानी मृत्यु लहाई, तास शोक वश नृप मितु पाई।
नृप पद धारा साला याका, देख सके ना अरि सुख ताका॥
यातें द्रुत ही कीन्ह चढ़ाई, यामें ना इतनी प्रबलाई।
सुरँग मांहि से तिय युत चालो, विपन मांहि ये आय उतालो॥

दोहा—दैवयोग तिय को डसा, मह भुजंग विषवान।
लखत दुखी हियमँह हुवा, असहाई निज जान॥
कछु उपाय ना सूझवै, किम तिय लेवँ बचाय।
तहां विपन मँह मुनि लखे, ठाड़े मय ऋषिराय॥

महा दुखी ये चितमँह होके, डारी चरणन विलपत रोके।
करैं थुती मम विपति निवारो, नशा सभी धन धाम हमारो॥
जान बचाय तिया युत आया, ता सुख भी ना देखन पाया।
डसा काल अब बचाव याको, हूं असहाई गहुँ बल काको॥

दोहा—महामुनी मय अचल तन, कायोत्सर्ग लगाय।
निस्पृह ठाड़े वन विषें, सर्वोषधि ऋधि पाय॥
मुनि की ऋद्धि प्रभाव तें, द्रुत वह निर्विष होय।
मनो मंत्र अनुपम विशद, जपा मनुज है कोय॥

उठी सोवती ये ना जानें, काह पड़ी मुनि चरणान थानें।
लख मुनि पग तल. अचरज मानी, निर्णय करन पिया से ठानी॥
मुनि पग तल क्यों मोकें डारो, मेंटो संशय नाथ हमारो।
श्रवत कुँवर. मुनि को शिरनाये, हिय मँह फूला नांहि समाये॥

दोहा–पुन तियको कह अहि कथन, तोकों अहि डस लीन।
मैं निज सुध बुध खोय द्रुत. मुनि चरणन धर दीन॥
श्री मुनि चरण प्रभाव तें. तूं निर्विष हो जाय।
श्रवत यह अचरज लई, कहै धन्य मुनिराय॥

प्रमुदत दम्पति अति थुति कीन्हें, धन्य गुरो तुव दर्शन लीन्हें।
आप समान नांहि उपकारी. डूबत नैया पार उतारी॥
निष्कारण जग बन्धु कहाये, सबको हित का मार्ग बताये।
याविध विविध भांति थुति कीन्हें, विनयदत्त साहू लख लीन्हें॥

दोहा–विनयदत्त अचरज सहित, पूंछा हमें बताय।
विनत विपुल थुति ऊचरत, काविध सुःख लहाय॥
को हो कँह से आगमन, याविध प्रश्न उचार।
श्रव याने सब आपना, कहा वृत्त विस्तार॥

श्रव योभी निज पुर मँह आके, कहा वृत्त द्विज नृप से जाके।
तुमरे साले पै यों बीती, मुनी प्रभाव परीषह जीती॥
श्रवत नृपति द्रुति हर्षित होके, आया मुनि ढ़िग द्रव्य सँजोके।
बहु विध पूजो पुन थुति कीन्हें, साले को हिय लगाय लीन्हें॥

दोहा—जब मुनि की मुद्रा खुली, प्रश्न नृपति ने कीन।
कहो प्रभो भव पूर्व का, कहा पुण्य हम लीन॥
जाबल ऋधि सिधि ऊपजी, सभी सुःख हम पाय।
हे गुरु तसु वर्णन करो, मुझे श्रवन की चाय॥

अब, अमृत वच मुनी उचारे, अबो भवहिं जो हुये तिहारे।
शोभापुर नगरी का राजा, अमल नाम का सब सुख साजा॥
भद्राचारज वन मँह आये, चौमासे का योग लगाये।
नृपति नित्य दर्शन को आवे, दर्श पूज कर नित ही जावे॥

दोहा—एक दिवस कोउ कोढ़नी, मुनि दर्शन हित आय।
ताहि समय नृप हू इतै, आकर शीस नमाय॥
दुर्गन्धी चहुँ उर छयी, भागा नृप पुर मांहि।
सहन न ममरथ तास को, क्षण भर ठहरा नांहि॥

आचारज से कोढ़िन बोली, व्रत की महिमा होत अमोली।
यातें महिमा मोहि बताओ, मेरी नौका पार लगावो॥
अब आचारज याहि उचारा, व्रत की महिमा अपरम्पारा।
पञ्च पाप सब विध से त्यागै, ना हो शक्ति अणु मँह लागै॥

दोहा—अंत समाधी धारकें, सुरपद के सुख पाय।
यदि रत्नत्रय आदरें, तदि शिवसुख उपजाय॥
अब, श्रद्धा लहि कोढ़नी, शक्ति सारुँ व्रत लेय।
अन्त समाधी धारकें, देवी के सुख सेय॥

चयी सुरी हुइ कन्या शीला, जगमँह पाप पुण्य की लीला।
शीला को तूं हरकर लाया, परिणी तास संग सुख पाया॥
अमल नृपति दूजे दिन आके, गुरु से पूंछा निज शिर नाके।
क्यों जिय दुर्गंधित तन पाये, दूजे को जो सही न जाये॥

दोहा—श्री गुरु ने नृप से कहा, सुनहु मर्म नरराय।
पाप पुण्य का ठाठ जनु, दुख सुख जीव लहाय॥
यदि संयम को आदरै, कबहुँ दुःख ना सेय।
मुनि वृत यदि ना धर सकै, तदि श्रावक वृत लेय॥

याविध महिमा वृत की गाई, नृपको वृतकी अति रुचि आई।
निज सुत को सब वैभव दीन्हा, आप अणुवृत को गह लीन्हा॥
समाधि धरकें सुरसुख पाया, तँह तें चय तूं द्विज गृह जाया।
पुण्योदय सुख वैभव लायो, जियजसकिय तस फलको पायो॥

दोहा—अब तुव मां के भव कहों, श्रवो नृपति चित लाय।
कोउ यांचक इक पुर विषैं, पुरवासिन ढिग जाय॥
घनी यांचना तँह करी, पै न पसीजा कोय।
अतिहि बुभुक्षा आर्त वश, उचर रुष्ट अति होय॥

मह हत्यारा गांव दिखावै, दहै अग्नि से वचन न पावै।
यों कटु वच कह यँह ते चाला, फुरा वचन याका तत्काला॥
लागी अग्नि तभी पुर मांही, करैं प्रयत्न बुझै वह नांही।
तबही समझें वही लगाई, मंत्र शक्ति तें अति धँधकाई॥

दोहा—रिपधर सबही पुरजनन, पकड़ यांचकहिं लाय।
दहत अग्नि मँह गेर दिय, कटु वच का फल पाय॥
मरके तिय पर्याय लिय, पुनहु कीन्ह अति पाप।
यासें नर्क सिधायकें, सहा घोर सन्ताप॥

निकस नर्क तें हुइ तुयि माता, अब भव सुन तुयि तियका भ्राता।
पूरब मांहि पशुन को लादं, ताफल अब फिर पांव पियादे॥
पूर्व जन्म में पशुहिं सताये, ताका फल या भव में पाये।
लोक मांहि शुभ अशुभहिं माया, भोगे अपना आप कमाया॥

दोहा—याविध सारे कुटुम भव, श्री मय मुनि उचरेय।
चारण ऋद्धि प्रभाव पुन, नभ मगतें गवनेय॥
जगमँह महिमा पुण्य की, शिव मँह महिमा आत्म।
"नायक" रमत स्वरूप नित, शीघ्र होत परमात्म॥

॥ इति त्रयविंशतिः परिच्छेदः समाप्तः॥

श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण से नारदजी का मिलाप वर्णन

—वीर छंद—

पति सुत वियोग लह कौशल्या, ह्वै उदास चित शोक लहाय।
सप्त खंड से दिशि अवलोकै, मोकों आवत सुत दिख जाय॥
वायस ढ़िग लख ताहि उचारै, सुत सुध ला तो खीर खिलांव।
विलपी किलपी रुदनी भारी, चिन्तै सुत सुध कब मैं पांव॥

दोहा—ऋतु पावस मनु उमड़ रहि, नयनन बरसत मेह।
भयो शुष्क याको हियो, नीरस हुइ सब देह॥
कहै पिया तो वन गये, धरती, सुत लख धीर।
वह हू तज बन को गयो, कौन हरै मो पीर॥

तबहिं गगन से नारद आये, सहसरश्मि मनु अवधे धाये।
छवी सुरम्य लियें कर वीणा, कृश कौशल्यहिं नांही चीन्हा॥
आये ढिग मँह तब पहिचानी, लख कौशिल्या की अगवानी।
कहै आप बहु दिन मँह आये, लिय सिंहासन पै बैठाये॥

दोहा—कहि नारद याको तुरत, हुई क्षीण तुव काय।
कौन दुखायो इमि हृदय, जासे शोक लहाय॥
दशरथ की प्रिय पात्र तुम, राम सारिसा पूत।
तापै हू यों दुख लहै, का दुख लही अचूक॥

तो दुख की दशरथ सुन पैहैं, जोन सताई अति दुख देहैं।
यातें वेग बतावो मोकों, मेटूं दुःख, कहत मैं तोकों ॥
यों अब राघवमाय उचारी, बहु दिन मँह हुइ कृपा तिहारी।
हुवा वृत्त मँह, ताहि न जानो, कहे वयन पूरववत मानो ॥

दोहा-पूर्व नेह बहुतक हुतो, अब तुम हुये कठोर।
या गृह की सुध हू तजी, सबसे नेहा टोर ॥
कहा कहूं काविध कहूं, मोपै कह्यो न जाय।
यों कह विलपी रुदन किय, नयनन स्रोत बहाय ॥

हिये द्रवी हो नारद बोला, ना आया तसु रहस्य खोला।
अबो माय निज वृत्त सुनावूं, तेविस वर्ष बाद इत आवूं ॥
खंडधातुकी जाके मैंने, प्रभु जन्मोत्सव लख निज नैने।
किय अति उत्सव हरि ने आके, अभिषेके प्रभु, गिरि पै जाके ॥

दोहा-पाण्डुक शिला सुहावनी, तापै प्रभु बैठाय।
सहसों कलशा लेयकें, प्रभु का न्हौन रचाय ॥
मनो शैल पै अमिय की, वर्षा होत सुरम्य।
जय जय ध्वनि सुर उच्चरें, दृश्य दिखे अनुपम्य ॥

कहुँ प्रभु का तप उत्सव देखा, लख कल्याणक हिय सुख लेखा।
कहुं गर्भ कहुँ केवल ज्ञाना, कहुँ पै प्रभु का हो निरवाना ॥
पुष्करार्ध भी कबहुँक जाके, याविध उत्सव देख वहां के।
प्रभु महिमा, को कथकर गाये, जिहि लख नैन सफलता पाये ॥

दोहा—नैन कर्ण मुख अँग सकल, धन्य ताहि के जान ।
दर्शै पूजै भाव से, नित प्रति श्री भगवान ॥
याविध तेविस वर्ष में, वँह पै किये वितीत ।
भरतक्षेत्र की उमँग उठ, तुव ढिग अय अनचीत ॥

भरतक्षेत्र में जब जब आवूं, तब तब पहिले तुव ढ़िग धावूं।
माय समान तुझे मैं मानों, पुत्र समान मुझे तुम जानों ॥
सुनाव काहे यों दुखियाई, कौन बात की कमी लखाई ।
ताको द्रुत ही मोसें बोलो, लहा दुःख सो रहस्य खोलो ॥

दोहा—अब कौशिल्या धीर धर, सबविध वृत्त बताय ।
भामण्डल को चित्रपट, सिय का तुम्ही दिखाय ॥
तालख वह विह्वल हुवो, जनक हरन पुन होय ।
हुवा मिलन खगपति जनक, निज हिय की कहि दोय ॥

चढ़ै धनुष निष्कर्ष निकारा, हुवा स्वयंवर मिथुल मँझारा ।
तहां राम ने धनुष चढ़ाया, सिय सम्बन्ध राम ने पाया ॥
सिय ना लह, खगसुत रिसयायो, जबरन लैन गगन से धायो ।
पूर्व जन्म की पुरी निहारी, जाति स्मरण हुआ हिय भारी ॥

दोहा—निज पूरव सम्बन्ध लख, या भव सिय सम्बन्ध ।
भ्रात बहिन मिल ऊपजे, कर्म कीन्ह फरफन्द ॥
अबत चन्द्रगति खगप द्रुत, सुत को वैभव दीन्ह ।
आप गुरू ढ़िग आय कर, द्रुत संयम गह लीन्ह ॥

भामण्डल की सुध सब पाई, प्रमुदित मिले जनक सिय भाई।
पिय दशरथ चित विराग छाया, राजा राम होय ठहराया।
सुन केकइ वरदानहिं यांचो, देव राज्य भरतहिं यों जांचो।
भरत चित्त हो पितु सँग जानें, यातें सबही लगे मनानें॥

दोहा–राम लखण दुइ वीरवर, पितु "वच" रक्षा कीन।
गये दुहू वन सिय सहित, पितु वैभव तज दीन॥
बहुतक समय वितीत पुन, सिया हरी लंकेश।
कीन्ह युद्ध लक्ष्मण घना, समझाया चक्रेश॥

पै वाने निज हठ ना छांरी, और लखण को शक्ती मारी।
तास निकासन हित खग आये, लेय विशल्या वेग सिधाये॥
पुन क्या हुवा कहा उत वीती, निकसी शक्ति परीषह जीती।
मोर राम पै कैसी वीते, सिया मिली या नांहि अरी तें॥

दोहा–याविध कह मूर्छित हुई, लगा वज्र सम घाव।
नारद अब विह्वल हुआ, मह दुख हिये सताव॥
डारी वीणा भूमि मँह, येहू हुवा अचेत।
हुवा द्रवी हिय मँह विपुल, दीर्घ उसासें लेत॥

नीठ नीठ चेतनता पाई, उठाय वीणा हिय रिसछाई।
कहे माय से मत घबरावो, मोर होत तुम दुख ना लावो॥
वेग जाय सबकी सुध लावूं, कैसा रावण मजा चखावूं।
न्यायी, तउ परतिय हर लीन्हीं, विवेक बुद्धी गमाय दीन्हीं॥

दोहा-यों कह चाला तुरत ही, पहुँचा लंका मांहि।
अब चिन्तै कस सुध मिलै, रावण इत कै नांहि॥
है रावण का राज्य इत, पृच्छ कुशल यदि राम।
तदि बाधा मुहि ऊपजै, अरि पृच्छन क्या काम॥

रावण का अरि राम कहाया, राम मित्र ये पृच्छन आया।
यातें सब मिल मांकों मारें, यों नारद निष्कर्ष निकारें॥
अंगद केलि करत सर तीरा, ताके किंकर लख तसु नीरा।
उनसे नारद वेग उचारी, रावण कुशल कहो सुखकारी॥

दोहा-याविध किंकर श्रवत ही, हुये रुष्ट तत्काल।
जिम रावण तिम तापसी, शिर मड़राया काल॥
जबहिं कुशल ये पृच्छवै, प्रीति सारुँ की होय।
जांन व्यसन जो सेयवै, निज सम मिन्तर जोय॥

याविध चिन्त्य स्वामि ढ़िग लाये, कहा वृत्त, ये रावण चाये।
यातें कुशल प्रश्न या कीनो, विहँसत अंगद उत्तर दीनो॥
पद्मनाभि ढ़िग द्रुत ले चालो, अब किंकर ले चले उतालो।
नारद हिय मँह चिन्ता छाई, पद्मनाभि को, खग नरराई॥

दोहा-मनही मनहिं विसूरवै, मुखसे निकसै हाय।
चिन्तै कोउ सुर आयकें, मेरी करो सहाय॥
सुभट कहां ले जात अब, का गति मेरी होय।
यों चिन्त्यत हिय शून्य ह्वै, दिख न सहाई कोय॥

प्रविश विभीषण नृप के गेहा, लखत राम प्रमुदे धर नेहा।
सुभटन से द्रुत छुड़ाय दीन्हें, सिंहासन पै बिठाय लीन्हें ॥
पुलकित राघव शीस झुकाया, नारद से बहु आशिष पाया।
प्रमुदित राघव याविध बोलो, आगम रहस ऋषीवर खोलो ॥

दोहा–दीन्ह दर्श बहु दिनन मँह, हिय से दिये विसार।
तुम सम हितु ना जगत में, करे मोर उद्धार ॥
यदपि आप धर्मात्मा, करत धर्म उद्योत।
तदपि दर्श वंचन करत, हमें चैन ना होत ॥

अब नारद हिय चिन्तित होके, कहैं हाय तुव माता शोके।
तुम इत पै अतिसुख अवधारे, निज मैया की सुधहु विसारे ॥
वे सब विलपें रुदनें भारी, मनु पावस ऋतु उमड़ अपारी।
नयन नीर बरसै घनघोरा, यों लख हो अधीर मनमोरा ॥

दोहा–शुष्क मांस नस नस दिखें, बैठी तजें अहार।
प्रान निकसनें की घड़ी, चलरहि मांझ सकार ॥
उरथल नितही कूटवें, तुव वियोग को पाय।
सबसुख माय विसार जिम, जल बिन झप अकुलाय ॥

जग में दुर्लभ मां कहलाई, दुस्सह दुख जन्मावत पाई।
यातें माय एक ही पावें, तियां अनेक पुण्य मिलवावें ॥
रजसम्पति हू दुर्लभ नांही, लहै पुण्य बल, जगके मांही।
तुम मां जाईं दोनों वीरा, पुन वे रुदनें होय अधीरा ॥

दोहा–धिक धिक छि: तुम शूरपण, लहा जगत विख्यात ।
तिन माता नित झूरवें, अरु रुदनें दिन रात ॥
अव नारद के हित वयन, दूर – दर्शिता पूर ।
न्यायरु नीति प्रदर्शकहु, सत्य यथावत भूर ॥

राम लखण दुहुनन उर मांही, लगा वज्र मम सुध रहि नांहि ।
ह्वै अचेत शस्त्रन कों डारे, गिरे भूमि मँह पांव पसारे ॥
वड़न वड़न कों मोह सतावै, महिमा मोह कही ना जावै ।
सव मिल किय शीतल उपचारा, ह्वै सचेत किय रुदन अपारा ॥

दोहा–समझाये धीरज धरे, नारद की थुति कीन ।
हितू न जग में आप सम, विसरे को सुध दीन ॥
हम कुपूत सम काम किय, धारो हिय अविचार ।
ऐते दिन विरथा गये, दीन्हें माय विसार ॥

मात तात का वहु उपकारा, जिननें दीन्हा जन्म हमारा ।
उऋण न होवें या भव मांही, कृतज्ञ होवें चूकें नांही ॥
तुरत विभीषण को वुलवाया, गमन करन मनतव्य सुनाया ।
माय हमारीं शोकें भारी, यातें गवनन करहु तियारी ॥

दोहा–श्रवत विभीषण ने विनत, कहा सुनहु जग नाथ ।
आज्ञा सारू होयगो, यों कह नायो माथ ॥
प्रथम दूत भेजें उतै, कहै सँदेशो जाय ।
षोडश दिवस विताय पुन, प्रस्थानो हे राय ॥

याविध विनय करी लंकेशा, टार सके ना दुहु अवधेशा।
प्रथम विभीषण दूत भिजाया, जाके सब सन्देश सुनाया ॥
लखत विशल्या शक्ती भागी, तबही तुरत चेतना जागी।
रावण को लच्मण ने मारा, चक्र आपने कर महँ धारा ॥

दोहा-सिय मिलाप अभिषेक हो, यों षट वर्ष विताय।
का सुख भोगत का कहैं, हुये त्रिखंडी राय ॥
पहुँचे नारद सुध दई, शोके दोई भ्रात।
गवनन को तत्पर हुये, हिये न शोक समात ॥

तबहि विभीषण आदिक राया, कीन्ही विनय बहुत समझाया।
षोडश दिवस अवधि के बीते, गमन होय या भांति कही ते ॥
नीठ नीठ कर स्वीकृत दीन्हें, अवत अवधि वासिन सुख लीन्हें।
अति ही हियमँह प्रमुदीं माता, पुन पुन गिन,कब दिन वह आता॥

दोहा-तभी विभीषण ने विपुल, भेजी रत्नन राश।
भेजे चतुर सिलावटहु, रचना रची विराट ॥
बारह योजन विस्तरी, नव योजन चौड़ाय।
पंक्ति बद्ध भवनन रुचिर, रत्नन से निरमाय ॥

रत्नन महल सुरम्य बनाये, जुदे जुदे सबके निरमाये।
षोडश सहस लखण की नारी, आठ सहस राघव की सारी ॥
त्रय ऋतुनन के भवन गढ़ाये, काहू भांति त्रुटी ना लाये।
मनो स्वर्ग का धाम कहावें, हर बलभद्र बसन को आवें ॥

दोहा—सहसथंभ मंडप रचे, रत्नन जड़े किवार ।
पंक्ति बद्ध जिन भवन रच, फहरें ध्वजा अपार ॥
रत्नमयी प्रतिमा तहां, मुद्रा शान्ति अनूप ।
लखत हरत दुरतहिं सघन, प्रगटै आतम स्वरूप ॥

पुरमँह रत्न राशि बरसाये, सबके गृह भण्डार भराये ।
मनु रतन के लगे पहारा, अरधो पड़ो कमी ना धारा ॥
फेर घोषणा पुर मँह दीन्ही, लेवो वांछा हिय मँह लीन्ही ।
दान किमिच्छक कीन्हा भारी, सुखी हुये सब ही नर नारी ॥

दोहा राम लखण के हिय विषें, मां प्रति बाढ़ी प्रीति ।
क्षण क्षण वर्षन सम लगें, कीन्ही अवधि वितीत ॥
निज स्वरूप से जीत मन, विषय कषायन चोट ।
"नायक" रचै स्वरूप नित, चिद्विलास गढ़ कोट ॥

॥ अथ चतुर्विंशतितमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ श्री रामचन्द्र लक्ष्मण का अयोध्या में आगमन वर्णन ।

वीर छन्द—

गवनन वेला लख सब खगपति, उमग उमग द्रुत भये तियार ।
मनो अमरपुर हरि ही गवनत, सेना सुर की साथ अपार ॥
गय हय आदि वाहनन उद्यत, सज धज बहुतक चढ़े विमान ।
राघव लक्ष्मण पुष्पक पे चढ़, जाकी शोभा स्वर्ग समान ॥

दोहा–प्रमुदत राघव लखण युत, सिया विशल्या आदि ।
प्रमुदीं नारीं हिय विषें, लखा गमन का साज ॥
सजे विभीषण वीरवर, हनूमान सुग्रीव ।
संग विराधित सबहिं के, उमगे हृदय अतीव ॥

दल बल का तो पार न दीसे, मनु समुद्र ही चला यहीं से ।
नभ मारग से सबही चाले, लखा उदधि निज लहर उछाले ॥
राम लखण प्रति विनय दिखावे, प्रमुदत श्रद्धांजली चढ़ावे ।
पद्मनाभि लक्ष्मीपति आये, हम अपना सौभाग्य मनाये ॥

दोहा–लखा सुमेर उतंग अति, सर्व श्रेष्ठ गिरिराज ।
जँह पै प्रभु अभिषेक शुभ, करें इन्द्र सुरराज ॥
पुन दण्डकवन को लखा, उचरे तबही राम ।
यहां मुनिन को दान दिय, मिल जटायु इहि ठाम ॥

सियां हरी रावण बलधारी, कर कुकृत्य अपयशता धारी।
आर्त रौद्र वश पाप कमाया, जीवन विरथा स्वयं गमाया॥
वंशस्थलगिरि लखकर बोले, मुनि उपसर्ग रहस को खोले।
कीन्ह असुर पूरव का वैरी, केवल उपजा लगी न देरी॥

दोहा—"वचन" दीन्ह गरुणेन्द्र इत, हर्षित हो तत्काल।
चिन्त्या रणमँह तास को, आ सुर कीन्ह निहाल॥
सिंह गरुण वाहिनि मिली, पाये शस्त्र अतीव।
ता प्रसाद जीवित बचे, भामण्डल सुग्रीव॥

बालखिल्य का नगर बताया, वज्रकर्ण का गढ़ दिखलाया।
सिंहोदर की कथा सुनाई, कपिल गृहै सिय प्यास बुझाई॥
रामपुरी का वर्णन कीन्हा, पुण्योदय तें सुररच दीन्हा।
याविध जिह्वा रथ पै चाले, नगर अयोध्या आय उताले॥

दोहा—स्वर्गपुरी सम दिपत लख, सिय ने अचरज पाय।
कीन्ह प्रश्न राघव प्रती, कौन पुरी दिखलाय॥
अद्भुत रचना दिख रही, मनो इन्द्र का थान।
रत्नन की छिटकी द्युती, जगमग जगमग जान॥

भवन पंकती बद्ध दिखावै, रत्नन रचना रुचिर सुहावै।
रत्नहि रत्न सिवाय न दीसै, अरधो राशी निसर महीसै॥
महान धनी यहां के वासी, दिखत जहां सबही इकरासी।
हीन अधिक ना कोय दिखावै, यों सिय पियसे प्रश्न उठावै॥

दोहा–अलंकार गर्भित वयन, सिय ने मंजु उचार।
अब राघव विहँसत कही, ये ससुराल तिहार।'
राम लखण भ्राता भरत, चवथ शत्रुहन जान।
अवधिपुरी सोहे सुखद, जनु तिनको यह थान॥

खगप विभीषण भक्त तिहारा, षोडश दिनमँह नगर सँवारा।
चतुर सिलावट मिल निरमाये, भवन पंकती बद्ध बनाये॥
रत्नन राशि सुरम्य सजाई, शोभा सुरपुर सम सुखदाई।
याविध राघव गिरा उचारी, श्रवत सिया हरषी हिय भारी॥

दोहा–लखा भरत नृप आगमन, राम लखण का होय।
किय सत्कार पुरस्करहु, याविध करे न कोय॥
सकुच पुलक हिय मुदित अति, पुरजन युत बढ़ आय।
विपुल सुयश अतिशय धवल, दई ध्वजा फहराय॥

राम लखण जब ढिगमँह आये, भरत भ्रात को हिये लगाये।
भरतहु चरण परस सुख लीना, भ्रातृ प्रेम इन सदृश कहींना॥
पुष्पक मांही भरत बिठारे, पुरवासी जयकार उचारे।
धन्य राम लक्ष्मण से भ्राता, 'वचन' निवाहोजिननिजताता॥

दोहा–जनक नन्दनी धन्य धन, अतुल प्रेम दर्शाय।
पिय सँग हुइ वनवासिनी, कष्ट असह्य लहाय॥
तउ न रंच हिय मँह चिगी, रच शील भण्डार।
यासम, ना अब ना लखी, सुरहु प्रशंसाकार॥

धन्य विशल्या शुभ अवतारी, धन मां पितु जाई सुखकारी।
जाहि लखत ही शक्ती भागी, लखण चेतना क्षण में जागी॥
यों उचरत सबही पुरवासी, आज सनाथन नगरी भासी।
पद्मनाभि लच्मीपति आये, बलभद्र हर पदवी पाये॥

दोहा–वादित्रन की ध्वनि हुई, छयी गगन के मांहि।
भेरी संख नगाड़ के, शब्द समावे नांहि॥
कर्ण वधिरता को लये, नर्तिन नृत्य अपार।
बन्दी विरद बखान पुन, जय जयकार उचार॥

अर्ध पाद दिय पग पग मांही, चलें पांवड़न भू मँह नांही।
लख जनता यह सिय का भाई, यो हनुमत जो धूम मँचाई॥
यह विराधित लच्मण साथी, यो सुग्रीव सिया सुध ला दी।
याविध कहकर प्रमुदें भारी, सुखी हुये सबही नर नारी॥

दोहा–जनता भीड़ अपरिमिती, मँचो शब्द घनघोर।
सप्तखण्ड लौ बैठकें, निरखें इनकी ओर॥
मनुनगरी ही नृत्य किय, उत्सव रचें विराट।
मार्ग रोध सब ही खड़े, हो गईं खाली हाट॥

दुई भ्रात महलन पग दीन्हें, मां के चरण स्पर्शन कीन्हें।
मां हिय हर्ष समावे नांही, निकसा दुग्ध स्तनन मांही॥
मनहु आजही इनको जाई, याविध हिय मँह हर्ष लहाई।
वीर प्रसवनी माय कहायें, नारायण बलभद सुत जायें॥

दोहा—राम लखण पुन पुन नमें, वे हिय लेंय लगाय।
वृहद समय से बीछुड़ीं, नेह तजो ना जाय॥
गोदन मांहि बिठाय लिय, मुख चूमें हिय हर्ष।
गात फुरीरी रोम उठ, पुन पुन सुत के पर्स॥

प्रमुदत लोचन अश्रु बहाये, मानो बांध फूट बह जाये।
सबही माता ढ़िग मँह आई, प्रेम प्रदर्शन सभी दिखाई॥
लघु बालक सब इनकों जानें, गह गह सबही निज सुत मानें।
हर्ष समुद्र उमड़ पुन आवै, पूर्ण चन्द्र द्युति आज सुहावै॥

दोहा—ढ़िग आईं वधुयें सभी, हिय मँह धरें उमंग।
परसें चरणन सासु के, हर्ष समांय न अंग॥
वेहू आशिष देंय पुन, फूलें फलें सुहाग।
सुरि सम वधुयें हैं सभी, भाग्य हमारे जाग॥

सिय को लखकर सब हीं सासू, लहि दुख चिन्त्यत बहांय आंसू।
धन्य सती ये, या जग मांही, विपुल कष्ट सहि, पै डिगि नांही॥
या प्रसाद ही सब सुख बाढ़ो, पुण्योदय ने पूरो पाढ़ो।
उत्सुक होय वृत्त सब पूंछो, काविध हरो कष्ट को सूंचो॥

दोहा—सबहिन वृत्त बताय सिय, श्रवत कलेजे कांप।
शील सुमेरी निश्चयहिं, सबहिन चित ने भांप॥
आय विशल्या जब ढ़िगं, हिय से लीन्ह लगाय।
याके पुण्य प्रभाव से, लच्मण जिय बच जाय॥

आनँद विभोर हुईं सब माता, सुख से फूले सबके गाता।
सबही हरषीं का कथ गावें, समझो फूली नांहि समावें॥
जिन गृह सहस्रों बधुयें आईं, सबही रूप सुरी सम पाईं।
सासुन सुख को कहा ठिकानों, त्रयभुवि निधि को मँच घमसानों॥

दोहा—भरत शत्रुहन मिल दुई, पुन पुन पांयन लाग।
विनत वदन थुति उच्चरें, भाग्य हमारे जाग॥
मनु चकोर को चन्द्र मिल, विपुल तृपित जल पाय।
मत्स्य नीर को पाय जिम, तृप्तै कह्यो न जाय॥

आप बिना सब सूनो भासै, कबहुँ न हिय मँह सुख परकासै।
जब सुध आवै हियो विदारै, ज्यों काहू को फांसि उचारै॥
का गति होवै समझो ताकी, त्यों हम मानी बात पिता की।
लगि फांसी सम निशिदिन मानी, आज खुली अब हमने जानी॥

दोहा—याविध अति थुति विस्तरी, तिष्ठी सकल समाज।
यथा योग्य आसन विषें, सुख शान्ती हिय साज॥
राम लखण ने सबहिं का, परिचय भ्रतहिं बताय।
ये रावण का भ्रात जनु, नाम विभीषण राय॥

ये कपिवंशी भूप अपारा, यह सुग्रीव सबहिं में सारा।
अरि याका सम रूप बनाया, दुखित होय हम शरणों आया॥
याकी सारी विपति निवारी, येहू सिय सुध लाय उचारी।
यो हनुमत गिरि जन्मत चूरो, सिय ढ़िग जा किय लंका घूरो॥

दोहा-यह विराधित जास ने, रण मँह कीन्ह सहाय।
जावल द्रुत ही विजय लह, खरदूषण पै जाय॥
भामण्डल हू को कही, सहस चौहिणी लेय।
आयो हम ढिग बन्धुपण, पूर्ण निभा सुख देय॥
भरत शत्रुहन अत्र हर्षाये, लह सुख फूले नांहि समाये।
सादर स्वागत सबका कीन्हा, रत्न भवन मँह ठहरा दीन्हा॥
असन पान का साज सम्हारा, गायन वादन नृत्य अपारा।
काहू भांति त्रुटी ना आई, सुख सामग्री सबहिं पठाई॥
दोहा-यों पाहुनगति सबहिं की, भरत शत्रुहन कीन।
मनु सब तिष्ठे अमरपुर, कल्पद्रुम सुख दीन॥
राम लखण हू चित्त मँह, निजको पहुना जान।
समझें भूपति भरत को, तात वचन धर "आन"॥
भरत आपको सेवक मानें, विनय तातवत इनकी ठानें।
बना परस्पर प्रेम प्रचारें, रंच न दुविधा हिय मँह धारें॥
सब मिल करते हर विध क्रीड़ा, कहन न समरथ इनकी लीला।
मनो इन्द्र सामानिक आये, घाट न बाढ़ पदहिं इन पाये॥
दोहा-पुण्योदय से सब विभव, सुख ही सुख का पाय।
पाप उदय से जीव यह, स्वयम आप दुखियाय॥
यातें भजो स्वरूप नित, सुःख शास्वता होय।
"नायक" या सम सुख नहीं, मेंट सके ना कोय॥

॥ इति पंचविंशतिः परिच्छेदः तृतीय कांड समाप्तः॥

* जिनवाणी की स्तुति *

ॐ जय अम्बे वाणी, ॐ जय अम्बे वाणी।
तुमको निशिदिन ध्यावत, सुर नर मुनि ज्ञानी ॥ ॐ जय० ॥

श्रीजिन गिरतें निकसी, गुरु गौतम मानी। येजी गुरु०
जीवन भ्रम तम नाशन, दीपक दरशानी ॥ ॐ जय० ॥
तुमको निशिदिन ध्यावत, सुर नर मुनि ज्ञानी ॥ ॐ जय० ॥

कुमति कुचाचल चूरन, वज्र सो सरधानी। येजी वज्र०
नय नियोग निक्षेपण, देखत दरपानी ॥ ॐ जय० ॥
तुमको निशिदिन ध्यावत, सुर नर मुनि ज्ञानी ॥ ॐ जय० ॥

पातिक पंक पखालन, पुण्य परम पानी। येजी पुण्य०
मोह महार्णव बूड़त, तारण नवकानी ॥ ॐ जय० ॥
तुमको निशिदिन ध्यावत, सुर नर मुनि ज्ञानी ॥ ॐ जय० ॥

लोकालोक विलोकन, दिव्य नेत्र थानी। येजी दिव्य०
निज पर भेद लखावन, सूरज किरणानी ॥ ॐ जय० ॥
तुमको निशिदिन ध्यावत, सुर नर मुनि ज्ञानी ॥ ॐ जय० ॥

श्रावक मुनिजन गुण की, जननी तुम खानी। येजी जननी०
सेवक लख सुखदायक, पायन परनामी ॥ ॐ जय० ॥
तुमको निशिदिन ध्यावत, सुर नर मुनि ज्ञानी ॥ ॐ जय० ॥

॥ कल्याणमस्तु ॥ ॥ इति ॥ ॥ शुभम् भूयात् ॥